नई शिक्षा नीति के अनुसार

2024

VVP

विश्वविद्यालय प्रकाशन (रजि.)
ग्वालियर
द्वारा प्रकाशित

20 प्रश्न

(परीक्षोपयोगी महत्वपूर्ण मॉडल प्रश्नोत्तर)

समाजशास्त्र

भारतीय जनजातियों का समाजशास्त्र

(माइनर)

VVP

बी. ए. तृतीय वर्ष

नया पाठ्यक्रम

भारतीय जनजातियों का समाजशास्त्र

इकाई–1.

(1) जनजातियों का परिचयात्मक विवरण :

1. जनजाति एवं अनुसूचित जनजाति : अर्थ, परिभाषा एवं विशेषताएँ।
2. जनजाति एवं अनुसूचित जनजाति में अन्तर।
3. जनजातीय जनांकिकी एवं वर्गीकरण– ● भौगोलिक ● भाषायी ● आर्थिक ● प्रजातीय।

इकाई–2.

(1) जनजातीय समाज : सामाजिक, सांस्कृतिक परिदृश्य :

1. जनजातीय परिवार
2. जनजातीय विवाह
3. जनजातीय नातेदारी व्यवस्था
4. जनजातीय महिलाओं की परिवर्तनशील स्थिति।

इकाई–3.

(1) जनजातीय आर्थिक एवं राजनीतिक संगठन :

1. जनजातीय अर्थव्यवस्था की विशेषताएँ
2. जनजातीय अर्थव्यवस्था के स्वरूप

● शिकार एवं खाद्य संग्रहण ● पशुपालन ● कृषि ● वनोपज एवं हाट बाजार

3. जनजातीय अर्थव्यवस्था में परिवर्तन एवं उत्तरदायी कारक

(2) परम्परागत जनजातीय राजनीतिक संगठन :

1. 73वां संविधान संशोधन अधिनियम एवं वर्तमान जनजातीय राजनीतिक संगठन।

इकाई–4.

जनजातीय समस्याएँ : कारण एवं समाधान :

1. अशिक्षा एवं बेरोजगारी
2. निर्धनता एवं ऋणग्रस्तता
3. कुपोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएँ
4. विस्थापन एवं प्रवास
5. प्रमुख जनजातीय आन्दोलन
6. जनजातीय विकास हेतु संवैधानिक प्रावधान
7. शासन द्वारा संचालित कल्याण कार्यक्रम एवं उनका मूल्यांकन।

इकाई–5.

मध्यप्रदेश की प्रमुख जनजातियाँ : आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक संगठन :

1. गोंड 2. भील 3. भारिया 4. सहरिया 5. कोरकू 6. बैगा।

अनुशंसित मूल्यांकन विधियाँ

अनुशंसित सतत् मूल्यांकन विधियाँ
(अधिकतम अंक : 100)
सतत् व्यापक मूल्यांकन (CCE)
अंक : 30 विश्वविद्यालयीन परीक्षा (UE)
अंक : 70

आंतरिक मूल्यांकनः सतत् व्यापक मूल्यांकन (CCE)	क्लास टेस्ट असाइनमेंट/प्रस्तुतिकरण (प्रजेंटेशन)	कुल अंकः 30
आंकलनः विश्वविद्यालयीन परीक्षा समयः 03.00 घंटे	अनुभाग (अ): अति लघुउत्तरीय प्रश्न अनुभाग (ब): चार लघु उत्तरीय प्रश्न अनुभाग (स): दो दीर्घ उत्तरीय प्रश्न	कुल अंक 70

❑ **कृपया ध्यान दें :** नई शिक्षा नीति स्नातक तृतीय वर्ष में लागू की गई है। परीक्षा के नये पैटर्न में वस्तुनिष्ठ प्रश्न, लघुउत्तरीय प्रश्न तथा दीर्घउत्तरीय प्रश्न पूछे जायेंगे। कुछ लघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर इस पुस्तक में दिये गये हैं। दीर्घउत्तरीय प्रश्नोत्तर में ही लघुउत्तरीय प्रश्नों के उत्तर निहित हैं। इस हेतु आप लघुउत्तरीय प्रश्न में जितना पूछा जावे, दीर्घउत्तरीय प्रश्न के उत्तर का उतना ही भाग लिखें।

कृपया ध्यान दें

VVP **विश्वविद्यालय प्रकाशन, ग्वालियर** द्वारा प्रकाशित **बी.ए., बी.कॉम. तथा बी.एस-सी.** की '**20 प्रश्न**' पुस्तकें खरीदते समय **प्रत्येक पेज पर 2024 छपा देखकर सही तथा असली पुस्तक** ही खरीदें। बी.कॉम. तथा बी.एस-सी. अंग्रेजी माध्यम में भी प्रकाशित हैं।

समाजशास्त्र

भारतीय जनजातियों का समाजशास्त्र

(माइनर)

इकाई-1

दीर्घउत्तरीय प्रश्नोत्तर-

प्रश्न–1. जनजातियों का सामान्य परिचय दीजिए।

उत्तर– जनजातियों का भौगोलिक विस्तार व जनगणना– अनेकता में एकता ही भारतीय संस्कृति की विशेषता है और उन अनेकता के मूल में निश्चित रूप से भारत के विभिन्न प्रदेशों में स्थित जनजातियाँ हैं। जनजातियों की वैविध्यपूर्ण संस्कृति ने जिस भारतीय संस्कृति को उभरने में योगदान किया, वह भी विविधता को धारण करने वाली हुई है।

जनजाति से सामान्य आशय– वननिवासी, आदिमजाति, गिरिजन आदि से है।

भारत की जनगणना–1991 के अनुसार– 'ये केवल अपने सीमित साधनों से ही जीना सीख सके हैं और आज भी विज्ञान की इस चकाचौंध व सभ्यता की होड़ से अपरिचित ही हैं। ऐसे ही अपरिचित लोगों का उल्लेख भारतीय संविधान में अनुसूचित जनजाति के अन्तर्गत किया गया है।'

(1) **राल्फ लिण्टन के अनुसार–** 'सरलतम रूप में जनजाति एक ऐसा मानव समूह है, जो एक विशेष भू–भाग पर रहता है तथा जिसमें सांस्कृतिक समानता, निरन्तर सम्पर्क तथा कुछ विशेष हितों के कारण सामुदायिक एकता की भावना होती है एवं जिसका जीवन रीति-रिवाज और व्यवहार के तौर–तरीके आदिम अर्थात् आदिकालीन विशेषताओं से युक्त रहते हैं।'

(2) **श्यामचरण दुबे के अनुसार–** 'वास्तव में जानजाति व्यक्तियों का वह समूह है जो एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में आवास या विचरण करता है और जो किसी आदि पूर्वज को ही अपना उद्‌गम मानता हो जिसकी एक सामान्य संस्कृति होती है और जो आज भी आधुनिक सभ्यता के प्रभावों से परे हैं।'

जनजातियों की विशेषताएँ– ये निम्नवत् हैं–

(1) ये एक निश्चित भू–भाग में निवास करती हैं जिसके कारण जनजातियों में सामान्य जीवन की विशेषताएँ विकसित हो जाती हैं। निश्चित भू–भाग जनजातियों की विशिष्ट पहचान है जैसे– बैगा जनजाति का बैगाचक्क, भारिया जनजाति का पातालकोट, माडिया–मुरिया जनजाति का अबुझमाड़ क्षेत्र है।

(2) ये प्रायः अपनी प्रथा, परम्परा, विश्वास आदि नातेदारी तक ही सीमित रखते हैं।

(3) एक ही जनजाति के सभी सदस्यों में एक सामान्य संस्कृति अर्थात् रीति–रिवाज, नृत्य, धर्म, रहन–सहन तथा खान–पान होता है।

(4) प्रत्येक जनजाति की अपनी एक भाषा होती है जिसके माध्यम से ये अपने विचारों को अभिव्यक्त करते हैं। ये जनजातियाँ प्रायः स्थानीय बोलियों का प्रयोग करती हैं।

(5) एक जनजाति अन्तर्विवाही समूह है, प्रत्येक जनजाति इसका कड़ाई से पालन करती हैं।

(6) प्रत्येक जनजाति अपने आप में आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर रहती हैं एवं आर्थिक आवश्यकताओं को ये स्वयं ही पूरा कर लेते हैं।

(7) प्रत्येक जनजाति का एक मुखिया होता है जो अपने समाज की परम्पराओं का पालन कराने, नियंत्रण रखने एवं उल्लंघन करने पर दंड की व्यवस्था करता है।

प्रश्न–2. मध्यप्रदेश की जनजातियों का सामान्य परिचय दीजिए।

उत्तर– मध्यप्रदेश की जनजातियों का सामान्य परिचय–

(1) मध्यप्रदेश में विविध, समृद्ध एवं गौरवशाली जनजातीय विरासत है। मध्यप्रदेश में भारत की सर्वाधिक जनजातीय जनसंख्या निवास करती है जो (2011 की जनगणना के अनुसार) भारत में पाई जाने वाली कुल जनजातीय जनसंख्या का 14.64% है।

(2) भारत में 10.45 करोड़ जनजातीय जनसंख्या है वहीं मध्यप्रदेश में 1.53 करोड़ जनजातीय जनसंख्या है।

(3) भारत की कुल जनसंख्या में जनजातीय जनसंख्या 8.63% प्रतिशत है।

(4) मध्यप्रदेश की कुल जनसंख्या में जनजातीय जनसंख्या का प्रतिशत 21.09% है।

(5) प्रदेश के 15 जिलों में विशेष पिछड़ी जनजाति बैगा, भारिया, सहरिया के लिए 11 अभिकरण संचालित हैं।

(6) प्रदेश में कुल 59 जनजाति विकासखंड हैं।

(7) मध्यप्रदेश की जनजातियाँ प्रोटो–ऑस्ट्रेलायड परिवार का प्रतिनिधित्व करती हैं।

(8) 2011 की जनगणना के अनुसार मध्यप्रदेश में कुल 43 जनजातियाँ अधिसूचित हैं। (2003 से पूर्व मध्यप्रदेश में 46 जनजातियाँ थीं। किन्तु 8 जनवरी, 2003 को 3 जनजातियों को सूची से विलोपित कर दिया गया)

मध्यप्रदेश की 2011 की जनगणना में जनजातीय जनांकिकी–

(1) म.प्र. में जनजातियों की कुल संख्या 1,53,16,784 है जो मध्यप्रदेश की जनसंख्या का 21.09% है।

(2) मध्यप्रदेश में जनजातियों का लिंगानुपात 984 है जिसमें सर्वाधिक लिंगानुपात बालाघाट (1050) तथा न्यूनतम लिंगानुपात भिंड में है।

(3) मध्यप्रदेश की जनजातियों का नगरीय लिंगानुपात 956 जबकि ग्रामीण लिंगानुपात 986 है।

(4) मध्यप्रदेश की जनजातियों में साक्षरता की दर 50.55% है।

(5) अनुसूचित जनजातियों का सबसे साक्षर जिला बालाघाट तथा सर्वाधिक साक्षर जनजाति परधान है।

(6) मध्यप्रदेश में आदिवासी जनसंख्या घनत्व 50 है जो राष्ट्रीय आदिवासी जनसंख्या घनत्व से 18 अधिक है।

(7) अनुसूचित जनजातियों की दशकीय वृद्धि दर 25.2% है जो कि राष्ट्रीय औसत से अधिक है।

(8) मध्यप्रदेश में सबसे बड़ी जनजातियाँ क्रमशः भील, गोंड तथा कोल हैं।

प्रश्न–3. जनजाति का अर्थ बताते हुये इसकी प्रमुख विशेषताओं की विवेचना कीजिये।

अथवा

जनजाति से आप क्या समझते हैं? जनजाति की विशेषताओं को समझाइये।

अथवा

जनजाति की व्याख्या कीजिये। इसकी विशेषताओं को लिखिये।

अथवा

जनजाति की परिभाषा दीजिये एवं इसके प्रमुख लक्षण बताइये।

अथवा

भारत में जनजातियों पर एक लेख (निबन्ध) लिखिये।

अथवा

जनजाति को परिभाषित कीजिये। जनजाति की विशेषताओं की व्याख्या कीजिये।

उत्तर– भारतीय जनसंख्या विविधता–युक्त है। धर्म, जाति, प्रजाति आदि से सम्बन्धित अनेक प्रकार के लोग यहाँ निवास करते हैं। जनजाति के लोग भी इसी विविधता का प्रतिनिधित्व करते हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार सम्पूर्ण जनसंख्या का लगभग 10 प्रतिशत हिस्सा जनजातियों का है।

भारत के विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में ऐसे अनेक मानव–समूह रहते हैं जो आज भी आदिम स्तर पर जीवन–यापन करते हैं। ये प्रायः सभ्य समाज से दूर जंगलों में या पहाड़ी क्षेत्रों में निवास करते हैं। ये लोग सामाजिक, शैक्षणिक, राजनीतिक, आर्थिक आदि सभी दृष्टिकोणों से पिछड़े हुये हैं। इन्हें अनेक नामों से सम्बोधित किया जाता है। जैसे– वन्य जाति, आदिवासी, गिरीजन, जनजाति आदि। भारतीय संविधान में ऐसे लोगों को 'अनुसूचित जनजाति' कहा गया है।

जनजाति का अर्थ एवं परिभाषायें– जनजाति को आदिम या आदिवासी इसलिये कहा जाता है कि, ये भारत के प्राचीनत्तम निवासी हैं। द्रविड़ों के आगमन से पूर्व ये यहाँ निवास करते थे। वेरियर आल्विन भी इन्हें 'आदिम जाति' के नाम से संबोधित करते हैं। परन्तु डॉ. घुरिये ने इन्हें 'पिछड़े हिन्दू' कहा है। उन्होंने प्रमाण देकर कहा है कि, अधिकांश वन्य जातियाँ हिन्दू धर्म को मानती हैं।

1. डॉ. रिवर्स के अनुसार– 'जनजाति एक ऐसे सरल प्रकार का सामाजिक समूह है जिसके सदस्य एक सामान्य भाषा का प्रयोग करते हैं तथा युद्ध आदि सामान्य उद्देश्यों के लिये सम्मिलित रूप से कार्य करते हैं।'

2. डॉ. डी.एन. मजूमदार के अनुसार– 'एक जनजाति परिवारों या परिवारों के समूह का एक संकलन होता है जिनका एक सामान्य नाम होता है, जिनके सदस्य एक निश्चित भू–भाग पर रहते हैं, सामान्य भाषा बोलते हैं और विवाह, व्यवसाय, उद्योग के विषय में कुछ निषेधों का पालन करते हैं और एक निश्चित एवं उपयोगी परस्पर आदान–प्रदान की व्यवस्था का विकास करते हैं।'

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि जनजाति का एक सामान्य क्षेत्र होता है जहाँ वे निवास करते हैं। उनकी सामान्य संस्कृति होती है। वे एक भाषा या बोली का प्रयोग करते हैं। उनका एक निश्चित राजनीतिक संगठन तथा व्यवसाय होता है। एक जनजाति अनिवार्य रूप से अन्तर्विवाही होती है।

जनजाति की विशेषतायें
1. परिवारों का समूह
2. विशिष्ट नाम
3. निश्चित भू–भाग
4. एकता की भावना
5. सामान्य भाषा
6. अन्तर्विवाही समूह
7. राजनीतिक संगठन
8. संस्कृति
9. सामान्य पूर्वज
10. निषेधाज्ञायें

जनजाति की विशेषतायें– उपरोक्त वर्णित परिभाषाओं के आधार पर जनजाति की प्रमुख विशेषतायें इस प्रकार बता सकते हैं–

1. **परिवारों का समूह–** एक जनजाति का निर्माण कई परिवारों से मिलकर होता है। यह परिवार का ही विस्तृत स्वरूप होता है।
2. **विशिष्ट नाम–** प्रत्येक जनजाति का एक विशिष्ट नाम होता है। इस नाम से वह जानी जाती है।
3. **निश्चित भू–भाग–** प्रत्येक जनजाति का एक निश्चित भू–भाग होता है जिसमें वह निवास करती है। परन्तु वर्तमान में यातायात के साधन सुलभ होने तथा उनके द्वारा अन्य व्यवसाय करने के कारण अब यह अनिवार्य शर्त नहीं है।
4. **एकता की भावना–** एक निश्चित भू–भाग में निवास करने के कारण जनजाति के सदस्यों में एकता की भावना का विकास होता है। इस कारण वे परस्पर सहयोग एवं सहायता प्रदान करते हैं और संकटकालीन परिस्थितियों का मिल–जुलकर सामना करते हैं।
5. **सामान्य भाषा–** प्रत्येक जनजाति की एक सामान्य भाषा या बोली होती है। इनकी भाषा प्रायः अलिखित होती है और इसका दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरण मौखिक रूप से होता है। परन्तु अब बाह्य सम्पर्क के कारण अधिकांश वन्यजातियाँ बहुभाषी होती हैं।
6. **अन्तर्विवाही समूह–** सभी जनजातियाँ अनिवार्य रूप से अन्तर्विवाही होती हैं।
7. **राजनीतिक संगठन–** प्रत्येक जनजाति का राजनीतिक संगठन होता है। शासन की बागडोर परम्परागत होती है। राजा या मुखिया की सहायता के लिये वृद्ध व्यक्तियों की समिति भी होती है। इस प्रकार प्रत्येक जनजाति एक राजनीतिक इकाई होती है।
8. **संस्कृति–** प्रत्येक जनजाति की एक विशिष्ट संस्कृति होती है। रीति–रिवाज, प्रथायें, धार्मिक विश्वास, जादुई क्रियायें, सामाजिक संगठन आदि प्रत्येक जनजाति में भिन्न–भिन्न होते हैं।

9. **सामान्य पूर्वज–** प्रत्येक जनजाति अपनी उत्पत्ति किसी जीवित अथवा अजीवित वस्तु अथवा प्राणी से मानती है। यह वास्तविक अथवा काल्पनिक भी हो सकती है। इसे 'टोटम' के नाम से जाना जाता है। टोटम से सम्बन्धित अनेक प्रकार के निषेधों का वे कठोरता से पालन करते हैं।

10. **निषेधाज्ञायें–** प्रत्येक जनजाति के सदस्यों में पारस्परिक आदान–प्रदान के कुछ सामान्य नियम और निषेध होते हैं। जनजाति के प्रत्येक सदस्य को इनका पालन करना पड़ता है।

प्रश्न–4. जनजाति एवं अनुसूचित जनजाति में अन्तर बताइए।

उत्तर– जनजाति और अनुसूचित जनजाति में मूलतः कोई विशेष अन्तर नहीं है। जनजातियों को ही स्वतंत्र भारत में सूचीबद्ध कर अनुसूचित जनजाति के नाम से सम्बोधित किया जाने लगा है। जनजातियों को सूचीबद्ध कर उनके सर्वांगीण विकास करने से अब इनमें कुछ अन्तर दिखाई देने लगा है।

जनजाति एवं अनुसूचित जनजाति में अन्तर

क्र.	जनजाति	अनुसूचित जनजाति
(1)	ये संवैधानिक सूची में शामिल नहीं हैं।	ये संवैधानिक सूची में शामिल हैं।
(2)	ये संवैधानिक लाभों से वंचित हैं।	ये संवैधानिक लाभों से वंचित नहीं हैं।
(3)	इनका शिक्षा का स्तर एवं प्रतिशत काफी कम है।	इनका शैक्षणिक स्तर और प्रतिशत ऊँचा उठ रहा है।
(4)	ये प्रकृति के सान्निध्य में जीवनयापन कर रहे हैं।	इनका प्रकृति से सम्पर्क कम होता जा रहा है।
(5)	ये आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त कमजोर हैं।	इनका आर्थिक स्तर उन्नत हो रहा है।
(6)	ये परम्परागत जीवनयापन कर रहे हैं।	इनके जीवन में आधुनिकता प्रविष्ट हो गई है।
(7)	इनमें सामाजिक चेतना का अभाव है।	इनमें सामाजिक चेतना व्यापक रूप से है।
(8)	इनके नातेदारी सम्बन्ध होते हैं।	इनके नातेदारी सम्बन्ध कम हुए हैं।
(9)	ये क्षेत्र विशेष में ही संगठित हैं।	ये सभी जगहों में फैलते जा रहे हैं।
(10)	ये राजनैतिक लाभ नहीं उठा पाते हैं।	ये राजनैतिक लाभ उठा रहे हैं।

प्रश्न–5. भारत में जनजातियों की स्थिति का संक्षेप में वर्णन कीजिये।

अथवा

भारतीय जनजातियों के भौगोलिक वर्गीकरण का उल्लेख कीजिये।

अथवा

भारत के जनजाति मण्डल और मुख्य जनजाति समूह का वितरण कीजिये।

अथवा

भारत की जनजातियों के भौगोलिक एवं भाषायी वितरण की विवेचना कीजिये।

अथवा

भारत में जनजातियों के भौगोलिक वितरण को समझाइये।

अथवा

भारतीय जनजातियों के भौगोलिक वितरण का वर्णन कीजिये।

उत्तर– भारत में जनजातीय समाज के सदस्यों की संख्या 6.78 करोड़ है। यह देश की कुल जनसंख्या का लगभग 8.08 प्रतिशत है। 1956 के अध्यादेश के अनुसार भारत में अनुसूचित आदिवासी जातियों की संख्या 592 है। इनमें गोंड, संथाल तथा भील जातियों की संख्या कुल जनजातीय समाज का एक तिहाई है। भौगोलिक आधार पर जनजातियों का वर्णन निम्नानुसार है–

(1) **उत्तर पूर्व–** उत्तर पूर्व वर्ग के आदिवासी भारत में आसाम, त्रिपुरा और मणिपुर के प्रदेशों में पाये जाते हैं। ये वर्मा और तिब्बत के सीमावर्ती इलाकों, दुर्गम पर्वतों तथा घने वनों में रहते हैं। इनकी जनसंख्या लगभग 21 लाख है। प्रजाति की दृष्टि से ये लोग मंगोल जाति के हैं तथा बोली आग्नेय परिवार की मोनखोर भाषा से, मिलती–जुलती है। परन्तु अधिकतर ये लोग तिब्बत के वर्मी वंश की बोलियों का प्रयोग करते हैं। इस वर्ग की प्रमुख जनजातियों में उल्लेखनीय हैं– गांगल नियंग, पासी, पदम और तंगी जनजातियाँ, आण्डा, डफला, मिरि, सुरंग, आपातनी जनजातियाँ, दवोंग तथा मिछमी जनजातियाँ। इन जनजातिय क्षेत्रों के अतिरिक्त आसाम राज्य में बड़ी कचारी, देअरी, होजाई, कचारी, मेय, मिरि और रामा जनजातियाँ हैं। आसाम के स्वायत्त–शासित जिलों में तथा जनजातिय क्षेत्रों में अबोर, अम्बा, शेरडुकपेन, डिमासा, खासी, कूकी, लखेर, गारो, हाजंग, लूशाई, मिकिर आदि सितेंग जातियाँ तथा मणिपुर और त्रिपुरा में कुकी, कुशाई तथा नागा जनजातियाँ हैं।

(2) **मध्य भारत–** केन्द्रीय भाग के अन्तर्गत बिहार, बंगाल, दक्षिणी भारत, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, उत्तरी मुम्बई, दक्षिणी राजस्थान और उड़ीसा सम्मिलित हैं। इसमें केवल संथालों की संख्या ही 25 लाख से ज्यादा है। इस क्षेत्र की सबसे महत्वपूर्ण जातियाँ हैं– कन्हा या खोंड, सोरा या सबर, संथाल, गोंड, हो, भुंया युइया, ओरांव, बंजारा, बिंझल, खरिया और जुआंग, बिहार की जनसंख्या का दसवाँ 7.66% आदिवासी है जिनकी संख्या कुल 62.2 लाख है। बिहार के पश्चिम में बिन्ध्य पर्वतों तक में कोल और भील बसे हुये हैं। भील तो उत्तर पश्चिम में अरावली पर्वतों तक चले गये हैं। भूतपूर्व हैदराबाद तथा गोंडवाना तक बस्तर और केंकर राज्य में गोंड रहते हैं। कोरकू, अंगोरिया, परधान, बैगा जातियाँ सतपुड़ा पहाड़ के दोनों ओर तथा मेबल पहाड़ियों में बसी हुई हैं। भूतपूर्व बस्तर राज्य में मुड़िया और माड़िया जातियाँ पाई जाती हैं। ये गोंड है। मध्य भारत के वर्ग के (केन्द्रीय वर्ग में) क्षेत्र के निवासी आग्नेय परिवार की भाषायें बोलते हैं। प्रजाति की दृष्टि से ये प्रायः प्रोटो ऑस्ट्रेलायड हैं। इन पर पड़ौसी हिन्दुओं का बड़ा प्रभाव पड़ा है। ये शिकार और अन्न संग्रह करने की अवस्था से निकलकर अब साधारणतया 'झूम' खेती करते हैं। ये लकड़ी पर नक्काशी और टोकरी बनाने का काम भी करते हैं। इनमें कुछ उन्नत जातियों में ग्रामीण पंचायत और लोकतांत्रिक आधार पर बनी हुई आखेट परिषद् होती है जो गाँव के आपसी झगड़े निपटाती है।

(3) **दक्षिण भारत–** आदिवासी का दक्षिणी क्षेत्र कृष्णा नदी के नीचे तथा 16 उत्तरी अक्षांश के दक्षिण में स्थित है। सबसे अधिक ये पश्चिमी घाट के पहाड़ों में वाइनाड से कन्याकुमारी तक पाये जाते हैं। आन्ध्र राज्य की चेंचू जनजाति कृष्णा नदी के पार नालैमलै की पहाड़ियों में रहती है। केरल में भारत की सबसे पुरानी जनजातियाँ मिलती हैं जिनमें सबसे अधिक संख्या काडर जनजाति की है। केरल के ये आदिवासी केल शिकार और अन्न–संग्रह

करके अपना पेट भरते हैं। कुछ समय पहले तक इनका एकमात्र वस्त्र पत्तों या घास की बनी कौपीन मात्र था। दक्षिण क्षेत्र की कुछ जनजातियों में कहीं–कहीं मातृ–मूलक व्यवस्था भी पाई जाती है। डॉ. गुहा के अनुसार,– ''कादर, इरूला और पुलपन जनजातियों में नीग्रिटो प्रजाति की कुछ विशेषतायें मिलती हैं।''

इस प्रकार जनजातियों के विभिन्न वर्गों के विवरण से यह सिद्ध होता है कि, ''भारत के एक मौगोलिक सर्वेक्षण से यहाँ जनता में निवास पद्धति सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक विशेषताओं के स्पष्ट भेद वाले विशिष्ट सांस्कृतिक और सामाजिक क्षेत्र प्रकट होते हैं।''

प्रश्न–6. भाषायी तथा सांस्कृतिक आधार पर जनजातियों का वर्गीकरण कीजिये।

अथवा

भारत में जनजातियों के भाषायी वितरण की विवेचना कीजिये।

उत्तर– मानवशास्त्रियों ने भाषा तथा संस्कृति के आधार पर भी भारतीय जनजातियों का वर्गीकरण प्रस्तुत किया है। भाषा के आधार पर जनजातियों का वर्गीकरण निम्नानुसार है–

(1) **द्रविड़ भाषी परिवार–** द्रविड़ भाषाओं में दक्षिण भारत में बोली जाने वाली तेलुगू, कन्नड़, तमिल एवं मलयालम भाषायें आती हैं। टोडा, मलेर, पोलिया, कोया, पनियान, चेंचू, इरूला, कदार आदि दक्षिण भारत की जनजातियों के साथ–साथ मध्य भारत की गोंड, बिहार तथा उड़ीसा की कुन्ध, कुई तथा उरांव जनजातियाँ द्रविड़ भाषायें बोलती हैं।

(2) **ऑस्ट्रिक भाषी परिवार–** इस भाषा परिवार में संथाली, मुण्डारी, खरिया, भूमिज, गारो आदि भाषाओं के साथ–साथ आसाम की खासी तथा निकोबार द्वीप की निकोबारी बोलियां सम्मिलित हैं। इसके अलावा मध्य प्रदेश की कोरकू, साथरा, गडवा आदि भाषायें भी इसी परिवार की हैं। इस प्रकार मध्य क्षेत्र की अधिकांश जनजातियां ऑस्टिक भाषा परिवार से सम्बन्धित हैं।

(3) **चीनी–तिब्बती भाषी परिवार–** दार्जिलिंग, त्रिपुरा, मणिपुर, पूर्वी काश्मीर, पूर्वी पंजाब, हिमाचल प्रदेश, भूटान, आसाम, सिक्किम बंगाल क्षेत्र की जनजातियां इस भाषायी परिवार का प्रतिनिधित्व करती हैं। संक्षेप में, उत्तर–पूर्वी क्षेत्र की जनजातियां इस भाषायी परिवार के अंतर्गत आती हैं।

सांस्कृतिक आधार पर जनजातियों का वर्गीकरण– प्रत्येक जनजाति की अपनी विशिष्ट संस्कृति होती है। अतः इस आधार पर भी मानवशास्त्रियों ने जनजातियों को वर्गीकृत किया है।

वेरियर एल्विन– वेरियर एल्विन ने जनजातियों का सांस्कृतिक वर्गीकरण निम्नानुसार प्रस्तुत किया है–

(1) **प्रथम श्रेणी–** इसके अंतर्गत वे जनजातियां आती हैं जो अत्यधिक 'आदिम अवस्था' में हैं। ये दुर्गम तथा घने जंगलों में निवास करते हैं। ये अत्यधिक सरल स्वभाव के हैं। ये 'झूम खेती' करते हैं तथा इनका सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन अत्यधिक सरल है। बस्तर के माड़िया, उड़ीसा के जुआंग, गड़वा, वोदों आदि इस श्रेणी की जनजातियां हैं।

(2) **द्वितीय श्रेणी–** यद्यपि ये जनजातियां भी प्रथम श्रेणी की जनजातियों के समान एकाकी रहने वाली तथा परम्परावादी हैं। फिर भी वर्तमान में इनमें परिवर्तन दिखाई देते हैं।

इनमें संपत्ति के आधार पर भेदभाव पाया जाता है। ये जनजातियां ''झूम खेती'' का त्याग कर रही हैं। व्यक्तिवाद इनमें पनप रहा है।

(3) **तृतीय श्रेणी–** इस श्रेणी के अंतर्गत एल्विन ने उन जनजातियों को रखा है, जो आधुनिक सभ्यता एवं संस्कृति के सम्पर्क में आने के पश्चात् अपनी मूल संस्कृति खो चुकी हैं। इन जनजातियों में सांस्कृतिक समस्यायें व्याप्त हैं।

(4) **चतुर्थ श्रेणी–** इसके अंतर्गत भील एवं नागा जनजातियां आती हैं जो प्राचीन कुलीन वर्ग से सम्बन्धित हैं। ये जनजातियां अपना सम्बन्ध उच्च जातियों से जोड़ती हैं, जैसे भील लोग स्वयं को क्षत्रिय मानते हैं। बाह्य संस्कृति के सम्पर्क में आने के बावजूद इन जनजातियों ने अपनी मौलिक संस्कृति को बनाये रखा है।

डॉ. डी.एन. मजूमदार एवं टी.एन. मदान एल्विन के वर्गीकरण से सहमत नहीं हैं, क्योंकि यह वर्गीकरण स्थिर नहीं है। साथ ही सभ्य समाज के संपर्क से जनजातियों को केवल हानि हुई है ऐसा नहीं है, उन्हें सभ्य समाज की संस्कृति से लाभ भी हुआ है। इन्होंने सांस्कृतिक आधार पर जनजातियों को निम्नलिखित भागों में वर्गीकृत किया है–

(1) वे जनजातियां जो सभ्य समाज के संपर्क से दूर रही हैं।

(2) वे जनजातियां जो सभ्य समाज के सम्पर्क से प्रभावित हुई हैं और इसके परिणामस्वरूप वे अनेक कठिनाईयों का सामना कर रही हैं।

(3) वे जनजातियां जो सभ्य समाज के सम्पर्क में आने के बावजूद किसी प्रकार की कठिनाईयों अथवा समस्याओं का सामना नहीं कर रही हैं।

प्रश्न–7. आर्थिक आधार पर भारतीय जनजातियों का वर्गीकरण (या विभाजन) कीजिये।

अथवा

जनजातिय अर्थव्यवस्था की प्रमुख विशेषताओं की विवेचना कीजिये। कुला एवं पोटलेच की प्रथाओं का वर्णन कीजिये।

अथवा

आर्थिक आधार पर जनजातियों का वर्गीकरण कीजिये।

उत्तर– प्रत्येक समाज तथा प्रत्येक व्यक्ति अपनी आर्थिक आवश्यकता की पूर्ति करने के लिये सदैव प्रयत्नशील रहता है। आर्थिक संगठन के माध्यम से व्यक्ति अपनी अनेक मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। मानव के जीविकोपार्जन व सम्पत्ति प्राप्ति से सम्बन्धित जितनी भी क्रियायें हैं वे आर्थिक संगठन के अन्तर्गत आती हैं।

अर्थव्यवस्था की परिभाषायें

1. पिडिंगटन के अनुसार– ''आर्थिक–प्रणाली लोगों की भौतिक आवश्यकताओं की सन्तुष्टि के लिये, उत्पादन की व्यवस्था, वितरण पर नियन्त्रण तथा समुदाय में स्वामित्व के अधिकारों तथा दावों को निर्धारित करती है।''

2. वील्स तथा हाइजर के अनुसार– ''आर्थिक संगठन व्यवहारों के प्रतिमान है तथा समाज का वह परिणामस्वरूप संगठन है जो कि सामान तथा सेवाओं के उत्पादन, वितरण तथा उपभोग से सम्बन्धित है।''

आदिम अर्थव्यवस्था की प्रकृति या विशेषतायें– आदिम जातियों ने अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिये अपने ढंग से अर्थव्यवस्था का निर्माण किया। निम्नलिखित विशेषताओं से आदिकालीन अर्थव्यवस्था की प्रकृति स्पष्ट हो जावेगी–

1. आदिम जातियों के पास मुद्रा का अभाव था। वह विनिमय या अदला–बदली के आधार पर अपनी समस्त आर्थिक क्रियाओं का संचालन करते थे।
2. आदिकालीन आर्थिक संगठन सामाजिक परम्पराओं, भौतिक परिस्थितियों पर ही निर्भर रहा है।
3. आदिवासियों की आर्थिक गतिविधियों की प्रमुख विशेषता है परस्पर सहयोग तथा सामूहिक प्रयास।
4. आदिम अर्थव्यवस्था में बाजार जैसी संस्था नहीं पायी जाती है। प्रतियोगिता का भी नितान्त अभाव पाया जाता है।
5. आदिकालीन समाज में सभी प्रकार की आर्थिक क्रियाओं का धर्म और जादू–टोने से घनिष्ट सम्बन्ध पाया जाता है।
6. आदिकालीन समाज में उत्पादन और वितरण पर अधिक ध्यान दिया जाता है।
7. आदिकालीन अर्थव्यवस्था भोजन, वस्त्र एवं सुरक्षा से सम्बन्धित हथियारों से ही सम्बन्धित है।
8. आदिम अर्थव्यवस्था में अधिकतर स्थिरता, समता तथा सरलता पाई जाती है।
9. आदिवासियों में विशिष्टीकरण का पूर्ण अभाव पाया जाता है। श्रम–विभाजन लिंग पर आधारित है।
10. आदिवासियों में व्यक्तिगत सम्पत्ति का पूर्ण अभाव था।
11. आदिवासियों में विनिमय लाभ के लिये नहीं किया जाता है, अपितु अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये किया जाता है।
12. आदिमकालीन अर्थ व्यवस्था में संग्रह की प्रवृत्ति नहीं पायी जाती है।
13. आदिवासी क्षेत्रों में यातायात के साधनों का अभाव पाया जाता है। अतः इनकी आर्थिक क्रियायें एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र तक ही सीमित रहती हैं।
14. आदिम अर्थव्यवस्था में उपहार का विशेष महत्व होता है। यह विनिमय का एक माध्यम होता है।

जनजाति अर्थव्यवस्था का वर्गीकरण– जनजातीय अर्थव्यवस्था का वर्गीकरण विभिन्न मानवशास्त्रियों ने विभिन्न रूप से किया है। प्रमुख वर्गीकरण निम्नलिखित हैं–

(1) जैक्स तथा स्टर्न– ने जनजातीय अर्थव्यवस्था को दो भागों में बाँटा है–

(अ) शिकार करने, मछली मारने तथा भोजन एकत्र करने वाली अर्थव्यवस्थायें– इसके दो भाग हैं–

(i) भोजन एकत्रित करने वाली सरल अर्थव्यवस्थायें।
(ii) भोजन एकत्रित करने वाली विकसित सरल अर्थव्यवस्थायें।

(ब) कृषि एवं पशुपालन सम्बन्धी अर्थव्यवस्था– इसके दो भाग हैं–

(i) कृषि तथा पशुपालन सम्बन्धी अर्थव्यवस्था।

(ii) कृषि एवं पशुपालन सम्बन्धी विकसित अर्थव्यवस्था।

(2) थर्नवाल्ड ने जनजातीय समाज की अर्थव्यवस्था को सात भागों में विभाजित किया है–

(i) शिकार करने वाले, पशु–पक्षी पकड़ने वाले तथा खाद्य–सामग्री एकत्रित करने वाले समरूप समुदाय।
(ii) शिकार, पशु–पक्षी पकड़ने वाले कृषकों का समरूप समुदाय।
(iii) शिकार करने, पशु–पक्षी पकड़ने वाले कृषक तथा कारीगरों के श्रेणीबद्ध समाज।
(iv) समरूप शिकारी तथा चरवाहे।
(v) प्रजातीय श्रेणीबद्ध पशु पालने वाले तथा व्यापार करने वाले समूह।
(vi) समाज के आधार पर श्रेणीबद्ध शिकारी, कृषक तथा कारीगर समूह।
(vii) जमींदारी, राज्य तथा समाज श्रेणीबद्ध समुदाय।

अर्थव्यवस्था के आधार पर भारतीय जनजातियों का वर्गीकरण या विभाजन– आर्थिक जीवन व व्यवसायों के आधार पर भारत की जनजातियों का वर्गीकरण करना एक कठिन कार्य है। वे सीमान्त संस्कृति की अर्थव्यवस्था में लगे हैं या एक से अधिक व्यवसायों में लगे हैं। जो जनजाति किसी विशेष व्यवसाय को अपना लेती है वह लगातार उसी में लगी रहती है।

व्यवसायों की दृष्टि से भारतीय जनजातियों को निम्न श्रेणी में विभाजित किया गया–

जनजातियों का आर्थिक स्तर

स्थान	शिकार और संचय अवस्था	झूम कृषि, लकड़ी काटना, कत्था बनाना	स्थायी कृषि जो मुर्गी या पशु पालते हैं, कातते हैं, बुनते हैं, सीढ़ीनुमा कृषि करते हैं
1.उत्तरप्रदेश	राजी	कोरवा, सहरिया, भुइया, खखाड़	थारू, माँझी, बीड़, भोकसा
2. बिहार	खड़िया बिरहोर	कोरचा, असुर	खस
3. बंगाल	कूकी	गोरालय पहाड़िया	ओरांव, मुण्डा, हो
4. आसाम	कूकी, कीनयाक नागा	नामः लाखेर गोरी मरिया दंडमी मरिया गोंड,	पोलियो, संथाल
5. मध्यप्रदेश	कोया, काहा, रेड्डी	सावरा मुंडापन	खासी , मुनसरी
6. आन्ध्रप्रदेश	पसयिन काडर पहाड़ी पटारम	–	बड़गा कोटा
7. उड़ीसा	जुआंग	–	परजा
8. मुम्बई	–	सावरा	– भील, गोंड

प्रश्न–8. भारतीय जनजातियों का प्रजातीय आधार पर वर्गीकरण प्रस्तुत कीजिये।

उत्तर– प्रजाति एक जैविकीय अवधारणा है। प्रजाति को व्यक्तियों के एक ऐसे समूह के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसके समान शारीरिक लक्षण होते हैं। यह लक्षण वंशानुक्रमण के द्वारा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित किये जाते हैं। चूंकि वंशानुक्रमण

की प्रक्रिया जैविकीय होती है। इसीलिये प्रजातियों की शारीरिक विशेषतायें हजारों सालों से वैसी ही हैं। भारत का प्रजातीय इतिहास काफी अस्पष्ट है। परन्तु इस सम्बन्ध में वैज्ञानिक जानकारी एकत्रित करने का श्रेय सबसे पहले सर हर्बर्ट रिजले को जाता है। इन्होंने 1901 की भारतीय जनगणना के अध्यक्ष के रूप में भारत की प्रजातियों के बारे में जानकारी संकलित की। इसके पश्चात् **जे.एच. हट्टन, डॉ.बी.एस. गुहा, हड्डन, डॉ. डी.एन. मजूमदार, सरकार** आदि ने भी इस सम्बन्ध में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

(A) हर्बर्ट रिजले का मत– रिजले ने अपनी पुस्तक **'दि पीपुल ऑफ इंडिया'** में भारतीय प्रजातियों का वर्गीकरण प्रस्तुत किया है–

1. **द्रविड़ियन–** यह भारत की मूल प्रजाति है। छोटा कद, काला रंग, लम्बा सिर, चौड़ी नाक, घने काले बाल इस प्रजाति के शारीरिक लक्षण हैं। संथाल, पनियान, इरूला, चेंचू आदि जनजातियाँ इसकी प्रतिनिधि हैं।
2. **मंगोलियन–** यह बाहर से भारत में आयी। पीला रंग, चौड़ा जबड़ा, नाटा कद, अधखुली आंखें, सीधे केश इनकी शारीरिक विशेषतायें हैं। उत्तर–पूर्वी भारत, असम आदि क्षेत्रों में इस प्रजाति के लोग पाये जाते हैं।
3. **इण्डो–आर्यन–** यह उत्तरी–पूर्वी सीमा से भारत में आये तथा इनका मिश्रण द्रविड़ों से हुआ। लम्बा कद, रंग गोरा, सिर लम्बा, नाक लम्बी एवं पतली तथा घने बाल इस प्रजाति की शारीरिक विशेषतायें हैं।
4. **आर्यों–द्रविड़ियन–** आर्यों तथा द्रविड़ों के मिश्रण से यह प्रजाति बनी है। इनके शारीरिक लक्षणों में आर्य तथा द्रविड़ों के शारीरिक लक्षणों का मिश्रण पाया जाता है। पंजाब, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, असम तथा मध्य प्रदेश के इलाकों में इस प्रजाति के लोग पाये जाते हैं।
5. **मंगोलों–द्रविड़ियन–** मंगोल और द्रविड़ प्रजाति के मिश्रण से यह प्रजाति बनी है। बंगाल तथा उड़ीसा में इस प्रजाति के तत्व पाये जाते हैं।
6. **सीथो–द्रविड़ियन–** मध्य एशिया की सीथियन प्रजाति और द्रविड़ों के मिश्रण से इसका निर्माण हुआ। इसकी शारीरिक विशेषतायें मंगोल प्रजाति से मिलती हैं। पंजाब, सिन्ध, काठियावाड़, राजस्थान, मध्य प्रदेश, गुजरात आदि में ये फैली हुई हैं।
7. **तुर्को–इरानियन–** बिलोच और ब्राहुई लोगों में इसके तत्व पाये जाते हैं। इस प्रजाति के लोग अब भारत में नहीं पाये जाते।

(B) जे.एच. हट्टन– हट्टन 1931 की जनगणना के अध्यक्ष थे। उनके निष्कर्ष इस प्रकार हैं–

1. **नीग्रिटो–** ये अफ्रीका से भारत आये। आक्रमणकारियों ने इन्हें खत्म कर दिया। अब इनके अवशेष भारत में नहीं हैं।
2. **प्रोटो–ऑस्ट्रेलॉयड–** यह पैलेस्टाइन से भारत में आये। इन्हें पूर्व द्रविड़ियन (Pre-Dravidians) भी कहते हैं।

3. **भूमध्य सागरीय–** भूमध्य सागर क्षेत्र से दो शाखायें भारत में आयीं। एक शाखा जिसे धातु कला का ज्ञान था, उसने सिन्धु घाटी की सभ्यता का निर्माण किया। दूसरी शाखा को सिंचाई एवं कृषि सम्बन्धी ज्ञान था।
4. **अल्पाईन प्रजाति की आर्मीनॉयड शाखा–** यह प्रजाति ईसा से तीन हजार वर्ष पूर्व पामीर के पठार से भारत आई। भारत में पाये जाने वाले चौड़े सिर वाले द्रविड़ इसी प्रजाति के हैं।
5. **मंगोलॉयड–** यह प्रजाति पूर्वी भाग से भारत में आयी और बंगाल की खाड़ी तक फैल गई।
6. **इण्डो–आर्यन–** ईसा से डेढ़ हजार वर्ष पूर्व यह प्रजाति भारत में आयी। इसने वैदिक सभ्यता का निर्माण किया ऐसा हट्टन का मत है, परन्तु यह मत निराधार है, क्योंकि वैदिक सभ्यता का निर्माण तो इससे कई हजार वर्ष पूर्व हो चुका था।

(C) डॉ. बी.एस. गुहा का मत–

1. **नीग्रिटो–** यह नीग्रो प्रजाति की उपशाखा है। **डॉ. गुहा** के अनुसार, नीग्रिटो ही भारत की सबसे प्राचीन प्रजाति है। गहरा काला रंग, नाटा कद, चौड़ा सिर, मोटे होंट, चौड़ी नाक एवं ऊनीबाल इस प्रजाति की प्रमुख शारीरिक विशैषतायें हैं। दक्षिण भारत की कदार, इरूला, पनियान तथा पूर्वी बिहार की जनजातियां इस प्रजाति का प्रतिनिधित्व करती हैं।
2. **आदि आग्नेय–** छोटा कद, लम्बा एवं ऊँचा सिर, चौड़ा तथा छोटा चेहरा, नाक छोटी तथा चपटी आदि इस प्रजाति के प्रमुख शारीरिक लक्षण हैं। मध्य भारत क्षेत्र की लगभग सभी जनजातियां इस प्रजाति का प्रतिनिधित्व करती हैं।
3. **मंगोलॉयड–** इस प्रजाति की दो शाखायें भारत में पायी जाती हैं। चौड़े सिर वाली प्रजाति चटगांव (अब बांग्लादेश में) तथा उत्तरी–पूर्वी भारत में पाई जाती हैं, जबकि लम्बे सिर वाली प्रजाति आसाम, ब्रह्मपुत्र की घाटी तथा पूर्वोत्तर सीमावर्ती प्रान्तों में पाई जाती हैं।

लघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर-

प्रश्न–(1) जनजाति का अर्थ बताते हुये उसकी दो परिभाषायें लिखिये।

उत्तर– जनजाति को आदिम या आदिवासी इसलिये कहा जाता है कि, ये भारत के प्राचीनत्तम निवासी हैं। द्रविड़ों के आगमन से पूर्व ये यहाँ निवास करते थे। **वेरियर आल्विन** भी इन्हें **'आदिम जाति'** के नाम से संबोधित करते हैं। परन्तु **डॉ. घुरिये** ने इन्हें 'पिछड़े हिन्दू' कहा है। उन्होंने प्रमाण देकर कहा है कि, अधिकांश वन्य जातियाँ हिन्दू धर्म को मानती हैं।

डॉ. डी.एन. मजूमदार के अनुसार– 'एक जनजाति परिवारों या परिवारों के समूह का एक संकलन होता है जिनका एक सामान्य नाम होता है, जिनके सदस्य एक निश्चित भू–भाग पर रहते हैं, सामान्य भाषा बोलते हैं और विवाह, व्यवसाय, उद्योग के विषय में कुछ निषेधों का पालन करते हैं और एक निश्चित एवं उपयोगी परस्पर आदान–प्रदान की व्यवस्था का विकास करते हैं।'

उपरोक्त परिभाषा से स्पष्ट है कि जनजाति का एक सामान्य क्षेत्र होता है जहाँ वे निवास करते हैं। उनकी सामान्य संस्कृति होती है। वे एक भाषा या बोली का प्रयोग करते हैं। उनका एक निश्चित राजनीतिक संगठन तथा व्यवसाय होता है। एक जनजाति अनिवार्य रूप से अन्तर्विवाही होती है।

प्रश्न–(2) जनजाति और अनुसूचित जनजाति में अंतर लिखिये।

उत्तर– मूलतः जनजाति और अनुसूचित जनजातियों में कोई अन्तर नहीं है। केवल इतना ही अन्तर है कि जनजातियों में सभी जनजातियाँ शामिल होती हैं जबकि अनुसूचित जनजातियों में केवल उन्हीं जनजातियों को शामिल किया जाता है जो संविधान में सूचीबद्ध हैं। फिर भी अध्ययन की दृष्टि से दोनों में निम्नलिखित अन्तर हैं–

(1) जनजाति संवैधानिक सूची में शामिल नहीं है, जबकि अनुसूचित जनजातियाँ संवैधानिक सूची में शामिल हैं।

(2) जनजातियों को किसी प्रकार का विशेष राजनैतिक लाभ प्राप्त नहीं हो रहा है, जबकि अनुसूचित जनजातियों को लाभ प्राप्त हो रहा है।

(3) अनुसूचित जनजातियों में शिक्षा का प्रतिशत और स्तर बढ़ा है जबकि जनजातियों में नहीं।

(4) जनजाति आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त कमज़ोर है जबकि अनुसूचित जनजाति का आर्थिक स्तर सुधर रहा है।

(5) अनुसूचित जनजातियों के जीवन में आधुनिकता का प्रवेश हो रहा है, जबकि जनजातियों के लोग परम्परागत जीवन-निर्वाह कर रहे हैं।

प्रश्न–(3) मध्यप्रदेश के जनजातीय क्षेत्रों को लिखिये।

अथवा

मध्यप्रदेश के जनजातीय क्षेत्र कौन–कौन से हैं? लिखिये।

उत्तर– मध्यप्रदेश के जनजातीय बाहुल्य क्षेत्र निम्नानुसार हैं–

(1) झाबुआ जिला, (2) मण्डला जिला,
(3) डिंडोरी जिला, (4) बड़वानी जिला।
(5) धार जिले की सरदारपुर, धार, कुक्षी, धरमपुरी, गंधवानी एवं मनावर तहसील।
(6) खरगोन (पश्चिम निमाड़) जिले की भगवानपुरा, सेगांव, भीकनगांव, झिरनिया, खरगोन एवं महेश्वर तहसील।
(7) हरसूद तहसील का खालवा आदिम जाति विकास खंड एवं खंडवा (पूर्वी निमाड़) जिले की खकनार तहसील का खकनार आदिम जाति विकास खंड।
(8) रतलाम जिले में सैलाना तथा बाजना तहसील।
(9) बैतूल जिले में बैतूल (बैतूल विकास खंड को छोड़कर) भैंसदेही और शाहपुर तहसील।
(10) सिवनी जिले में लखनादौन, घंनसौर एवं कुरई तहसील, बालाघाट जिले में बैहर तहसील, होशंगाबाद जिले में इटारसी तहसील का केसला आदिम जाति विकासखंड, शहडोल जिले की पुष्पराजगढ़, अनूपपुर, जैथारी, कोतमा, सोहागपुर एवं जयसिंह नगर तहसील, उमरिया जिले की पाली तहसील में पाली आदिम जाति विकास खंड।
(11) सीधी जिले की कुसमी तहसील में कुसमी आदिम जाति विकास खंड।
(12) श्योपुर जिले की कराहल तहसील का कराहल आदिम जाति विकास खंड।

प्रश्न–(4) 'टोटम' क्या है? समझाइये।

अथवा

टोटम को परिभाषित कीजिये।

उत्तर– जनजातीय समाज के लोग अपनी उत्पत्ति के लिये भौतिक वस्तुओं, पशु, पक्षी, पेड़, पौधों को भी महत्वपूर्ण मानते हैं, वे अपने वंश की उत्पत्ति को टोटम से जोड़ते हैं–

हॉबेल के अनुसार, 'टोटम एक पदार्थ, प्रायः एक पशु अथवा पौधा होता है, जिसके प्रति एक सामाजिक समूह के सदस्य विशेष श्रद्धाभाव रखते हैं और जो यह अनुभव करते हैं कि उनके और टोटम के बीच भावनात्मक समानता का एक विशिष्ट बंधन है।'

प्रश्न–(5) अनुसूचित जनजाति से क्या आशय है?

अथवा

अनुसूचित जनजाति का अर्थ स्पष्ट कीजिये।

उत्तर– अनुसूचित शब्द का आशय सूचीबद्ध करने से है। भारतीय संविधान में जिन जनजातियों को सूचीबद्ध किया गया उन्हें अनुसूचित जनजाति कहा गया। इनको सूचीबद्ध करने का आशय इनके विकास के मार्ग को खोलना ही था ताकि इनकी दशा को सुधारकर इन्हें देश की अन्य जनता के समकक्ष लाकर देश की मुख्य धारा से जोड़ा जा सके। सन् 1950 में भारतीय समाज की 212 जनजातियों को सूचीबद्ध कर उन्हें अनुसूचित जनजाति का दर्जा दिया गया। नौकरशाही की हठधर्मिता के कारण इसमें अनेक जनजातियाँ शामिल होने से वंचित रह गयीं। अतः बाद में इन्हें इस सूची में जोड़ा गया। 1971 में इसमें 427 और वर्तमान में 560 जनजातियाँ शामिल हैं। निष्कर्ष रूप से हम कह सकते हैं कि भारतीय संविधान में उन वर्गों को जो कि सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक दृष्टि से पिछड़े हुये हैं, के उत्थान और कल्याण के लिये विशेष प्रावधान किये गये हैं। इसी आशय से जिन जनजातियों के नाम संविधान की अनुसूची में शामिल किये गये हैं, उन सभी को अनुसूचित जनजाति के नाम से पुकारा जाता है।

प्रश्न–(6) जनजाति और जाति में समानतायें लिखिये।

उत्तर– जाति और जनजाति दो भिन्न अवधारणायें हैं फिर भी दोनों में अनेक समानतायें पायी जाती हैं, दोनों में ही धर्म की प्रधानता होती है। दोनों में ही गोत्र को पवित्र माना जाता है। दोनों में ही स्थानीय स्तर पर लघु परम्परायें पायी जाती हैं। दोनों की सदस्यता जन्मजात होती है। अन्तर्विवाह दोनों में ही पाया जाता है। जनजाति भी जाति की तरह ही परम्परागत व्यवसाय से जुड़ी रहती है। जनजाति का भी जाति की ही तरह एक-एक स्वतंत्र राजनीतिक संगठन होता है। जनजाति और जाति दोनों में ही प्राथमिक सम्बन्ध पाये जाते हैं। दोनों में ही एक सामान्य नाम पाया जाता है। जनजाति भी जाति की तरह ही एक बन्द वर्ग है।

प्रश्न–(7) जनजाति और जाति में भिन्नता बताइये।

अथवा

जनजाति और जाति में अन्तर लिखिये।

उत्तर– जनजाति और जाति में अन्तर–

जनजाति	जाति
1. यह एक निश्चित भू-भाग पर निवास करती है।	1. यह किसी निश्चित भू-भाग पर निवास नहीं करती है।
2. जनजाति में कोई खण्डात्मक विभाजन नही होता है।	2. जाति में खण्डात्मक विभाजन होता है।
3. जनजाति के विकास का आधार भू-भाग होता है।	3. जाति के विकास का आधार जन्म होता है।
4. जनजाति में कोई उपजनजाति नहीं होती।	4. जाति में अनेक उपजातियाँ होती है।
5. जनजातीय गोत्र के नाम टोटम, पशु, पेड़, पर्वत के आधार पर होते हैं।	5. जाति में गोत्रों के नाम ऋषियों के नाम पर आधारित होते हैं।
6. जनजाति में संस्तरणात्मक विभाजन नहीं होता।	6. जाति में संस्तरणात्मक विभाजन होता है।
7. जनजाति में अस्पृश्यता नहीं पाई जाती।	7. जाति में अस्पृश्यता पाई जाती है।
8. जनजाति में भोजन सम्बन्धी निषेध नहीं होता है।	8. जाति में भोजन सम्बन्धी निषेध होता है।
9. जनजाति में धर्म और जादू का विशेष महत्व होता है।	9. जाति में धर्म और जादू का महत्व नहीं होता है।
10. जनजाति की एक विशिष्ट भाषा होती है।	10. जाति की कोई विशिष्ट भाषा नहीं होती है।

इकाई-2

दीर्घउत्तरीय प्रश्नोत्तर-

प्रश्न– 1. परिवार की परिभाषा दीजिये और जनजातियों में परिवार के प्रमुख प्रकारों का वर्णन कीजिये।

अथवा

भारतीय जनजातियों में परिवार के प्रकारों का वर्णन कीजिये।

उत्तर– विभिन्न समाजों में परिस्थितियों और संस्कृतियों के अनुसार भिन्न प्रकार के पारिवारिक समूह पाये जाते है। आदिकाल से वर्तमान तक परिवार के वंश चलाने के ढंग, निवास स्थान के स्वरूप, परिवार के सदस्यों की संख्या तथा परिवार में स्त्री या पुरुष की प्रधानता के आधार पर विभिन्न रूपों में विभाजित किया गया है

1. सत्ता के आधार पर परिवार के प्रकार– सत्ता के आधार पर परिवार के प्रकार इस प्रकार है

(i) मातृ–सत्तात्मक परिवार– इसमें परिवार पर माता का अधिकार होता है। भारत में आसाम की खासी और गारो जातियों में तथा दक्षिण भारत की नय्यर, कादर, इरूला, पुलयन और होलिया आदि में इस प्रकार के परिवारों का प्रचलन है।

(ii) पितृ–सत्तात्मक परिवार– पितृ–सत्तात्मक परिवार में परिवार पर पिता का अधिकार होता है। आधुनिक युग में अधिकांशतः इसी प्रकार के परिवार पाये जाते हैं।

2. निवास के आधार पर परिवार के प्रकार– निवास स्थान के आधार पर परिवार के निम्नलिखित प्रकार हैं–

(i) मातृ–स्थानीय परिवार– इन परिवारों में विवाह के उपरान्त पत्नी पिता के घर पर ही रहती है और पति पत्नी के घर पर जाता है।

(ii) पितृ–स्थानीय परिवार– इन परिवारों में पत्नी विवाह के उपरान्त पति के निवास स्थान पर जाकर रहती है।

(iii) नव–स्थानीय परिवार– जिन परिवारों में नवीन विवाहित दम्पत्ति अपना अलग घर बनाकर रहते हैं, वे नवस्थानीय परिवार कहलाते हैं।

3. वंश के आधार पर परिवार के प्रकार–

(i) मातृवंशीय परिवार– इसमें वंश–परम्परा का आधार माता होती है। परिवार की मूल पूर्वज स्त्री मानी जाती है। उत्तराधिकार माता के नाम से ही चलता है।

(ii) पितृवंशीय परिवार– इसमें परिवार का पूर्वज पुरुष माना जाता है और वंश–परम्परा पिता से चलती है। अधिकांश परिवार इसी प्रकार से पाये जाते है।

(iii) एक–पक्षीय परिवार– परिवार का सर्वप्रमुख कार्य वंशावली का चलाना है। जब वंश का नाम स्त्री या पुरुष में से एक की ओर चलता है तो परिवार को एकपक्षीय परिवार कहते है।

(iv) उभय पक्षीय परिवार– जब पति और पत्नी दोनों की ओर से परिवार का नाम चलता है तो उस परिवार को उभय पक्षीय परिवार कहते है।

4. उत्तराधिकार के आधार पर परिवार के प्रकार– उत्तराधिकार के आधार पर परिवार के दो प्रकार है

(i) पितृवंशीय परिवार– परिवार में सामाजिक और पारिवारिक पद, उपाधियों तथा सम्पत्ति पर सम्पूर्ण अधिकार पिता का ही होता है। उसकी मृत्यु के पश्चात् ये सब अधिकार पुत्र को प्राप्त हो जाते हैं।

(ii) मातृ पक्षी परिवार– इन परिवारों में माता की सत्ता प्रधान होती है। माता ही सम्पत्ति सम्बन्धी सभी अधिकारों को अपने में केन्द्रित रखती है। ऐसे परिवारों में माता के भाई या बहन का लड़का सम्पत्ति का उत्तराधिकारी होता है।

5. परिवार की सदस्य संख्या के आधार पर परिवार के प्रकार–

(i) प्राथमिक अथवा मूल परिवार– प्राथमिक अथवा मूल अधिकार के अन्तर्गत माता पिता तथा उनके बच्चे आते हैं। इस परिवार में वे सभी सदस्य होते हैं जो एक दूसरे से सन्तानोत्पत्ति के कारण सम्बन्धित होते हैं।

(ii) **विवाह सम्बन्धी परिवार**– विवाह सम्बन्धी परिवार के अन्तर्गत विवाहित युगल तथा उसके सम्बन्धी एवं बच्चे होते हैं।

(iii) **संयुक्त परिवार**– संयुक्त परिवार उस परिवार को कहते हैं जिसमें अनेक पीढ़ियों तक रक्त सम्बन्धी एक साथ रहते हैं।

(vi) **विस्तृत परिवार**– जब संयुक्त परिवार के सदस्यों की संख्या में बहुत अधिक वृद्धि हो जाती है। तब वह परिवार विस्तृत परिवार कहलाता है।

6. **विवाह सम्बन्ध के आधार पर परिवार के प्रकार**–

(i) **एक विवाही परिवार या वैयक्तिक परिवार**– एक पति और एक पत्नी की संयुक्त व्यवस्था से निर्मित परिवार एक विवाही परिवार कहलाता है।

(ii) **बहुपत्नी विवाही परिवार**– जिस परिवार में एक पति की अनेक पत्नियाँ हों वह बहुपत्नी विवाही परिवार कहलाता है।

(iii) **बहुपति परिवार**– एक स्त्री के एक से अधिक पति होते हैं वहाँ पर बहुपति परिवार पाये जाते हैं।

(iv) **वूथ विवाही परिवार**– यह वह परिवार है जिसमें एक समूह के सब पुरुषों का विवाह दूसरे समूह की सब स्त्रियों से होता है।

7. **रक्त सम्बन्धों के आधार पर परिवार के प्रकार**–

(i) **समान रुधिर वाले परिवार**– जब एक ही रुधिर के व्यक्ति आपस में विवाह कर लेते हैं तो उन परिवारों को समान रुधिर वाले परिवार कहते हैं।

(ii) **सहयोगी परिवार**– इस परिवार में विभिन्न रुधिर के स्त्री, पुरुष, पति–पत्नी बनते हैं। आधुनिक युग में इसी प्रकार के परिवार पाये जाते हैं।

8. **जन्म एवं सन्तानोत्पत्ति के आधार पर परिवार के प्रकार**–

(i) **जन्म परिवार**– यह वह परिवार है जिसमें हम जन्म लेते हैं। जन्म परिवार एक अनैच्छिक समूह है। पितृ–वंशीय परिवारों में एक महिला के पिता का परिवार उसका जन्म परिवार है।

(ii) **सन्तानोत्पत्ति परिवार**– यह परिवार का वह रूप है जिसमें हम बच्चों को जन्म देते हैं। यह एक ऐसा सम्बन्ध है जिसमें हम स्वेच्छा से प्रवेश करते हैं किन्तु हम इससे स्वेच्छा से अलग नहीं हो सकते। पितृ–वंशी परिवारों में एक महिला के पति का परिवार सन्तानोत्पत्ति का परिवार है।

प्रश्न–2. जनजातियों के गोत्र क्या हैं? जनजातियों में गोत्र का स्थान निर्धारित कीजिये।

अथवा

गोत्र क्या है? गोत्र के कार्यों की चर्चा कीजिये।

अथवा

गोत्र की परिभाषा बतलाइये तथा विशेषताओं पर प्रकाश डालिये।

उत्तर– गोत्र वह सामाजिक समूह है जिसके सदस्य अपने आपको एक ही माता अथवा पिता की सन्तान मानते हैं। इस प्रकार एक गोत्र को मानने वालों के पारस्परिक सम्बन्ध भाई-बहिन के समान ही घनिष्ठ होते हैं। गोत्र जनजातियों में भी पाया जाता है और यह उनका बहिर्विवाही भाग है।

गोत्र की परिभाषायें–

1. **मजूमदार एवं मदान**– 'गोत्र प्रायः वंश-समूह होता है, जो अपनी उत्पत्ति एक कल्पित पूर्वज से मानते हैं। यह पूर्वज मानव, मानव के सामान, पशु, पेड़, पौधा या निर्जीव वस्तु हो सकता है।'
2. **हट्टन**– 'गोत्र बहिर्विवाही समूह है जो अन्तर्विवाह करने वाली जाति के अन्तर्गत एक सामान्य वंशक्रम में है।'
3. **आर.एन. मुकर्जी**– 'गोत्र एक पक्षीय परिवारों का वह संकलन है जिसके सदस्य अपने को एक वास्तविक या काल्पनिक सामान्य पूर्वज के वंशज मानते हैं।'

गोत्र की संरचना– गोत्र में केवल एक पक्ष के सम्बन्धियों को ही सम्मिलित किया जाता है। ये माता की ओर के या पिता की ओर के हो सकते हैं। इसलिये कुछ विद्वान 'क्लान' को 'गोत्र' न कहकर 'एक वंशीय कबीला' कहते हैं। जेकब्स तथा स्टर्न ने भी गोत्र को एक पक्षीय बताया है।

गोत्र के प्रकार– एकपक्षीय माने जाने के कारण गोत्र दो प्रकार के होते हैं–

(i) मातृवंशीय गोत्र (ii) पितृवंशीय गोत्र।

पितृ सत्तात्मक जातियों में पिता, पिता के पिता, पितामह के पिता आदि का गोत्र देखा जाता है और मातृ सत्तात्मक जातियों में माता, माता की माता, नानी की माता, आदि का गोत्र देखा जाता है। पितृ प्रधान जातियों में विवाह के बाद स्त्री का गोत्र वही हो जाता है जो पति का गोत्र होता है। मातृ प्रधान जातियों के विवाह के बाद पुरुष का वही गोत्र हो जाता है जो पत्नी का होता है।

गोत्र की विशेषतायें–

1. **बहिर्विवाही**– एक गोत्र के व्यक्ति परस्पर विवाह नहीं करते हैं। दूसरे गोत्र में विवाह करते हैं।
2. **सामान्य निवास**– कुछ विद्वानों का मत है कि गोत्र का सामान्य निवास स्थान होता है। जबकि कुछ विद्वान इसे आवश्यक नहीं मानते।
3. **सामान्य पूर्वज**– एकगोत्र वाले अपने को एक ही पूर्वज की सन्तान मानते हैं।
4. **एकता**– गोत्र के सदस्यों में एकता रहती है।
5. **जन्मजात सदस्यता**– जो भी गोत्र में जन्म लेता है अनिवार्यतः उस गोत्र का सदस्य होता है।
6. **गोत्र चिन्ह**– गोत्र का एकगोत्र चिन्ह होता है। कुछ गोत्र वृक्ष, पशु, आदि को अपना पूर्वज मानते हैं।
7. **एकपक्षीय**– गोत्र में केवल एक ओर के सम्बन्धी ही गिने जाते हैं। या तो माता की ओर से या पिता की ओर से ।

गोत्र के कार्य– गोत्र के कार्य निम्नलिखित हैं–

1. **पारस्परिक सहायता और सुरक्षा**– गोत्र का महत्वपूर्ण कार्य अपने सदस्यों की सहायता करना और सुरक्षा प्रदान करना है।

2. **विवाह पर नियन्त्रण**– गोत्र बहिर्विवाही समूह है। एक ही गोत्र में विवाह वर्जित होने के कारण यौन सम्बन्धी इच्छाओं को गोत्र के बाहर ही पूरा करना पड़ता है। गोत्र विवाह पर नियंत्रण रखता है।

3. **नियन्त्रण का कार्य**– गोत्र नियमों का निर्माण करके अपने सदस्यों पर नियन्त्रण रखता है। जो व्यक्ति इन नियमों की अवहेलना करता है उसको दण्ड दिया जाता है।

4. **प्रशासनिक कार्य**– कुछ गोत्र एक समिति के द्वारा प्रशासनिक कार्य भी करते हैं। गोत्र के सदस्यों को इसके अनुसार कार्य करना पड़ता है।

5. **धार्मिक कार्य**– गोत्र सम्बन्धी जितने धार्मिक कार्य होते हैं, उन्हें उसी गोत्र का व्यक्ति सम्पन्न कर सकता है।

6. **संवैधानिक कार्य**– गोत्र का संवैधानिक कार्य यह है कि वह अपने सदस्यों के लिये नियम बनाता है, जिसका पालन करना अनिवार्य होता है।

उक्त कार्यों से स्पष्ट है कि गोत्र सदस्यों को एकता के सूत्र में बांधता है और समाज को संगठित करता है।

प्रश्न–3. जनजातीय परिवार के प्रमुख कार्यों की व्याख्या कीजिये।

उत्तर– जनजातीय समाज में परिवार के कार्यों का वर्णन निम्नलिखित है–

1. **जैविक या प्राणीशास्त्रीय कार्य–**

(a) **यौन सम्बन्धी इच्छाओं की पूर्ति का कार्य**– यह मानव की प्राकृतिक आवश्यकता होती है और इसकी नियमित एवं वैध पूर्ति परिवार में ही सम्भव है।

(b) **सन्तानोत्पत्ति का कार्य**– परिवार की स्थापना का मुख्य उद्देश्य सन्तान का उत्पन्न करना माना गया है।

(c) **बच्चों का पालन–पोषण**– जन्म के समय बच्चा असहाय होता है और यदि परिवार के व्यक्ति उसका पालन–पोषण न करें तो वह जीवित नहीं रह सकता।

(d) **शारीरिक रक्षा करना**– परिवार का एक प्रमुख कार्य परिवार के सदस्यों की शारीरिक रक्षा करना है। भोजन, वस्त्र एवं आवास परिवार प्रदान करता है।

2. **आर्थिक कार्य–**

(a) **श्रम–विभाजन**– परिवार के प्रत्येक सदस्य की एक निश्चित स्थिति और कार्य होता है। जिसके अनुसार श्रम–विभाजन होता है।

(b) **सम्पत्ति का प्रभुत्व**– जनजातीय समाज में प्रत्येक परिवार के पास कुछ न कुछ सम्पत्ति अवश्य होती है जैसे निवास, उपकरण, पशु आदि।

3. **सांस्कृतिक कार्य**– परिवार समाज के साहित्य, रीति–रिवाज, नियम, परम्पराओं, जनरीतियों आदि को सुरक्षित रखता है और उनका ज्ञान बालकों को कराता है। समाज के नैतिक पक्ष और उसके व्यावहारिक पक्ष की शिक्षा देकर समाज के संगठन को दृढ़ता प्रदान करता है।

4. **शैक्षणिक कार्य**– **बोगार्डस** के शब्दों में– "परिवार पहला मानव विद्यालय है। प्रत्येक व्यक्ति की अनौपचारिक शिक्षा सबसे पहले परिवार में ही आरम्भ होती है। बच्चों के शैक्षणिक काल का सबसे महत्वपूर्ण अंग परिवार में ही व्यतीत होता है।"

5. **धार्मिक कार्य**– परिवार धर्म का प्रमुख केन्द्र है। परिवार धार्मिक उत्सवों को मनाता है और अपने सदस्यों के धार्मिक विचारों को निर्धारित करता है।

6. **मनोरंजन प्रदान करने का कार्य**– परिवार मनोरंजन का एक प्रमुख केन्द्र है। आधुनिक युग में यद्यपि मनोरंजन के अनेक साधन उपलब्ध होते हैं फिर भी परिवार जैसा मनोरंजन कोई भी अन्य साधन प्रदान नहीं कर सकता है।

प्रश्न–4. विवाह की परिभाषा दीजिये तथा जनजातीय विवाह के विभिन्न प्रकार बतलाइये।

अथवा

जनजातियों में पाये जाने वाले विवाह के स्वरूपों का वर्णन कीजिये।

अथवा

भारतीय जनजातियों में विवाह के स्वरूपों का वर्णन कीजिये।

उत्तर– विवाह एक सार्वभौमिक संस्था है। विवाह संस्था केवल परिवार का ही निर्माण नहीं करती बल्कि यह व्यक्ति को एक विशेष सामाजिक स्थिति भी प्रदान करती है। विवाह एक सांस्कृतिक संस्था भी है। इसीलिये प्रत्येक समाज में विवाह का स्वरूप उस समाज की सांस्कृतिक विशेषताओं द्वारा निर्धारित होता है।

विवाह की परिभाषायें

1. गिलिन एवं गिलिन के अनुसार– "विवाह एक प्रजनन मूलक परिवार की स्थापना की समाज द्वारा स्वीकृत विधि है।"

2. वेस्टरमार्क के अनुसार– "विवाह एक या अधिक पुरुषों का एक या अधिक स्त्रियों के साथ होने वाला वह सम्बन्ध है जो प्रथा अथवा कानून द्वारा स्वीकृत होता है और जिसमें दोनों पक्षों तथा उनसे उत्पन्न होने वाले बच्चों के अधिकारों व कर्त्तव्यों का समावेश होता है।"

विवाह के प्रकार– विवाह के दो प्रमुख प्रकार निम्नलिखित हैं–

1. एक विवाह, 2 बहुविवाह।

1. एक विवाह– एक विवाह से अभिप्राय यह है कि एक समय में एक पुरुष का विवाह एक ही स्त्री से हो सकता है। इनमें से कोई भी दूसरा विवाह तब तक नहीं कर सकता है जब तक कि वह दूसरे को तलाक न दे दे या दोनों में से एक की मृत्यु न हो जाये। पिडिंगटन ने इसकी परिभाषा करते हुये कहा है, 'एक विवाह, विवाह का वह स्वरूप है ,जिसमें कोई भी व्यक्ति एक समय में एक व्यक्ति से अधिक के साथ विवाह नहीं कर सकता है।'

आसाम के खासी, बिहार के सन्थाल और केरल के कडार एक विवाही हैं।

2.बहुविवाह– जब एक पुरुष की एक समय में एक से अधिक पत्नियाँ हों और एक स्त्री के एक से अधिक पति हों तो इस प्रथा को बहु–विवाह कहते हैं। बहु–विवाह के प्रमुख तीन स्वरूप हैं–

(a) **बहु पत्नी विवाह**– जब एक पुरुष एक से अधिक पत्नियाँ रखता है तो इस विवाह प्रथा को बहु–पत्नी विवाह कहते हैं। यह प्रथा नागा, गोंड, बैंगा तथा टोडा जनजातियों में पायी जाती है।

बहुपत्नी विवाह के लाभ

1. बहुपत्नी विवाह के कारण घर के काम-काज में सरलता हो जाती है।
2. इस विवाह के कारण पुरुष को यौन-सम्बन्धों में नवीनता मिलती है।
3. एक बलवान पुरुष के अनेक स्त्रियों से शादी करने के कारण बलशाली सन्तान उत्पन्न होती है।
4. बालकों का पालन-पोषण अच्छी प्रकार से होता है।
5. कृषि कार्य भली-भाँति चल जाता है।

बहुपत्नी विवाह के दोष

1. इसमें स्त्रियों का सामाजिक स्तर गिर जाता है।
2. सन्तान अधिक पैदा होने की सम्भावना रहती है।
3. एक से अधिक स्त्रियाँ परिवार को क्लेश तथा कलह का केन्द्र बना देती हैं।
4. परिवार के व्यय में वृद्धि हो जाती है।
5. विधवाओं की संख्या में वृद्धि।
6. घर में स्थानाभाव रहने के कारण परिवार के सदस्यों में तनाव पाया जाता है।

(b) बहुपति विवाह– बहुपति विवाह, विवाह का वह स्वरूप है जिसमें एक ही स्त्री के एक ही समय में अनेक पति होते हैं। यह मध्यप्रदेश के ओरांब, नीलगिरी के टोडा, जौनसार बाबर की खस जनजाति में पायी जाती है।

बहुपति विवाह के प्रकार

(i) भ्राता सम्बन्धी बहुपति विवाह– इस प्रकार के विवाहों में स्त्री के सब पति भाई-भाई होते हैं। 'खस' जनजाति में जब एक भाई शादी करता है तो उसकी पत्नी उसके सब छोटे भाईयों की पत्नी हो जाती है। यदि छोटे भाई बच्चे होते हैं तो किशोरावस्था प्राप्त करते ही उस स्त्री के पति बन जाते हैं। भ्राता सम्बन्धी बहुपति विवाह में जब स्त्री गर्भवती होती है तो एक भाई उस स्त्री को 'धनुष भेंट करने की' धार्मिक क्रिया करता है। यह क्रिया उस भाई को होने वाले बालक का पिता बना देती है। जौनसार बाबर में यह प्रथा विशेष रूप से प्रचलित है।

(ii) अभ्राता सम्बन्धी बहुपति विवाह– नायर जनजातियों में पतियों का आपस में भाई होना अनिवार्य नहीं होता। मलाबार, कोचिन में बहुपति विवाह दूसरे लोगों के सदस्यों के साथ भी होते हैं। जब पत्नी एक पति के पास होती है उस समय तक उस पर किसी भी दूसरे पति का अधिकार नहीं होता। इस प्रकार की प्रथा में उत्तरदायी पिता का अभाव रहता है।

बहुपति विवाह के कारण

1. इसका प्रमुख कारण पुरुषों के अनुपात में स्त्रियों की संख्या बहुत कम होना है।
2. अनेक समूह प्राकृतिक संघर्षों के कारण अपने परिवार को छोटा रखना चाहते हैं और इसलिये मिलकर एक स्त्री से विवाह कर लेते हैं।
3. जनसंख्या को सीमित रखने की दृष्टि से भी बहुपति विवाह होता है।
4. इस प्रथा के आधार में कुछ आर्थिक कारण हैं। जौनसार बाबर में सब भाई अलग-अलग विवाह करें तो उनकी भूमि बँटती चली जायेगी पर इस प्रथा के कारण उनका आर्थिक ढाँचा बना रहता है।

5. प्रत्येक व्यक्ति पत्नी मूल्य देने में असमर्थ रहता है। ऐसी दशा में अनेक पुरुष मिलकर एक स्त्री का मूल्य चुकाकर उससे विवाह कर लेते हैं।

बहुपति विवाह के लाभ

1. पैतृक सम्पत्ति का विभाजन नहीं होता।
2. जनसंख्या सीमित रहती है।
3. परिवार का आर्थिक-स्तर ऊँचा रहता है।
4. स्त्री को परिवार में सम्मानित पद मिलता है।

बहुपति विवाह से हानियाँ

1. स्त्रियों का स्वास्थ्य गिर जाता है।
2. समूह में अनैतिकता में वृद्धि हो जाती है।
3. पुरुष के मध्य सदैव संघर्ष बने रहते हैं।
4. लड़कियों की अपेक्षा लड़कों का अधिक जन्म होता है।

(C) समूह या यूथ-विवाह– जब एक परिवार की समस्त बहिनों का विवाह दूसरे परिवार के समस्त भाईयों के साथ होता है या जब एक समूह के सब पुरुष दूसरे समूह की सब स्त्रियों से विवाह करें तो उसे समूह विवाह कहते हैं।

प्रश्न–5. भारतीय आदिवासी समाज के कुछ विवाह सम्बन्धी निषेधों का वर्णन कीजिये एवं उन निषेधों के सामाजिक महत्व को स्पष्ट कीजिये।

अथवा

जनजातियों में पाये जाने वाले विवाह सम्बन्धी विभिन्न प्रकारों के निषेधों का वर्णन कीजिये।

उत्तर– प्रत्येक समाज में विवाह सम्बन्धी कुछ निषेध पाये जाते हैं। भारतीय जनजातियों में निम्नलिखित निषेध पाये जाते हैं–

1. **निषिद्ध अगम्यागमन या निकटाभिगमन–** विश्व के सभी समाजों में यह व्यवस्था है कि अति निकट के सम्बन्धियों से विवाह अथवा यौन-सम्बन्ध स्थापित न किये जायें। इस व्यवस्था को निषिद्ध अगम्यागमन या निकटाभिगमन कहते हैं। लगभग सभी जगह पिता और पुत्री में, माँ और बेटे में तथा सगे भाई-बहिन में विवाह निषिद्ध ठहराये गये हैं किन्तु कहीं-कहीं अपवाद भी पाया जाता है। पेरू देश में इन्का तथा हवाई प्रायद्वीप में निकट सम्बन्धियों में विवाह किया जाता है। ये लोग रक्त की शुद्धता बनाये रखने के लिये भाई-बहिन में विवाह सम्बन्ध को अनिवार्य मानते हैं। इस प्रकार के विवाह की आज्ञा सब लोगों को नहीं होती।

निकटाभिगमन निषेध के कारण– निकटाभिगमन निषेध के निम्नलिखित कारण हैं–

1. **आकर्षण का अभाव–** रिजले का विचार है कि निकटाभिगमन पर निषेध का कारण यह है कि अति निकट के सम्बन्धियों में एक-दूसरे के प्रति यौन आकर्षण नहीं होगा। परन्तु यह तर्क उचित प्रतीत नहीं होता क्योंकि अधिक निकट रहने पर ये दो व्यक्तियों में अधिक घनिष्ठता और प्रेम रहता है।
2. **जीव-शास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक कारण–** जीवशास्त्रीय सिद्धान्त के अनुसार एक रक्त के निकट सम्बन्धी में विवाह होने से सन्तान निर्बल और बलिष्ट नहीं होती।
3. **पारिवारिक शान्ति हेतु– मैतिनोवस्की** का विचार है कि निषेध प्रथा परिवार में शान्ति बनाये रखने के लिये प्रारम्भ हुई।

4. **नैतिक आदर्श स्थापित करने के लिये–** परिवार की सुख–सम्पन्नता का आधार वे नैतिक आदर्श होते हैं जिनको सामने रख कर सदस्यगण मर्यादाओं में रहते हैं। निषेध नैतिक उन्नति में सहायता प्रदान करते हैं।

2. **अन्तर्विवाह के नियम– फालसम** के शब्दों में, "अन्तर्विवाह वह नियम है जिनके अनुसार व्यक्ति को अपनी ही जाति या समूह में विवाह करना पड़ेगा, पर यह निकट के रक्त सम्बन्धियों में विवाह की आज्ञा नहीं देता है।" स्पष्ट है कि अन्तर्विवाह का अर्थ समूह के अन्दर विवाह से होता है।

भारतीय जनजातियों में अन्तर्विवाह– भारतीय जनजातियों में इस प्रकार का विवाह प्राय: भोड़ा, भील, कोरवा, आदि में पाया जाता है। टोडा जनजाति में दो गोत्रों– तारथोराम तथा तिनालियन में अन्तर्विवाह की प्रथा प्रचलित है। परन्तु उनके उप गोत्र– अपने गोत्र के बाहर विवाह करते हैं। भीलों में दो प्रकार के गोत्र हैं– उजले भील और मैले भील जो कि उपगोत्र के बाहर तथा गोत्र के अन्दर विवाह करते हैं।

अन्तर्विवाह के कारण

1. लोग अपरिचित व्यक्तियों से दूर रहना चाहते हैं।
2. अपनी जादू आदि की क्रियाओं को छिपाना चाहते हैं।
3. रक्त की पवित्रता को बनाये रखना चाहते हैं।
4. जनजातियों में यह इच्छा होती है कि वे अपनी संस्कृति को बाह्य वातावरण से बचा कर रखें।
5. अन्तर्विवाही जनजातियाँ अपनी भूमि तथा सम्पत्ति समूह में ही रखना चाहती हैं।

3. **बहिर्विवाह–** बहिर्विवाह के अनुसार एक व्यक्ति को जो विवाह किसी समूह या वर्ग के बाहर करना पड़ता है। हॉबल के अनुसार, "सामाजिक कानून द्वारा एक व्यक्ति उस समूह में विवाह नहीं कर सकता जिसका कि वह सदस्य है।" जनजातियों में अधिकांशत: गोत्र और टोटम समूह के अन्दर विवाह नहीं होता। बहिर्विवाह की प्रथा का प्रचलन हो, बैगा, कोरवा, गोंड, खास आदि जनजातियों में प्रचलित है। ये सभी जनजातियाँ ग्राम बहिर्विवाह के नियम को मानती हैं। आसाम के नागा, दक्षिण भारत के इरूला, मध्यप्रदेश के टोडा भी बहिर्विवाह के नियमों को मानते हैं।

बहिर्विवाह के कारण

1. गोत्र एवं टोटम की धारणायें बहिर्विवाह का प्रमुख कारण हैं।
2. व्यक्ति नवीनता चाहता है। वह अपने कबीले की स्त्रियों से विवाह करने की अपेक्षा बाह्य समूह की स्त्रियों से विवाह करना चाहता है।
3. बहिर्विवाह का एक कारण यह भी है कि संकट के समय उन्हें दूसरे समूह से सहायता मिल सकती है।
4. निकट सम्बन्धियों के बीच विवाह होते तो उनके दोष उनकी सन्तानों में उभरते चले जाते हैं।
5. निकट सम्बन्धियों के बीच विवाह होने से मनुष्य के चरित्र–हीन होने का भय रहता है।

प्रश्न–6. नातेदारी किसे कहते हैं? आदिम समाज में नातेदारी व्यवस्था पर एक लेख लिखिये।

अथवा

जनजातीय समाज में नातेदारी व्यवस्था की विवेचना कीजिये।

अथवा

नातेदारी की व्याख्या कीजिये। इसकी श्रेणियां लिखिये।

अथवा

नातेदारी सूचक शब्दावली अथवा सम्बन्ध सूचक संज्ञायें बताइये।

उत्तर– नातेदारी का अर्थ एवं परिभाषा– सामाजिक मानव समाज में अकेला नहीं होता। जन्म से लेकर मृत्यु तक वह अनेक व्यक्तियों से घिरा होता है अर्थात् उसका सम्बन्ध एकाधिक व्यक्तियों से होता है परन्तु इनमें से सबसे महत्वपूर्ण सम्बन्ध उन व्यक्तियों के साथ होता है जो कि विवाह बन्धन और रक्त–सम्बन्ध के आधार पर सम्बन्धित हैं। इस प्रकार सामाजिक अन्त:क्रिया के फलस्वरूप जो विशिष्ट तथा समाज द्वारा मान्यता प्राप्त सुव्यवस्थित सम्बन्ध–श्रृंखला एक सामाजिक प्राणी को अन्य व्यक्तियों के साथ संयुक्त करती है उसे नातेदारी व्यवस्था कहते हैं।

परिभाषायें

(1) चार्ल्स विनिक ने मानवशास्त्रीय शब्दकोष में नातेदारी व्यवस्था को निम्न शब्दों में परिभाषित किया गया है– "नातेदारी व्यवस्था में समाज द्वारा मान्यता प्राप्त वे सम्बन्ध आ सकते हैं जो कि अनुमानित और रक्त सम्बन्धों पर आधारित हों।"

(2) रेडक्लिफ ब्राउन के विचार में– "नातेदारी सामाजिक उद्देश्यों के लिये स्वीकृत वंश सम्बन्ध है और यह सामाजिक सम्बन्धों के प्रथागत स्वरूप का आधार है।"

(3) मजूमदार और मदान के मतानुसार– "सभी समाजों में मनुष्य विभिन्न वैयक्तिक समूहों में विभिन्न सम्बन्धों से बंधे रहते हैं। इन सम्बन्धों में सबसे अधिक सार्वभौमिक और आधारभूत सम्बन्ध वह है जो सन्तानोत्पत्ति पर निर्भर है। संतान उत्पन्न करने की इच्छा नैसर्गिक है और नातेदारी कहलाती है।"

समाज द्वारा मान्यता प्राप्त इन सम्बन्धों का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत होता है, इसलिये सम्बन्ध की निकटता, घनिष्ठता, आत्मीयता आदि के आधार पर इन नाते–रिश्तेदारों को कई श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है।

नातेदारी की विशेषतायें– उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर नातेदारी की कुछ विशेषतायें उभर कर सामने आती हैं। ये निम्नलिखित हैं–

(1) नातेदारी सम्बन्ध सूचक शब्दों का विकास परिवार के स्थायित्व के साथ आरम्भ होता है।

(2) नातेदारी के सम्बन्ध समाज द्वारा मान्यता प्राप्त होते हैं।

(3) नातेदारी सम्बन्धों में पिता और माता के सगे सम्बन्धी ही आते हैं। जैसे– ताऊ, चाचा, फूफा, मौसा–मौसी, साली–साले आदि।

(4) नातेदारी सम्बन्धों में रक्त सम्बन्ध का होना भी कभी–कभी जरूरी नहीं होता है जैसे एक बच्चा जिसे गोद लिया गया हो। गोद लेने वाले व्यक्ति का बालक रक्त सम्बन्धी वारिस बन जाता है। समाज भी इस प्रकार के सम्बन्ध को मान्यता देता है।

(5) सभ्यता के आरम्भ में वर्ग सूचक शब्द थे जिनसे निश्चित सम्बन्ध ज्ञात नहीं होते थे।

(6) नातेदारी सम्बन्धों में दो तरह के सम्बन्ध होते हैं। एक रक्त सम्बन्ध जैसे– भाई–बहन, चाचा, ताऊ, दादा और दूसरे विवाह के द्वारा जो सम्बन्ध लड़के वालों के बहू के परिवार से जुड़ते हैं जैसे– सास, ससुर, साले–साली, मौसी–मौसा।

(7) नातेदारी सम्बन्ध सार्वभौमिक हैं। विश्व के समस्त देशों में यह सम्बन्ध पाये जाते हैं भले ही सम्बन्ध–सूचक शब्द भिन्न–भिन्न हों।

नातेदारी के प्रकार या रूप व स्वरूप– नातेदारी के निम्न दो प्रकार हैं–

(1) विवाह सम्बन्धी नातेदारी। (2) रक्त सम्बन्धी नातेदारी।

(1) विवाह सम्बन्धी नातेदारी– यह सम्बन्ध विवाह पर आधारित हैं। यह सम्बन्ध उन दो परिवार के मध्य स्थापित होते हैं जिनके मध्य विवाह सम्बन्ध स्थापित होते हैं। विवाह के द्वारा एक व्यक्ति का सम्बन्ध पत्नी के माता–पिता, भाई–बहन आदि से जुड़ जाता है। इसी प्रकार लड़की पक्ष के व्यक्ति भी लड़के पक्ष के निकट सम्बन्धियों से जुड़ जाते हैं। लड़के व लड़की के परिवार चाचा, ताऊ, जेठानी, दादा–दादी, ननद, सास–ससुर आदि परस्पर सम्बन्धी बन जाते हैं। ये परस्पर रक्त सम्बन्धी होते हुये भी सामाजिक मान्यता प्राप्त परस्पर निकट सम्बन्धी होते हैं। सामाजिक दृष्टि से यह महत्वपूर्ण सम्बन्ध है।

(2) रक्त सम्बन्धी नातेदारी– यह सम्बन्ध रक्त पर आधारित है। इस वर्ग में वे सभी व्यक्ति आते हैं जो किसी न किसी रूप में रक्त से जुड़े हुये हैं भले ही वे बहुत निकट के सम्बन्धी न हों फिर भी वे रक्त सम्बन्धी कहलाते हैं। उदाहरण के लिये माता–पिता,भाई–बहन और पत्नी के भाई–बहन परस्पर रक्त सम्बन्धी हैं। ये रक्त सम्बन्धी नातेदार हैं। वे व्यक्ति भी परस्पर रक्त सम्बन्धी हैं जो इन सम्बन्धों से जुड़े हुये हैं उदाहरण के लिये लड़के के दादा, दादी, ताऊ, चाचा, फूफी रक्त सम्बन्धी हैं। तोड़ा जनजाति में यह प्रथा प्रचलित है कि सभी भाईयों की एक पत्नी होती है और किसी भी भाई को बच्चे के पिता बनने के लिये निश्चित और निर्धारित प्रथाओं का पालन करना पड़ता है तभी वे बच्चे के पिता कहलाते हैं। इस तरह जनजातियों में समान रक्त सम्बन्ध के होते हुये भी व्यक्ति को सामाजिक मान्यताओं को पूर्ण करना होता है।

नातेदारी की विभिन्न श्रेणियाँ– नातेदारी का जाल काफी व्यापक और विशाल है। रक्त से जुड़े हुये सामाजिक सम्बन्धों की अपनी मान्यतायें हैं। रक्त से जहाँ व्यक्तियों में नातेदारी है वहीं विवाह के माध्यम से नातेदारी में व्यापकता आती है। इन सम्बन्धों को हम अनेक श्रेणियों में विभाजित कर सकते हैं–

(1) प्राथमिक नातेदारी– समाज में सभी व्यक्तियों से न तो निकट का सम्बन्ध होता है और न प्रत्यक्ष ही परन्तु कुछ सम्बन्ध ऐसे होते हैं जिनसे स्वतः और स्वभावतः निकट सम्बन्ध स्थापित हो जाते हैं। इन सम्बन्धों को स्थापित करने में व्यक्ति को प्रयास नहीं करना पड़ता। इस प्रकार के सम्बन्ध प्रथम कोटि के कहे जाते हैं। जैसे– माता–पिता, भाई–बहन, पति–पत्नी आदि। ये सम्बन्ध इस तथ्य के उदाहरण हैं कि इन सम्बन्धों की स्थापना में किसी प्रकार के माध्यम की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

(2) द्वितीयक नातेदारी– इस श्रेणी में वे सम्बन्ध आते हैं जो प्राथमिक नातेदारी के प्राथमिक सम्बन्धी हैं वे द्वितीय नातेदारी के वर्ग में आते हैं। हमारा सम्बन्ध जब किसी व्यक्ति के माध्यम से स्थापित होता है तो द्वितीयक नातेदारी के सम्बन्ध स्थापित होते हैं। जैसे हमारा और हमारे पिता के भाई का सम्बन्ध प्रत्यक्ष है यह प्रथम श्रेणी में आते हैं किन्तु हमारा और हमारे पिता के भाई के मध्य जो सम्बन्ध है वह द्वितीय कोटि का है क्योंकि यह सम्बन्ध पिता के माध्यम से स्थापित हुआ है। इसी प्रकार पति और पत्नी के भाई का सम्बन्ध भी द्वितीय श्रेणी का कहलायेगा। बल्कि पत्नी के सभी प्राथमिक सम्बन्धी पति के लिये द्वितीय नातेदार माने जाते हैं। मरडाक ने द्वितीय सम्बन्धों की श्रेणियाँ 33 बतायी हैं।

(3) तृतीय नातेदारी– तृतीय श्रेणी के सम्बन्धों में वे संबंध आते हैं जिसमें हमारा सम्बन्ध द्वितीय श्रेणी का है उनके साथ जिनके सम्बन्ध प्रथम कोटि के हैं। उदाहरण के लिये पति और पत्नी के भाई के साथ संबंध हैं। पत्नी के भाई (साले) के साथ हमारा द्वितीय सम्बन्ध है और साले या पत्नी के भाई के बच्चों के साथ पति का सम्बन्ध तृतीय श्रेणी का हो जाता है। इस तरह द्वितीयक सम्बन्धों के प्राथमिक संबंधी प्रथम श्रेणी के नातेदारों के तृतीयक नातेदार बन जाते हैं। इसी प्रकार माता–पिता के सभी भाई–बहन हमारे लिये द्वितीय नातेदार होंगे परन्तु बच्चे हमारे तृतीय नातेदार संबंधी में आयेंगे।

उपर्युक्त नातेदारी की श्रेणियों से यह स्पष्ट होता है कि ज्यों–ज्यों हम प्रथम श्रेणी के सम्बन्धों से द्वितीय और तृतीय श्रेणी के सम्बन्धों की ओर अग्रसर होते हैं त्यों–त्यों सम्बन्धों का क्षेत्र व्यापक और विशाल होता जाता है। इससे सम्बन्धों की संख्या में निरन्तर वृद्धि होती जाती है।

नातेदार–सूचक शब्दावली या सम्बन्ध संज्ञायें– नातेदारी सूचक शब्द ऐसी संज्ञायें होती हैं जिनका प्रयोग विभिन्न प्रकार के नातेदारों को सम्बन्धित करने के लिये किया जाता है। हम अलग–अलग व्यक्तियों से अपना सम्बन्ध प्रकट करने के लिये अलग–अलग शब्दों का प्रयोग करते हैं। मार्गन ने नातेदारी तन्त्रों को समझने के लिये शब्दावली के अध्ययन को राजमार्ग के रूप में बतलाया है। मार्गन ने नातेदारी को सूचित करने वाले शब्दों को दो भागों में विभाजित किया है–

1. **वर्ग सूचक सम्बन्ध संज्ञायें–** इसके अन्तर्गत अनेक नाते रिश्तेदारों को एक ही श्रेणी में शामिल कर लिया जाता है। इन सबको प्रायः एक ही शब्द से सम्बोधित किया जाता है। ये वे शब्द हैं जिनसे विभिन्न सम्बन्धों का ठीक ज्ञान नहीं हो पाता है। उनसे केवल इतना पता चलता है कि वे सम्बन्ध आस–पास के हैं। उदाहरणार्थ सगी बहिन, चचेरी बहिन, ममेरी, मौसेरी बहिन आदि सबको 'बहिन' कहा जाता है। इस तरह बहिनों की एक अलग श्रेणी व अलग वर्ग बन जाता है।

2. **वर्णनात्मक सम्बन्ध संज्ञायें–** जब किसी नातेदारी के एक शब्द से ही विशिष्ट नातेदार का अर्थ स्पष्ट हो जाता है तो वह शब्द विशिष्ट सम्बन्ध संज्ञा और उस परं आधारित नातेदारी विशिष्ट नातेदारी व्यवस्था कहलाती है। हिन्दू समाज में माता शब्द का प्रयोग एक ही व्यक्ति के लिये प्रयुक्त किया जाता है। पुत्र, पुत्री, भाई आदि इसी कोटि की संज्ञायें हैं।

प्रश्न–7. जनजातिय समाज में नातेदारी व्यवस्था के महत्व का विश्लेषण कीजिये।

उत्तर– नातेदारी व्यवस्था का महत्व– सामाजिक मानवशास्त्र में नातेदारी शब्दावली का विशेष महत्व है। जनजातीय समाज के सदस्यों के व्यवहार, सामूहिक अवधारणा, नैतिक आचरण तथा आर्थिक संरचना के अन्तर्गत किये गये कार्य–कलापों को समझने के लिये नातेदारी व्यवस्था के अध्ययन का विशेष महत्व है। लेवीट्रास, मार्गन, रेडक्लिफ ब्राउन, मैलिनोवस्की, प्रिचार्ड, मरडॉक आदि मानवशास्त्रियों ने इसीलिये जनजातीय नातेदारी के अध्ययन को प्राथमिकता दी है। नातेदारी व्यवस्था के महत्व को हम निम्नलिखित रूप से स्पष्ट कर सकते हैं–

1. **विवाह तथा परिवार के क्षेत्र में महत्व–** प्रत्येक समाज में विवाह का स्वरूप उस समाज की सांस्कृतिक विशेषताओं द्वारा निर्धारित होता है। व्यक्ति कितने विवाह कर सकता है? किस पद्धति से करे? कौन से विवाह समाज द्वारा मान्य हैं और कौन से अमान्य? आदि प्रश्नों के उत्तर नातेदारी व्यवस्था में ही ढूँढ़े जा सकते हैं। किसी भी परिवार में प्रायः दो प्रकार के सदस्य पाये जाते हैं। एक वे जो रक्त–आधार पर जुड़े होते हैं और दूसरे वे जो वैवाहिक सम्बन्धों के कारण अस्तित्व रखते हैं। सामाजिक मानवशास्त्र की सैद्धान्तिक दृष्टि में इन दोनों ही प्रकार के सदस्यों में आपस में नातेदारी होती है।
2. **यौन सम्बन्धों को व्यवस्थित करना–** यौन सन्तुष्टि मानव की प्रमुख आवश्यकताओं में से एक है। नातेदारी व्यवस्था न हो तो इन सम्बन्धों को परिसीमित करना बहुत कठिन हो जाये। नातेदारी के निषेध नियमों का महत्वपूर्ण कार्य यौन सम्बन्धों को नियंत्रित करना है।
3. **वंश उत्तराधिकारी एवं पदाधिकारी का निर्णय–** सभी सभ्य समाजों में कुल–प्रतिष्ठा का विशेष महत्व होता है। नातेदारी व्यवस्था वंशावली निर्धारित करती है तथा बताती है कि परिवार या कुल की सम्पत्ति का कौन दावेदार हो सकता है? मातृवंशीय तथा पितृवंशीय परिवारों में उत्तराधिकार के भिन्न–भिन्न सामाजिक नियम होते हैं।
4. **उत्तरदायित्व एवं सहयोग को प्रोत्साहन–** नातेदारी व्यवस्था समूह के सदस्यों में सहयोग, उत्तरदायित्व एवं श्रम–विभाजन की भावना जागृत करती है। नातेदारी व्यवस्था समूह या परिवार के सदस्यों के कर्त्तव्यों का निर्धारण कर श्रम–विभाजन के सिद्धान्त को लागू करती है। नातेदारी में बँधकर सदस्य को अपने पद का दायित्व निभाना पड़ता है।
5. **पारिवारिक शान्ति हेतु–** परिवार में सास, ससुर, पुत्र, पुत्र–वधू, भाई–बहिन, पति–पत्नी आदि के रिश्ते नजदीकी के और घनिष्टता के होते हैं। नातेदारी व्यवस्था में परिवार के उन सदस्यों को जिनमें संघर्ष उत्पन्न हो सकता है किसी सीमा तक पृथक-पृथक रखने का प्रावधान रहता है। ससुर और पुत्र–वधू तथा सास और दामाद को यथासम्भव अलग–अलग रखा जाता है ताकि पारिवारिक सम्बन्ध मधुर बने रहें।
6. **समानता और स्नेह सम्बन्धों को प्रगाढ़ बनाने के लिये–** नातेदारी व्यवस्था समानता के भाव का संचार करती है और एक–दूसरे के प्रेम–सम्बन्धों में मधुरता लाने में सहायक होती है।

7. **मानव को सामाजिक प्राणी बनाती है–** जन्म के समय बालक न तो सामाजिक होता है और न असामाजिक। नातेदारी के अन्य सदस्यों के साथ रहते हुये धीरे–धीरे उसको सामाजिक सम्बन्धों का ज्ञान होने लगता है। नातेदारी की रीतियों, प्रथाओं, मान्यताओं और विश्वासों के अनुरूप वह स्वयं को ढालने लगता है। समाजीकरण की यह प्रक्रिया नातेदारी व्यवस्था के माध्यम से ही होती है।
8. **सुरक्षा–** समाज में रहते हुये व्यक्ति अनेक संस्थाओं का सदस्य बन जाता है। उसकी अनेक आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती है किन्तु उसे सुरक्षा की गारण्टी जितनी नातेदारी में मिलती है उतनी और कहीं नहीं मिलती।

प्रश्न–8. भारतीय जनजातियों में जीवन साथी चुनाव की विधियों का वर्णन कीजिये।

अथवा

जीवन साथी चुनने के जन–जातीय तरीकों पर प्रकाश डालिये।

अथवा

जनजातीय समाज में जीवन–साथी प्राप्त करने के विभिन्न तरीके कौन से हैं? समुचित उदाहरण दीजिये।

अथवा

जनजातीय विवाह से आप क्या समझते हैं? जन–जातियों में पाये जाने वाले विवाह के विभिन्न स्वरूपों का वर्णन कीजिये।

अथवा

जनजातियों में पाये जाने वाले विवाहों का उल्लेख कीजिये।

उत्तर– जनजातिय विवाह से तात्पर्य– परिवार बसाने हेतु दो या अधिक स्त्री–पुरुष में आवश्यक संबंध स्थापित करने और उसे स्थिर रखने को कोई न कोई संस्थात्मक–व्यवस्था प्रत्येक समाज में पायी जाती है। इसी प्रकार की व्यवस्थायें जन–जातियों में भी पायी जाती हैं। जन–जातीय समाज में विवाह का उद्देश्य केवल यौन–संबंधी इच्छाओं की पूर्ति ही नहीं बल्कि अनेक आर्थिक, सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना भी है।

जन–जातीय परिवार की परिभाषा– डॉ. मजूमदार के अनुसार, 'एक जनजातीय परिवारों या परिवार के समूहों का संकलन होता है जिसका एक सामान्य नाम होता है जिसके सदस्य एक निश्चित भू–भाग पर रहते हैं, एक भाषा बोलते हैं और विवाह, व्यवसाय या उद्योग के विषय में कुछ सामान्य निषेधों का पालन करते हैं और एक निश्चित एवं उपयोगी परस्पर आदान–प्रदान की व्यवस्था का विकास करते हैं।'

गिलन के शब्दों में, 'स्थानीय आदिम–समूहों के किसी भी संग्रह–समूहों को जो एक सामान्य क्षेत्र में रहता हो, एक सामान्य भाषा बोलता हो और एक सामान्य संस्कृति का अनुकरण करता हो एक–जनजाति कहते हैं।'

जन–जातियों में विवाह के स्वरूप जनजातियों में विवाह के निम्नलिखित स्वरूप पाये जाते हैं–

(1) **एक विवाह–** जिन जनजातियों में सामान्य रूप से स्त्री और पुरुष का अनुपात बराबर होता है वहाँ एक विवाह–प्रथा पायी जाती है। एक विवाह एक पुरुष एवं एक स्त्री का संघ है। एक विवाह, विवाह का वह स्वरूप है जिसे सभी जातियों व समाजों ने एकमत से स्वीकृत किया है।

(2) **अपहरण विवाह–** कुछ समुदायों में जैसे मैदानों में रहने वाली रेड इन्डियन जातियों में विरोधी कबीलों से बलपूर्वक स्त्रियाँ लाने की प्रथा है। अधिकतर समुदायों में बलपूर्वक विवाह वास्तविक न होकर केवल नाटकीय होता है। होज जनजाति में जब एक लड़का एक लड़की से विवाह करना चाहता है तो वह लड़की के माता–पिता तथा अपने सम्बन्धियों को इसकी सूचना देता है। यदि लड़की के माता–पिता इसको अस्वीकृत करते हैं तो लड़का अपने सम्बन्धियों को लेकर नाटकीय ढंग से अपनी प्रेमिका का बलपूर्वक हरण करके ले जाता है। कोरयाक जनजाति में वधू अपने कुछ मित्रों के साथ मिलकर वरपक्ष के रास्ते में रूकावटें डालती हैं, जिससे कभी–कभी वरपक्ष को मार सहनी पड़ती है। यह सब रिवाज और परम्परायें बलपूर्वक विवाह के अवशेष हैं। भील जनजाति इस प्रथा को मानती हैं।

(3) **क्रय विवाह–** आदिकालीन समाजों में पत्नी खरीदने की प्रथा प्रचलित है। यह आवश्यक नहीं कि पत्नी का मूल्य सिक्कों में ही दिया जाये। कुछ समाजों में वधू–मूल्य जानवरों के सिरों अथवा अन्य वस्तुओं के रूप में दिया जाता है। छोटा नागपुर के मुण्डा वधू–मूल्य सिक्कों में देते हैं। 'होज' सिक्कों और जानवरों दोनों में तथा धन के अभाव में कबीले के अन्य सदस्यों से धन इकट्ठा कर लेते हैं। यह कन्या को खरीदने का दाम मात्र नहीं है; यह स्त्री की उपयोगिता का प्रतीक है।

(4) **सेवा विवाह–** गोण्ड और बैंगा लोगों में जो पुरुष कन्या के पिता को वधू–मूल्य देने में असमर्थ होते हैं, वे कन्या के पिता के यहाँ नौकर के रूप में कार्य करते हैं। गोण्ड ऐसे व्यक्ति को 'लमनई' और 'लमसेना' कहते हैं। अपने भावी श्वसुर के घर में 'लमसेना' को बड़ा कठोर परिश्रम करना पड़ता है। कड़ी मेहनत के बाद यदि वह अपने श्वसुर को संतुष्ट कर देता है तो ससुर अपनी कन्या का विवाह 'लमसेना' से कर देता है, अन्यथा उसे भगाकर नया लमसेना रख लेता है।

(5) **विनिमय द्वारा विवाह–** इसका उद्देश्य भी कन्या मूल की बुराई से बचना है। इसे अदला–बदला भी कहा जाता है। क्योंकि इसमें जब एक पुरुष का लड़का दूसरे पुरुष की लड़की से विवाह करता है तो इसके बदले में दूसरे पुरुष का लड़का पहले पुरुष की लड़की से विवाह करता है। पंजाब में इसे बट्टा–सट्टा कहा जाता है।

(6) **परीक्षा विवाह–** अनेक आदिकालीन समुदायों में विवाह से पहले वर को अपने बल और पौरुष का परिचय देना होता है। ब्रिटिश गिनी की अरावाक जाति में विवाह के लिये उम्मीदवार को अपनी तीरंदाजी का सबूत देना होता है। उसे एक चलती हुई नाव से एक विशेष चिड़िया के घोंसले में तीर मारना होता है। इसके अतिरिक्त उसे एक निश्चित किये समय में एक खेत के अनाज को काटने आदि का भी प्रदर्शन देना होता है। भीलों में गोल गाधेड़ के द्वारा यह विवाह होता है।

(7) **परिवीक्षा विवाह–** इस विवाह–व्यवस्था के अनुसार लड़का और लड़की दोनों एक–दूसरे के साथ अनेक दिनों तक रहते हैं। इस अवधि में वे एक–दूसरे के स्वभाव का परिचय प्राप्त करते हैं। यदि वे इस परिवीक्षा की अवधि के पश्चात् विवाह का निश्चय करते हैं तो उनका पाणिग्रहण हो जाता है। यदि उनका स्वभाव एक–दूसरे के अनुकूल नहीं होता तो वे

अलग हो जाते हैं और युवक कन्या के माता–पिता को कुछ हर्जाना प्रदान करता है। यह प्रथा भारत में दारलुंग और कूकी जनजातियों में देखने को मिलती है।

(8) **पलायन विवाह–** इसे राजी–खुशी अर्थात् वर–वधू की सहमति से होने वाला विवाह कहते हैं। इसमें एक–दूसरे से प्रेम करने वाले युवक–युवती माता–पिता द्वारा उनके विवाह का विरोध होने पर गाँव से भाग जाते हैं और उस समय तक वापिस नहीं लौटते जब तक कि उनके माता–पिता इस विवाह से सहमत न हो जायें।

(9) **हठ–विवाह–** इस प्रकार का विवाह बिरहोरा तथा ओरांव जनजातियों में पाया जाता है। ओरांव इसे विर्वोलोक कहते हैं। चूँकि इसमें लड़की अपने प्रेमी के घर में बलपूर्वक प्रवेश करती है, और उससे विवाह करने का प्रयत्न करती है। अतः विवाह को 'बलत्प्रेवेश' विवाह कहते हैं। चूँकि इसमें प्रारम्भ में लड़की को ससुराल में बड़ा अपमान तथा अनादर सहना पड़ता है। अतः यह 'अनादर' विवाह भी कहलाता है। युवक–युवती में प्रेम होने पर यदि किसी कारणवश उनका विवाह नहीं हो पाता और वे सह–पलायन में भी असमर्थ हैं या वर उनका अपहरण नहीं कर सकता तो लड़की के लिये एकमात्र मार्ग यही रह जाता है वह अपने प्रेमी के परिवार में बलपूर्वक प्रवेश करे। प्रवेश करने से पूर्व अपने माता–पिता को अपने संकल्प की सूचना देती है। वे अभीष्ट वर से कन्या का सम्बन्ध कराने का प्रयत्न करते हैं और यदि उनमें सफल नहीं होते तो कन्या को अपनी इच्छानुसार कार्य करने की अनुमति देते हैं। इस पर कन्या अपने प्रेमी के घर बलात् प्रवेश करती है और सास आदि के अत्याचारों को सहन करती है।

प्रश्न–9. जनजातीय स्त्रियों के आर्थिक जीवन का वर्णन कीजिए।

अथवा

जनजातीय स्त्रियों के आर्थिक जीवन पर एक लेख लिखिए।

उत्तर– यद्यपि भारत में आदिवासी जनसंख्या में अत्यधिक तीव्र रूप से वृद्धि हुई है परन्तु इनमें स्त्री–पुरुषों का स्वरूप एवं संतुलित अनुपात वर्तमान समय तक बना हुआ है। यद्यपि यह प्रश्न उठता है कि कब तक आदिवासी इस स्वस्थ एवं संतुलित लिंग अनुपात को बनाये रख सकेंगे। इस स्वस्थ लिंग अनुपात के लिए आदिवासी सामाजिक संरचना एवं संस्कृति को श्रेय देना होगा जो प्रकृति की गोद में स्वतंत्र रूप से विकसित हुई तथा जिसमें स्त्रियों को पुरुषों के समकक्ष प्रस्थिति प्रदान की गई तथा लैंगिक भेदभाव नहीं के बराबर रहा। किन्तु वर्तमान में ये प्राचीन जनजातीय मानदण्ड धूमिल होते जा रहे हैं तथा स्थिति धीरे–धीरे विपरीत बनती जा रही है।

इसके परिणामस्वरूप जनजातीय समाजों में जटिलताएँ एवं विरोधाभास दिखाई देने लगे हैं। यद्यपि यह बात सर्वत्र सामान्य रूप से लागू नहीं होती। कतिपय ऐसे जनजातीय समूह वर्तमान में भी दिखाई देते हैं जो स्त्रियों की उच्च सामाजिक प्रस्थिति के रूप से जाने जाते हैं। जैसे पूर्वोतर प्रदेश की कतिपय मातृवंशिक जनजातियाँ तथा अनेक वे जनजातीय समूह, जो वर्तमान में भी पृथकत्व में जी रहे हैं अथवा बाहरी सम्पर्क ने जिन्हें बहुत कम प्रभावित किया है, जो प्रकृति के अधिक निकट हैं, उनमें स्त्रियों की स्थिति सापेक्षिक रूप से अधिक अच्छी है। दूसरी ओर, बाहरी हस्तक्षेप, जनजातीय क्षेत्र में खनिजों का उद्भव, सांस्कृतिक सम्पर्क एवं अंधानुकरण की प्रवृत्ति के फलस्वरूप जनजातीय समाज में लैंगिक भेदभाव अधिक

है। इस प्रकार सांस्कृतिक सम्पर्क तथा आत्मसात्करण की प्रक्रिया ने जनजातीय समाज में स्त्रियों की स्थिति को प्रभावित किया है। इसके परिणामस्वरूप चाहे जनजातीय समाज में कितने ही सुधार क्यों न हुए हों परन्तु जहाँ तक स्त्रियों की स्थिति का प्रश्न है उसमें कोई विशेष सुधार नहीं हुआ है। इसके विपरीत सांस्कृतिक सम्पर्क जनजातीय समाजों को वृहत् भारतीय समाज, विशेष रूप से हिन्दी जातियों के निचले सोपानों के करीब लाया है। परिणामस्वरूप निम्न हिन्दू जातियों में स्त्रियों की स्थिति का जनजातीय समाज की स्त्रियों पर कुप्रभाव पड़ा है, जैसे– पर्दा प्रथा, बाल विवाह, दहेज प्रथा, छुआछूत आदि सामाजिक कुरीतियाँ उत्पन्न हुई हैं। इस प्रकार परसंस्कृतिधरण एवं आत्मसात्करण की प्रक्रिया ने जनजातीय समाजों में स्त्रियों की प्रस्थिति को पर्याप्त सीमा तक नकारात्मक रूप से प्रभावित किया है।

जनजातीय समाज में स्त्रियों का आर्थिक जीवन– रिजवी के अनुसार, मानवशास्त्रियों ने जनजातीय समाजों में स्त्रियों की आर्थिक जीवन में भूमिका विषय पर बहुत कम ध्यान केन्द्रित किया है। जनजातीय अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित प्राप्य अध्ययनों में स्त्री–पुरुषों के मध्य श्रम–विभाजन को ही प्रमुख रूप से वर्णित किया गया है। वास्तव में जनजातीय अर्थव्यवस्था मूलरूप से प्रकृति–केन्द्रित रही है। उत्पादन सम्बन्धी समस्त प्रकार्य नातेदारी व्यवस्था, गोत्र, मातृ–समूहों अथवा परिवारों के मध्य सम्बन्धों द्वारा शासित एवं निर्धारित होते हैं। उत्पादन प्राकृतिक संसाधनों एवं अन्य साधनों के शोषण पर आधारित रहा है।

प्रश्न– 10. 'जनजातीय स्त्रियाँ आर्थिक क्षेत्र में पर्याप्त भूमिका का निर्वाह करती हैं।' व्याख्या कीजिए।

अथवा

जनजातीय समाज की स्त्रियों का अर्थव्यवस्था में क्या योगदान है? वर्णन कीजए।

अथवा

भारत के जनजातीय समाज की स्त्रियों का अर्थव्यवस्था में योगदान पर एक लेख लिखिए।

उत्तर– वर्तमान समय में भारत में लगभग 90 प्रतिशत आदिवासी कृषि–कार्यों में व्यस्त हैं, चाहे वह स्थानान्तरण कृषि हो अथवा स्थायी कृषि। जनजाति के लोग कृषक श्रमिक से लेकर स्वयं की भूमि में कृषि–कार्य करते हैं। सभी स्तरों पर स्त्रियाँ महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। यद्यपि कृषि के क्षेत्र में स्त्री–पुरुषों के मध्य स्पष्ट रूप से श्रम–विभाजन विद्यमान है।

बीहड़ प्रदेशों में जैसे– पर्वतीय एवं पठारी क्षेत्र की अनुपजाऊ क्षेत्रों में रहने वाली जनजातियों में वन्य पशु–पक्षियों का शिकार जीवनयापन के एक प्राथमिक स्रोत के रूप में रहा है। यद्यपि यह कार्य पुरुषों के द्वारा ही सम्पन्न किया जाता था, सर्वत्र ही स्त्रियाँ इस कृत्य के लिए अयोग्य मानी गईं। न केवल भारत में अपितु विश्व के अनेक भागों में रहने वाली जनजातियों में आखेट (शिकार करना) एक अनुष्ठान के रूप में माना गया है। तथापि भोजन पकाने एवं बाजार में बेचने के लिए ईंधन का संग्रह आमतौर पर सर्वत्र ही स्त्रियों द्वारा किया जाता था। यद्यपि वनों के विनाश एवं सम्पदा पर सरकारी नियंत्रण के फलस्वरूप जनजातीय समाज की अर्थव्यवस्था नकारात्मक रूप से प्रभावित हुई है। ईंधन संग्रह का कार्य निरन्तर स्त्रियाँ ही करती आयी हैं। वर्तमान परिस्थितियों में वनों के पतन एवं सरकारी नियंत्रण के परिणामस्वरूप ईंधन संग्रह में अधिकाधिक समय लगने लगा है। इससे महिलाओं की स्थिति में

गिरावट आई है। अतः वे जनजातियाँ जो वनों पर अपना एकाधिकार मानती थीं तथा वन्य सम्पदा, जिनके जीवनयापन के प्रमुख साधन के रूप में थी, उनके समाजों में स्त्रियों की प्रस्थिति में नकारात्मक प्रभाव पड़ा।

जनजातीय हस्तशिल्प के क्षेत्र में स्त्रियों की भूमिका पर्याप्त महत्वपूर्ण रही है। इनके उपकरणों में कलात्मक अभिव्यक्ति के साथ–साथ एक अटूट विश्वास की झलक दिखायी देती है चाहे यह देवी–देवताओं के प्रति आस्था हो अथवा जादुई कृत्यों से सम्बद्ध अथवा उपयोगिता एवं सजावट का द्योतक हो। ये लोग अपनी कलात्मक एवं अन्य वस्तुओं का निर्माण आमतौर पर अपने समुदाय की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु करते हैं। कतिपय जनजातियों के लोग अपवाद के रूप में हैं जो अपने समुदाय की आवश्यकताओं की पूर्ति के पश्चात् बाह्य समाजों के साथ अपनी हस्तनिर्मित वस्तुओं का क्रय करते हैं। इस दिशा में आदिवासी स्त्रियाँ पर्याप्त महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। जैसे मणिपुर, त्रिपुरा, नागालैंड की जनजातियाँ एवं टोडा जनजाति में स्त्रियाँ रंग–बिरंगे वस्त्रों का निर्माण कर अपनी कलात्मक अभिरुचि का परिचय देती हैं। भोटान्तिक नारी अपने बाल्यकाल से ही कताई, बुनाई, दल–कालीन आदि वस्त्र निर्माण की कला अपनी माता एवं अन्य वरिष्ठ स्त्रियों के संरक्षण में सीखती हैं। यह कला ही उसके भावी जीवनसाथी के चयन में निर्णायक भूमिका अदा करती है। उदाहरण के तौर पर विवाह के अवसर पर लड़के पक्ष के लोग जब लड़की का चयन करने के लिए जाते थे तो उस अवसर पर लड़की द्वारा निर्मित वस्त्र ही उसकी योग्यता के परिचायक के रूप में माने जाते थे न कि उसका रूप–रंग एवं पारिवारिक पृष्ठभूमि। अपनी इस अद्वितीय कला के परिणामस्वरूप ही भोटान्तिक नारी एक विशिष्ट एवं सम्मानजनक प्रस्थिति प्राप्त किये हुए हैं तथा भोटान्तिक समाज के आर्थिक क्रियाकलापों का केन्द्र बिन्दु बनी हुई है।

कृषि के क्षेत्र में कतिपय कार्य सर्वत्र ही स्त्रियों के लिए निषिद्ध करार दिये गये हैं तथा जनजातीय समाज भी इसके अपवाद नहीं हैं। उदाहरणार्थ, हल चलाने का कार्य पुरुष करते हैं लेकिन अन्य सभी प्रकार के कार्यों में स्त्रियों की भागीदारी देखी जा सकती है। इसी प्रकार हल–बैलों से कृषि की पूर्व अवस्था, स्थानान्तरण कृषि व्यवस्था में पेड़ों को काटने का कार्य आमतौर पर पुरुष करते थे। अन्य सभी कार्यों में स्त्रियाँ भाग लेती थीं। सभ्य जातियाँ, विशेष रूप से उच्च जातियों की भाँति जनजातीय समाजों में स्त्रियों की कृषि कार्यों में भागीदारी पर किसी प्रकार का नियंत्रण नहीं था। यद्यपि कृषि के क्षेत्र में प्रौद्योगिकी के अपनाये जाने के फलस्वरूप स्त्रियों की भागीदारी में गिरावट अवश्य आयी है तथापि जनजातीय समाज वर्तमान तक इस उन्नत तकनीक से अछूते हैं तथा स्त्रियों की कृषि के क्षेत्र में भागीदारी यथावत बनी हुई है।

इस प्रकार आर्थिक विकास की चाहे कोई भी अवस्था हो, जनजातीय स्त्रियाँ वर्तमान समय तक एक "लेबर मशीन" की भाँति अपना योगदान अपने परिवार की अर्थव्यवस्था में देती आयी हैं। यह योगदान आन्तरिक तौर पर ही सीमित नहीं है अपितु बाहरी घरेलू आर्थिक मामलों में भी उनकी भूमिका महत्वपूर्ण रही है। मातृ–सत्तात्मक समाजों में तो उत्तराधिकार एव पदाधिकार सम्बन्धी नियम स्त्रियों को पुरुषों की अपेक्षा श्रेष्ठ स्थिति प्रदान करते हैं। यद्यपि पितृसत्तात्मक समाजों में बाह्य सम्पर्क की प्रक्रिया के फलस्वरूप जनजातीय समाजों में

जनचेतना जागृत हुई है परन्तु संस्कृतिकरण की प्रक्रिया ने स्त्रियों की स्थिति में सुधार की अपेक्षा उन्हें अवनति की ओर ही धकेला है। यहाँ तक कि मातृसत्तात्मक समाजों में भी स्त्रियों के उत्तराधिकार एवं पदाधिकार को चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। सम्पत्ति पर अधिकार एवं हस्तान्तरण सम्बन्धी देश का विधान सम्पत्ति पर स्त्रियों के एकाधिकार को चुनौती देने लगा है। पूर्वोत्तर प्रदेशों के अनेक भागों में मातृसत्तात्मक परिवारों के पुरुषजन न्यायालयों की सहायता से सम्पत्ति के हस्तान्तरण पर उनके अधिकारों की माँग करने लगे हैं।

भारत के जनजातीय समाजों की अर्थव्यवस्था एवं स्त्रियों की आर्थिक स्थिति के बारे में एक सामान्यीकृत धारणा हमें किसी एक निष्कर्ष पर नहीं पहुँचा सकती। विविधताएँ पर्याप्त मात्रा में विद्यमान हैं। एक बात निश्चित रूप से कही जा सकती है कि यद्यपि भारतीय जनजातियों में गरीबी एवं कठिनाइयाँ पर्याप्त मात्रा में पाई जाती हैं लेकिन स्त्री-पुरुषों के मध्य भेदभाव उस सीमा तक कहीं भी नहीं पाया जाता है जिसके उदाहरण निम्न सोपानों की हिन्दू जातियों में देखने को मिलते हैं। यह बात स्पष्ट रूप से कही जा सकती है कि जनजातीय स्त्रियाँ आर्थिक क्षेत्र में पर्याप्त महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती हैं।

लघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर-

प्रश्न-(1) भारत में जनजातीय अध्ययनों का क्या महत्व है?

उत्तर- भारत विविधताओं से भरा हुआ एक विशाल देश है, जो सदियों से विभिन्न धर्मों, मतों, सम्प्रदायों, संस्कृतियों, प्रजातियों, जातियों और जनजातियों की कर्मभूमि रहा है। भारत की कुल जनसंख्या का लगभग 8 प्रतिशत भाग जनजातियों से निर्मित है अर्थात् भारत में 8 करोड़ से अधिक लोग जनजातियों से सम्बन्धित हैं। अधिकांश जनजातियाँ ऐसे दुर्गम क्षेत्रों में निवास करती हैं जहाँ आधुनिक सभ्यता का प्रकाश नहीं पहुँच पाया है। आज भी ये जनजातियाँ आदिम-युगीन जीवन जीने पर विवश हैं।

इन जनजातीय लोगों का उत्थान किये बिना समग्र भारत का उत्थान सम्भव नहीं है और इनका उत्थान करके इन्हें राष्ट्र की मुख्य धारा से जोड़ने के लिये इनका अध्ययन करना नितांत आवश्यक है। साथ ही जनजातीय समाज भारत का प्राचीनतम समाज माना जाता है जिनका अध्ययन कर प्राचीन भारतीय संस्कृति के विविध पक्षों का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

प्रश्न-(2) 'परिहार' का आशय स्पष्ट कीजिये।

उत्तर- 'परिहार' नातेदारी की एक रीति है जिसका आशय है, दूरी रखना या विमुख होना। नातेदारी व्यवस्था में कुछ विशेष नातेदारों को एक-दूसरे से घनिष्ठता स्थापित नहीं करने दी जाती है इसे परिहार सम्बन्ध कहा गया है। ये सम्बन्ध निकटतम सम्बन्धियों में एक दूरी बनाये रखने और पारस्परिक अन्तःक्रिया को टालने के लिये बनाये गये हैं। जैसे- बहू के सास-ससुर और जेठ से सम्बन्ध कठोर परिहार सम्बन्ध होते हैं अर्थात् बहू इनसे बात भी नहीं कर सकती। इसीलिये उसे पर्दा करना पड़ता है। वास्तव में परिहार सम्बन्ध समाज में दो निकट सम्बन्धियों के मध्य यौन-सम्बन्ध की संभावना को समाप्त करने की दृष्टि से बनाये गये हैं। इनमें भाई-बहन, ससुर-पुत्रवधू, सास-दामाद आदि प्रमुख परिहार सम्बन्ध हैं।

इकाई-3

दीर्घउत्तरीय प्रश्नोत्तर-

प्रश्न- 1. जनजातीय अर्थव्यवस्था की विशेषताओं का संक्षिप्त वर्णन कीजिये।

उत्तर- जनजातीय अर्थव्यवस्था की विशेषताएँ- जनजातीय अर्थव्यवस्था अपने सरलतम स्वरूप में दृष्टिगोचर होती है। प्रत्येक व्यक्ति उत्पादन कार्य में संलग्न दिखाई देता है। उपभोक्ता तथा उत्पादक के मध्य कोई विशेष अन्तर नहीं है। इस प्रकार की अर्थव्यवस्था में संगठन, नियोजन तथा नियंत्रण आदि बातों का आमतौर पर अभाव रहता है। जनजातीय परिवार आर्थिक उत्पादन की मूल इकाई के रूप में है। परिवार से बाहर अर्थव्यवस्था संगठित रूप में नहीं पाई जाती। संक्षिप्त में आदिम अर्थव्यवस्था की विशेषताएँ निम्नवत् हैं-

(1) **धर्म तथा जादू-** धर्म तथा जादू सभी प्रकार की आर्थिक क्रियाओं के साथ किसी न किसी रूप से सम्बन्धित रहता है। उदाहरणार्थ, कृषि-सम्बन्धी कार्यों के लिए देवी-देवताओं की उपासना/पूजा के उदाहरण अनेक जनजातियों के लोगों में पाये जाते हैं। इन लोगों की यह मान्यता है कि आर्थिक क्रियाओं में धर्म अथवा जादू के द्वारा आर्थिक सफलता प्राप्त होती है।

(2) **प्रौद्योगिकी के ज्ञान का अभाव-** जनजातीय समाजों की अर्थव्यवस्था में प्रौद्योगिकी के ज्ञान का अभाव होता है अर्थात् जैसे कृषि के क्षेत्र में अथवा अन्य क्षेत्रों में ये बहुत कम एवं सरलतम औजारों आदि का ही प्रयोग करते हैं। मात्र बाह्य जगत के साथ सम्पर्क के परिणामस्वरूप ही ये अब धीरे-धीरे उत्पादन की अर्थव्यवस्था में प्रवेश पा सकने की स्थिति में हो सकते हैं। इससे पूर्व की इनकी अर्थव्यवस्था को उपभोग की अर्थव्यवस्था के रूप में जाना जा सकता है। अर्थात् जनजातीय समाजों में अतिरिक्त उत्पादन का लगभग अभाव-सा रहता है।

(3) **संचय की प्रवृत्ति का अभाव-** इन लोगों में संचय की प्रवृत्ति का सदैव अभाव रहा है। विनिमय के लाभों के बारे में भी इनका ज्ञान सीमित रहा है।

(4) **मुद्रा चलन का अभाव-** जनजातीय समाजों में विनिमय को प्रोत्साहित करने के लिए किसी भी प्रकार की मुद्रा आदि के चलन का सदैव अभाव रहा है। माध्यम के अभाव में अर्थव्यवस्था का व्यापक संगठन कभी भी अस्तित्व में नहीं आ सका। विनिमय का पूर्ण रूप से अभाव था, यह तो नहीं कहा जा सकता परन्तु यह सीमित मात्रा में था। माध्यम के अभाव में विभिन्न वस्तुओं के आंकलन की क्षमता भी इन लोगों में बहुत कम मात्रा में थी।

(5) **लाभ की प्रवृत्ति का अभाव-** जनजातीय समाजों में लाभ की प्रवृत्ति का भी नितान्त रूप से अभाव रहा है। अर्थव्यवस्था एक सामुदायिक भावना से जुड़ी हुई थी अतः यह भावना व्यक्तिगत लाभ को नकारती थी। यद्यपि मुद्रा का प्रसार व बाहरी सम्पर्क के परिणामस्वरूप लाभ की प्रवृत्ति का होना स्वाभाविक होता है।

(6) **नियमित बाजार का अभाव-** आदिम समाज में नियमित बाजार, प्रतियोगिता तथा एकाधिकार का अपेक्षाकृत रूप से अभाव रहा है। जनजातीय परिवार के सदस्य अपनी सम्पूर्ण आवश्यकताओं का संचय एवं पूर्ति स्वयं करने का प्रयास करते थे।

कार्य के विशेषीकरण का अभाव था। एक व्यक्ति स्वयं अनेक कार्यों को करता था।

(7) **सामूहिक सहकारिता की भावना**– इनके समाजों की आर्थिक क्रियाओं में सामूहिकता एवं सहकारिता पाई जाती है। सामुदायिक कर्त्तव्यों को सर्वोपरि माना जाता था। व्यक्तिगत स्वामित्व कम तथा सामूहिक स्वामित्व अधिक था। परिवर्तन का अभाव था व उसे नकारा जाता था। उपहार विनिमय एक प्रकार के आधार के रूप में था। उपहार अन्तर समूह सहयोग/सद्भावना के आधार के रूप में थी।

(8) **जीवन निर्वाह स्तर की अर्थव्यवस्था**– जनजातीय अर्थव्यवस्था को जीवन निर्वाह स्तर की अर्थव्यवस्था की संज्ञा दी जा सकती है।

(9) **यातायात के साधनों का अभाव**– यातायात के साधनों के अभाव के कारण जनजातीय समाज को अनाज व अन्य वस्तुओं का संग्रह कर उन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने की कठिनाई रही है। परिणामस्वरूप इनकी आर्थिक क्रियाएँ एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र तक सीमित होकर रह जाती हैं।

(10) **आर्थिक उत्पादन की पुरानी प्रविधियों का उपयोग**– आदिम जाति के लोगों में नित नये आविष्कार, नवाचार एवं परिवर्तन कम ही होते हैं। उनमें स्थिरता अधिक पाई जाती है। स्थिरता एवं समरूपता के कारण ही आर्थिक उत्पादन की प्रविधि में साधारणतया कोई परिवर्तन नहीं हो पाते।

(11) **विशेषीकरण का अभाव**– आदिम समाज में विशेषज्ञों एवं विशेषीकरण का अभाव रहता है। श्रम विभाजन का आधार विशेषीकरण नहीं होता है तथा न ही कुशलता या अकुशलता।

(12) **श्रम का महत्व**– आदिम अर्थव्यवस्था में श्रम का विशेष महत्व है। यह विनिमय का एक माध्यम भी है। इन लोगों में श्रम के पुरस्कार के बजाय हैसियत के अनुसार उत्पादित वस्तु का ही विभाजन किया जाता है। सभी को न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति का अधिकार है।

(13) **जहाँ तक सम्पत्ति का प्रश्न है**, जनजातियों में व्यक्तिगत व सामूहिक दोनों प्रकार की सम्पत्ति पाई जाती है।

(14) **आधुनिक अर्थव्यवस्था की तरह यहाँ** राजनीतिक शक्ति का आर्थिक नियंत्रण से कोई सम्बन्ध नहीं है।

इस प्रकार बाहरी जन सम्पर्क से पूर्व की जनजातीय अर्थव्यवस्था व्यक्तिगत लाभों से परे थी, उसमें सामूहिकता का गुण था। व्यक्ति अपने हितों के साथ–साथ समूह के हितों को भी सर्वोपरि मानता था। परन्तु बाहरी जगत के साथ सम्पर्क के परिणामस्वरूप जनजाति की अर्थव्यवस्था की विशिष्टताएँ लगभग समाप्त होती जा रही हैं तथा ये लोग उन सभी विशेषताओं को अपना रहे हैं जो तथाकथित सभ्य समाजों में व्याप्त हैं।

प्रश्न–2. आदिवासी अथवा जनजातियों की आर्थिक प्रणाली (अर्थव्यवस्था) पर एक संक्षिप्त लेख लिखिए।

उत्तर– मानव अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सदैव ही प्रयत्नशील रहा है। ये तीन प्रमुख आवश्यकताएँ हैं– भोजन, वस्त्र तथा आवास। लेकिन आरम्भिक अवस्थाओं में जबकि मानव ने संस्कृति का आवरण भी नहीं ओड़ा था अथवा जब मानव उपभोग की अर्थव्यवस्था में था, उसे अपनी उपरोक्त आवश्यकताओं की पूर्ति में अत्यधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। मानव आरम्भ से ही अन्य जीवधारियों से भिन्न रहा है। वह अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति एक व्यवस्था के भीतर करता है। वह अपनी आवश्यकताओं के साथ–साथ अपने परिवार तथा कबीले के प्रति भी उत्तरदायी रहा है। एक निश्चित व्यवस्था के तहत वह अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करता रहा है। इस प्रकार से अर्थव्यवस्था उसकी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति करती है।

अर्थव्यवस्था को अर्थ स्पष्ट करते हुए **लूसी मेयर के मतानुसार**, ये मानव द्वारा अपनाये गये वे क्रियाकलाप हैं जिनके माध्यम से वे अपने भौतिक और अभौतिक दोनों प्रकार के साधनों की व्यवस्था करते हैं तथा उनके विभिन्न उपयोगों में से कुछ को अपनाते हैं। **रेमण्ड फर्थ** द्वारा प्रतिपादित परिभाषा के अनुसार यह मानव क्रियाकलापों का वह विस्तृत क्षेत्र है जिसका सम्बन्ध साधनों के परिसीमित उपभोग और संगठन से है।

आर्थिक प्रणाली (अर्थव्यवस्था)– आदिवासी लोग आज के विज्ञान के युग में भी अधिकांशतया प्रकृति पर ही आश्रित हैं। हजारों वर्षों से उनकी सम्पत्ति के मुख्य स्रोत जंगल, पहाड़, घाटियाँ एवं नदियाँ ही रही हैं। जंगलों तथा पहाड़ों से खाद्य–संग्रह करना, नदियों तथा तालाबों से मछली पकड़ना तथा कहीं–कहीं घाटियों व अन्यत्र पहाड़ी ढालों पर कृषि करना ही उनकी आजीविका के प्रमुख साधन रहे हैं। अतः आधुनिक तौर–तरीके बदलने वाले तथा सभ्य कहे जाने वाले लोगों की अपेक्षा जनजातियों का सामाजिक एवं आर्थिक जीवन भौगोलिक पर्यावरण के प्रत्यक्ष से ओत–प्रोत रहा है। जनजातीय जीवन को प्रकृति से लगातार संघर्ष करना पड़ता है और उदर–पूर्ति के लिए उन्हें कठोर परिश्रम भी करना पड़ता है।

जनजातियों के औजार उनके द्वारा ही बनाये हुए तथा उन धातुओं के बने हुए होते हैं जो कि उनको आसानी से उपलब्ध हो सकते हैं। वास्तव में जनजातीय जीवन में संतुलन का अभाव स्पष्ट रूप से देखने में आता है। भविष्य के प्रति आश्वस्त होना तथा संघर्षमय जीवन व्यतीत करना ही इनका एक लक्ष्य बन जाता है। उनके औजारों, निवास स्थानों व अन्य भौतिक सामग्री से यह स्पष्ट अनुमान लगाया जा सकता है कि उनकी वस्तुएँ एवं आवश्यकताएँ उनकी स्वयं की उपलब्धि के साधनों तक ही सीमित हैं। उन्होंने आज तक स्वयं ही पर्यावरण की शक्ति तथा भौतिक आवश्यकताओं के बीच एक संतुलन को कारगर बनाये रखने का भरसक प्रयास किया। परन्तु यह स्वाभाविक है कि अधिक समय तक इसे (संतुलन को) नहीं बनाया जा सकता और इसमें विकार उत्पन्न होना स्वाभाविक है। बढ़ती हुई आबादी, प्रकृति का ह्रास, भूमि की उपज में कमी, जंगलों का अभाव अथवा उनमें प्रशासनिक प्रतिबन्ध तथा सबसे महत्वपूर्ण बात है– बाहरी जगत का जनजातीय जीवन पर प्रभाव, जिससे वे सुदूर एकान्त स्थानों में रहते हुए भी अपने आपको नहीं बचा पाते। इन सब बातों ने जनजातीय अर्थव्यवस्था में परिवर्तन ला दिये हैं। परन्तु ये प्रभाव अलग–अलग स्थानों पर अलग–अलग मात्रा में हुए हैं। कुछ स्थान आज भी ऐसे हैं जहाँ जनजातियाँ आदिम

अर्थव्यवस्था के सन्निकट हैं। अन्यत्र औद्योगिक जगत में प्रवेश पाये हुए, उच्च शिक्षा प्राप्त व अभिजातों की श्रेणी में रखे जाने वाले विशिष्ट व्यक्ति भी जनजाति के लोगों में पाये जाते हैं जो अपनी आर्थिक परिस्थिति में सुधार लाने में सफलता प्राप्त कर सके हैं।

जनजातीय आर्थिक संगठन "उत्पादन व्यय" अर्थव्यवस्था पर आधारित खाद्य पदार्थों का संचय व उसे भविष्य के लिए लाभ हेतु रखने (भंडारण करने) में वे कम विश्वास करते हैं। वे समूह की आवश्यकताओं को अधिक महत्व देते हैं।

यह कहना आवश्यक होगा कि वर्तमान समय में अन्य सभ्य जातियों की भाँति ही जनजातियों की आर्थिक व्यवस्था भी अब गतिहीन नहीं रह गई है। हालांकि जनजातियाँ भी विकास की ओर उन्मुख हुई हैं परन्तु प्रगति एक रैखिक नहीं हुई है। जनजातियों की वस्तु विनिमय व्यवस्था उसी प्रकार अपना उद्देश्य पूर्ण करती है जिस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में उच्च विकसित विनिमय प्रणाली अपने उद्देश्य की पूर्ति करती है।

प्रश्न–3. जनजातियों के आर्थिक कार्यों को संक्षेप में लिखिये।

उत्तर– वनोपज एवं हाटबाजार– कृषि के अतिरिक्त शिल्पकला तथा घरेलू उद्योग एवं औद्योगिक श्रमिक के रूप में भी जनजाति के लोग व्यस्त हैं।

शिल्पकला तथा घरेलू उद्योग–धंधे– टोकरी बनाना, सूत कातना तथा बुनना, रस्सी व चटाई–निर्माण एवं घरेलू बर्तन बनाना आदि प्रमुख उद्योग हैं। हालांकि इन उद्योगों का अनेक जनजातियों की अर्थव्यवस्था में प्रमुख स्थान नहीं है परन्तु प्रमुख व्यवसाय के साथ–साथ अवकाश के समय अथवा अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु इन्हें अपनाया जाता है। माड़िया तथा गौंड जनजाति के लोग जंगली पदार्थों से स्प्रिट निकालते हैं। साओरा, खौंड तथा गौंड धातु–शोधन, कताई–बुनाई, पात्र निर्माण आदि कार्य करते हैं। कोरवा व अंगरिया लोहे का काम करते हैं। थारू लोग वाद्य यंत्र, रस्सी व चटाई–निर्माण का कार्य करते हैं। तमिलनाडु की इरुला जनजाति के लोग बाँस की चटाई बनाते हैं। असम की जनजातियों में वस्त्र–निर्माण का प्रचलन है। इसी प्रकार कूर्मांचल प्रदेश की भोटिया स्त्रियाँ कालीन व गलीचे तथा ऊनी वस्त्रों के निर्माण में अत्यधिक निपुण हैं।

औद्योगिक श्रमिक– उद्योग के विकास ने जनजातियों को भी आकर्षित किया। जनजातियों ने श्रमिक के रूप में कारखानों की ओर प्रवेश किया। कुछ जनजातीय क्षेत्रों के आस–पास खनिज पदार्थों के भंडारों का पता लगा और कार्य प्रारम्भ हुआ। ऐसी अवस्था में तो उन्हें अपने घरों में रहकर ही व्यवसाय प्राप्त हो गया।

संथाल तथा गौंड जनजाति के लोग बड़ी संख्या में असम जाकर वहाँ के चाय के बागानों में कार्य करते हैं। कोयले की खानों में ये अपार संख्या में कार्य करते हैं। बिहार के लोहा–उद्योग के श्रमिकों में "संथाल" एवं "हो" जनजाति को उच्च स्थान प्राप्त है। टाटा लोहा एवं इस्पात उद्योग में करीब–करीब सभी अकुशल मजदूर जनजाति के लोग हैं जिनकी संख्या 17 हजार है। बिहार अभ्रक (माइका) उद्योग में ढाई लाख जनजातीय लोगों को रोजगार मिला हुआ है। इसके अतिरिक्त वन विभाग, सरकारी तथा गैर–सरकारी उद्योगों व ठेकेदारों के अधीन भी इन्हें काफी रोजगार मिला हुआ है।

प्रश्न–4. जनजातियों के जीवन–यापन के साधनों की विवेचना कीजिये।

अथवा

जनजातियों के प्रमुख व्यवसाय कौन–कौन से हैं? वर्णन कीजिये।

अथवा

मध्यप्रदेश की प्रमुख जनजातियों के व्यवसायों का वर्णन कीजिये।

अथवा

जनजातीय व्यवसाय पर एक निबंध लिखिये।

अथवा

जनजातियों के जीवन–यापन के प्रमुख साधन क्या हैं? विवेचना कीजिये।

अथवा

जनजातियों के जीवन–यापन के साधनों पर एक लेख लिखिये।

उत्तर– वर्तमान जनजातीय अर्थव्यवस्था प्रमुख रूप से कृषि पर आधारित है। इनके जीवन में कृषि का स्वरूप स्थानान्तरित कृषि का रहा है जिसे मध्य प्रदेश में दहिया के नाम से पुकारा जाता है तथा उत्तर–पूर्वी राज्यों में इसे झूंमिश के नाम से जाना जाता है। इस प्रकार की खेती की मुख्य विशेषता खेती के स्थान को समय–समय पर बदलते रहना है। वर्तमान में स्थानान्तरित खेती का स्थान स्थायी खेती ने ले लिया है। अभी अबूझमाड़ क्षेत्र में ही केवल स्थानान्तरित कृषि होती है। खेती के कार्य में लगे जनजातीय लोगों में से दो–तिहाई के पास अपनी जमीन है जिस पर वे स्वयं और आवश्यकता पड़ने पर मजदूरों की सहायता से खेती करते हैं। राज्य के अधिकांश जनजातीय क्षेत्र पहाड़ी, पठारी तथा ऊबड़–खाबड़ भू–भाग वाले हैं जिनकी उर्वरा–शक्ति बहुत ही कम है। इसके अतिरिक्त इन क्षेत्रों में जोतों का आकार भी छोटा है; जिससे एक जनजातीय परिवार का भरण–पोषण ठीक से नहीं हो पाता। इसी जमीन पर ये लोग अपना मकान और एक बाड़ा भी बना लेते हैं। इसलिये इन्हें मजबूर होकर या तो खेतीहर मजदूर के रूप में काम करना पड़ता है, या अन्य व्यवसाय में लगना पड़ता है। जनजातीय क्षेत्रों में भी अधिकतर भूमि कुछ लोगों के हाथों में ही केन्द्रित है और अधिकांश लोगों के पास बहुत ही सीमित मात्रा में भूमि है। इससे स्पष्ट होता है कि सीमान्त और छोटे किसानों का शोषण न केवल अजनजातीय लोगों के द्वारा ही होता है, बल्कि उनकी अपनी जनजातियों के बड़े–भूस्वामी भी उनका शोषण करते हैं।

जनजातीय क्षेत्रों में खेती प्रमुख रूप से जीवन–निर्वाह के लिये की जाती है न कि आर्थिक लाभ–हानि के लिये। क्योंकि ये लोग अधिकतर मोटे अनाज ही पैदा करते हैं। इन लोगों में खेती का पुराना ढंग ही प्रचलित है। खेती में अधिकांश जनजातियाँ हल और बैलों का उपयोग करती हैं। जनजातीय विकास–खण्डों में खेती के अन्तर्गत भूमि में सिंचित भूमि का प्रतिशत अधिक नहीं है। जनजातीय क्षेत्रों में उन्नत किस्म के बीजों का प्रचलन भी सामान्य रूप से कम है। आदिवासी क्षेत्रों में उर्वरकों का औसत उपयोग भी सामान्य रूप से बहुत कम है। गैर आदिवासियों के सम्पर्क में आने के कारण कुछ जनजातीय लोग भी अब उर्वरकों का प्रयोग करने लगे हैं।

अपने समिति ज्ञान के आधार पर जनजातीय लोगों ने उत्पादन बढ़ाने वाली तकनीकी और विधियों को नहीं अपनाया है तथा इनकी उपयोगिता को भी नहीं समझा है। परन्तु जो जनजातीय लोग विकसित कृषि–क्षेत्रों के सम्पर्क में आये हैं, वहाँ पर धीरे–धीरे कृषि की उन्नत विधियों को काम में लेने की ओर लोगों का रुझान बढ़ा है।

जनजातीय क्षेत्रों में कृषि से सम्बन्धित महत्वपूर्ण बात ये भी है कि भू-स्वामी काश्तकारों का हिस्सा घटा है और अन्य व्यक्तियों के खेतों पर मजदूर के रूप में काम करने वालों का प्रतिशत बढ़ा है। इसके अतिरिक्त बहुत से आदिवासी श्रमिक जो कृषि में लगे हुये थे वे धीरे-धीरे अन्य व्यवसायों की ओर मुड़े हैं।

वन-उत्पादों का संग्रह- आदिवासी लोग शुरू से ही वनों से जुड़े हुये हैं, और वन इनकी आजीविका का प्रमुख साधन रहे हैं। आज भी कई जनजातीय लोग वनों से प्राप्त वस्तुओं को बेचकर बाजार में अपनी आवश्यकता की अन्य वस्तुयें खरीदते हैं। वनों से प्राप्त वस्तुओं में लाख, चिरौंजी, महुआ, तेंदू-पत्ता, आँवला, गोंद, शहद, जड़ी-बूटियाँ आदि प्रमुख हैं। इसके अलावा ये अपने खाद्य-पदार्थ के रूप में जंगलों से कई प्रकार के कन्द प्राप्त कर लेते हैं। खानों में मजदूरी करना भी इन लोगों का एक प्रमुख व्यवसाय है।

कत्था उद्योग- खैरवार जनजाति के लोग खैर वृक्ष की लकड़ी से कत्था बनाने का व्यवसाय करते हैं। ये लोग इस वृक्ष की लकड़ी के अन्दर के भाग को काटकर इसको उबालकर हांडी विधि से कत्था बनाते हैं। पूर्वी मध्य प्रदेश में यह व्यवसाय बहुत अधिक प्रचलित था लेकिन अब यह अधिकतर कत्था कारखानों में बनता है।

जनजातीय लोग बाँस से अनेक प्रकार की वस्तुयें बनाते हैं। बाँस से अनाज रखने के बर्तन, चटाई, सूप, टोकरी आदि वस्तुयें बनाई जाती हैं। इसके अलावा जनजातीय लोगों के धनुष-बाण, चटाई, डलिया, कोरी खटिया, मछली पकड़ने के जाल आदि बाँस से ही बने होते हैं। लाख उद्योग मध्य प्रदेश के पूर्वी भाग के वनों में बहुत अधिक प्रचलित हैं, क्योंकि इसके कीड़े इसी क्षेत्र में पाये जाते हैं।

पूर्वी तथा दक्षिणी मध्य प्रदेश के वन-क्षेत्रों में मधुमक्खियाँ पाई जाती हैं जिनसे ये शहद प्राप्त करते हैं लेकिन यह व्यवसाय व्यवस्थित न होने के कारण जनजातियों के लिये अधिक लाभ का कार्य नहीं है। यदि मधुमक्खियों के पालने को प्रोत्साहन दिया जाये तो इस व्यवसाय को बहुत अधिक उन्नत किया जा सकता है।

मध्य प्रदेश में रेशम उत्पादक आदिवासी क्षेत्र प्रमुख हैं। इनमें मण्डला, बस्तर, रायगढ़, रायपुर, बैतूल, बालाघाट, शहडोल, बिलासपुर, सरगुजा, राजनांदगाँव तथा होशंगाबाद हैं। इन क्षेत्रों में रेशम के कीड़े पालने की प्राकृतिक सुविधायें उपलब्ध हैं। सरकार द्वारा भी इस व्यवसाय को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से जनजातियों को आवश्यक सुविधायें उपलब्ध कराई गई हैं।

जनजातीय लोग कुछ अन्य गृह-उद्योगों में भी लगे हुये हैं। इन उद्योगों को कला-युक्त व्यवसाय भी कहा जा सकता है। इनमें मुलायम पत्थरों से मूर्तियाँ तराशना, काँसे की घण्टियाँ बनाना, माला बनाना आदि मुख्य व्यवसाय आते हैं। धातु उद्योग, कपड़ा बनाना एवं बाँस से वस्तुयें बनाना जनजातियों के प्रमुख व्यवसाय रहे हैं। बस्तर क्षेत्र में कंघा, चटाई, बढ़ईगिरी और कपड़ा बुनने के काम प्रमुख रूप से किये जाते रहे हैं। भील लोग भी बाँस की वस्तुयें बनाने तथा रस्सी, कंघा आदि बनाने में निपुण रहे हैं।

प्रश्न-5. जनजातीय समाज तथा कृषक-समाज में भिन्नतायें एवं समानताओं का उल्लेख कीजिये।

अथवा

जनजातीय समाज एवं कृषक-समाज में पाई जाने वाली समानताओं तथा असमानताओं का वर्णन कीजिये।

अथवा

जनजातीय समाज तथा कृषक समाज में अन्तर स्पष्ट कीजिये।

अथवा

जनजातीय एवं कृषक-समाज में पाई जाने वाली भिन्नता एवं समानता की व्याख्या कीजिये।

उत्तर- जनजातीय समाज सरल समाजों की श्रेणी में आते हैं। इसलिये इनमें वे सभी विशेषतायें पाई जाती हैं जो एक सरल समाज में पाई जाती हैं। जनजातियों में परम्परा, रूढ़िवादिता एवं धर्म की प्रधानता पाई जाती है। आकार की दृष्टि से यह समाज छोटे होते हैं जिनमें वैयक्तिक सम्बन्धों पर विशेष बल दिया जाता है। इन समाजों में भिन्नता के स्थान पर समानता अधिक पाई जाती है। कृषक-समाज में भी जनजातीय समाज के समान सरल समाजों की अनेक विशेषतायें पाई जाती हैं। इनमें भी परम्परा एवं रूढ़िवादिता की प्रधानता देखने को मिलती है। आकार की दृष्टि से कृषक-समाज जनजातीय समाज की तुलना में बहुत बड़े होते हैं। दोनों ही प्रकार के समाजों में गतिशीलता का अभाव पाया जाता है। जनजातीय समाज और कृषक-समाज में पाई जाने वाली प्रमुख भिन्नतायें (असमानतायें) निम्नलिखित हैं-

(1) एक जनजाति का सामान्यतः एक निश्चित भू-भाग होता है; जहाँ उसके सदस्य रहते हैं। कृषक-समाज का किसी जनजातीय समाज के समान एक निश्चित भू-भाग नहीं होता है, बल्कि कृषक-समाज के लोग विभिन्न गाँवों में फैले हुये होते हैं।

(2) जनजातीय समाज के अन्तर्गत आने वाली प्रत्येक जनजाति के सदस्य सामान्यतः अपनी ही जनजाति में विवाह करते हैं, जबकि कृषक-समाज में विभिन्न जातियों के लोग पाये जाते हैं। इनमें प्रत्येक जाति अन्तर्विवाह के नियम का पालन करती है।

(3) जनजातीय समाज के अन्तर्गत प्रत्येक जनजाति की अपनी संस्कृति होती है और उनके रीतिरिवाजों, लोकाचारों, धर्म, जादू, संगीत, खान-पान, भावों और विश्वासों में समानता पाई जाती है, जबकि कृषक-समाज एक विस्तृत समाज होता है और इससे सम्बन्धित लोगों की अपनी एक विशिष्ट लोक संस्कृति है, अपना धर्म और देवी-देवता हैं तथा धार्मिक विश्वास है।

(4) जनजातीय समाज के अन्तर्गत प्रत्येक जनजाति अपनी सभी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति को स्वयं ही पूरा कर लेती है जबकि कृषक-समाज में विभिन्न जातियों के लोग अपने जातिगत व्यवसाय को करते हुये, एक-दूसरे को अपने द्वारा उत्पादित वस्तुयें उपलब्ध कराते थे और बदले में फसल के समय अनाज आदि प्राप्त करते थे।

(5) जनजातीय समाज के अन्तर्गत प्रत्येक जनजाति का अपना एक स्वयं का राजनीतिक संगठन होता है। इसमें एक वंशानुगत एक मुखिया होता है और उसकी सहायता के लिये बड़े बूढ़ों की एक परिषद् होती है। ये लोग परम्परागत

का पालन कराने, नियंत्रण बनाये रखने एवं नियमों का उल्लंघन करने वालों के लिये दण्ड की व्यवस्था करते हैं। कृषक-समाज का अपना ऐसा कोई राजनीतिक संगठन नहीं होता है। इनमें विभिन्न जातियों की जाति पंचायत अवश्य पाई जाती है जो कि जाति के सदस्यों पर नियंत्रण करती है।

(6) जनजातीय समाज से सम्बद्ध लोग साधारणतया पहाड़ी क्षेत्रों, घने जंगलों या पहाड़ी भागों में निवास करते रहे हैं। इनके फैलाव का विस्तार-क्षेत्र सीमित है। जबकि कृषक-समाज का भौगोलिक फैलाव बहुत अधिक विस्तृत है।

(7) प्रत्येक जनजाति का अपना एक नाम होता है जिसके आधार पर उस जनजाति के लोग पहचाने जाते हैं। कृषक-समाज का इस प्रकार का कोई विशिष्ट नाम नहीं होता है। लेकिन इतना अवश्य है कि कृषक-समाज से सम्बद्ध विभिन्न गाँवों के अपने-अपने नाम होते हैं।

आन्द्रे बिताई का मत है कि भारतीय समाज को सदैव नगरीय समाज, कृषक-समाज और जनजातीय समाज के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। सर्वप्रथम भारतीय समाज को नगरीय और ग्रामीण खण्डों में बाँटा जाता है, उसके बाद ग्रामीण खण्ड को जनजातीय और अजनजातीय खण्डों में बाँटा गया है। इस प्रकार अजनजातीय गाँवों से मिलकर भारतीय समाज का कृषक खण्ड बनता है।

जहाँ तक जनजातीय समाज और कृषक-समाज में समानता की बात है, इसके बारे में यह कहा जा सकता है कि दोनों ही प्रकार के समाजों के अधिकांश लोगों के लिये कृषि आजीविका का एक साधन है। कृषक-समाज में लोगों की आर्थिक स्थिति में तुलनात्मक दृष्टि से बहुत अधिक असमानता देखने को मिलती है जबकि जनजातीय समाजों में अधिक भिन्नता नहीं पाई जाती है। जनजातीय समाज के लोग कृषि अवश्य करते हैं, परन्तु इनमें व्याप्त निर्धनता के कारण इनके कृषि के तौर-तरीके बहुत ही परम्परागत प्रकार के हैं। कृषक-समाज के कई लोगों ने आर्थिक सम्पन्नता और शिक्षा के कारण कृषि के नये तरीकों को अपना लिया है।

आन्द्रे बिताई की मान्यता है कि भारत में बहुत से जनजातीय गाँवों में कृषकों के समुदाय हैं। यदि हम छोटी घुम्मक्कड़, शिकारी तथा फल-फूल एकत्रित करने वाली जनजाति को अलग कर दें तो यह पायेंगे कि बहुत-सी बड़ी जनजातियाँ जो एक स्थान पर रहकर खेती करती हैं; तथा समुदायों में संगठित हैं, कृषक वर्ग के समान हैं। आन्द्रे बिताई का मत है कि यदि भारत में कृषक समुदायों को देखना है तो संथाल, उरांव तथा मुण्डा जनजातियाँ इसका प्रमुख उदाहरण हैं।

प्रश्न-6. भारतीय जनजातियों में क्या परिवर्तन हो रहे हैं? विवेचना कीजिये।

अथवा

"भारतीय जनजातियाँ परिवर्तन के दौर से गुजर रही हैं।" स्पष्ट कीजिये।

अथवा

'भारतीय जनजातियों के बदलते परिवेश' पर एक लेख लिखिये।

उत्तर- भारतीय जनजातियों में परिवर्तन अंग्रेजी शासन काल से ही प्रारम्भ हो चुका था। स्वतंत्रता के पश्चात् परिवर्तन की प्रक्रिया में तेजी आई। औद्योगिकरण, नगरीकरण, संचार

सुविधाओं में वृद्धि, नये कानून, विभिन्न धर्मों के लोगों से संपर्क आदि के कारण जनजातीय समाज के सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक आदि सभी पहलुओं में परिवर्तन दिखाई दे रहा है।

जनजातीय समाजों में परिवर्तन- जनजातीय समाजों में हमें निम्नलिखित क्षेत्रों में परिवर्तन दिखाई देते हैं-

जनजातीय समाजों में परिवर्तन
(1) सामाजिक-सांस्कृतिक क्षेत्र में परिवर्तन
(2) धार्मिक परिवर्तन
(3) शैक्षणिक परिवर्तन
(4) आर्थिक परिवर्तन
(5) राजनीतिक परिवर्तन

(1) सामाजिक-सांस्कृतिक क्षेत्र में परिवर्तन- बाह्य संपर्क, आधुनिकीकरण, शिक्षा आदि के फलस्वरूप जनजातीय समाज में अनेक सामाजिक, सांस्कृतिक परिवर्तन दिखाई देते हैं। बिहार की अनेक जनजातियाँ जाति व्यवस्था में परिवर्तित हो गई हैं। **डॉ. श्री निवास** ने मैसूर की जनजातियों में "संस्कृतिकरण" की प्रक्रिया के संबंध में विवेचना की है। बिहार की जनजातियां हिन्दू संस्कारों को अपना चुकी हैं। नागा, गारो, भील, गोंड आदि जनजातियों ने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया है।

धर्म परिवर्तन से इनमें कई परिवर्तन दिखाई देते हैं। ये अब बहु विवाह के स्थान पर एक विवाह करने लगे हैं। संयुक्त परिवार को छोड़ एकाकी परिवार में रहने लगे हैं। गोत्र व्यवस्था शिथिल हो रही है। जीवनसाथी चुनने की प्रथायें भी खत्म हो रही हैं। इनकी सांस्कृतिक संस्था 'घोटुल' अथवा 'युवागृह' अब उपेक्षा का शिकार हो रही है।

(2) धार्मिक परिवर्तन- जनजातीय धर्म प्रकृति पर निर्भर था। ये लोग जीवसत्तावाद, प्रकृतिवाद एवं आत्मवाद में विश्वास कर प्रकृति की पूजा करते थे। बिरसा आन्दोलन के कारण मुण्डा जनजाति तथा भगत आंदोलन के कारण ओरांव तथा भील जनजातियों में हिन्दू धर्म का प्रभाव दिखाई देता है। हिन्दू धर्म को स्वीकारने वाली जनजातियां हिन्दू देवी-देवताओं एवं धर्मग्रंथों को मानने लगी हैं। ईसाई धर्म को स्वीकारने वाली जनजातियां चर्च जाती हैं तथा ईसाई त्यौहारों को मनाती हैं। अपने मूल धर्मों को छोड़ने वाले व्यक्ति अपने जनजातीय समूह से अलग हो जाते हैं। इससे उनकी जनजातीय एकता खत्म हो गई है।

(3) शैक्षणिक परिवर्तन- जनजातियों में आधुनिक शिक्षा का प्रचार-प्रसार हुआ है। वे अब अपनी परम्परागत संस्थाओं के स्थान पर विद्यालयों एवं महाविद्यालयों में विज्ञान एवं तकनीकी शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। जो उच्च शिक्षा ग्रहण कर लेते हैं वे समाज में उच्च स्थान प्राप्त करते हैं। साथ ही उच्च शिक्षित व्यक्ति अपने जनजातीय समूह से पृथक भी हो जाता है।

(4) आर्थिक परिवर्तन- जनजातियों का आर्थिक जीवन सरल था। जंगलों से वे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर लेते थे लेकिन नये कानूनों के कारण जंगलों पर से उनका अधिकार खत्म हो गया। साथ ही मुद्रा के प्रचलन से उनकी संपूर्ण आर्थिक व्यवस्था में परिवर्तन आया। जहां आर्थिक समृद्धि ने इन्हें राजनैतिक प्रतिस्पर्धा के लिये तैयार किया है वहीं इनके शोषण में भी वृद्धि हुई है।

(5) राजनीतिक परिवर्तन- इनकी राजनीतिक व्यवस्था भी बदल गई है। इनके समाज के कानूनों का स्थान अब आधुनिक कानूनों एवं न्याय व्यवस्था ने ले लिया है। परम्परागत नेतृत्व

के स्थान पर अब प्रजातांत्रिक नेतृत्व स्थापित हो चुका है। वे अब चुनाव की प्रक्रिया के तहत पंचायत से लेकर संसद तक शासन की प्रक्रिया में भागीदार हो चुके हैं। वे अब विभिन्न राजनीतिक दलों की सदस्यता ग्रहण कर चुके हैं। संविधान द्वारा दी गई राजनीतिक एवं आर्थिक सुविधाओं के कारण न केवल उनकी आर्थिक स्थिति मजबूत हुई है वरन् उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा में भी वृद्धि हुई है। इसके साथ ही प्रतिस्पर्धा, संघर्ष, गुटबाजी, तनाव आदि का विस्तार भी जनजातीय समाज में हुआ है।

प्रश्न–7. भारतीय जनजातियों के आर्थिक संगठनों का वर्णन कीजिए।

अथवा

'भारतीय जनजातियों के अर्थव्यवस्था के स्वरूप' पर एक लेख लिखिए।

उत्तर– भारतीय जनजातियों का आर्थिक संगठन– भारतीय जनजातियों में अनेक प्रकार की अर्थव्यवस्थाएं पायी जाती हैं। जीविकोपार्जन के लिए जनजातीय लोग कन्द, मूल, फल, शाक-सब्जी आदि का संकलन करते हैं, मछली मारते हैं और शिकार करते हैं। पशुपालन एवं दस्तकारी उद्योगों में काम करते हैं। कोई भी जनजाति किसी एक ही प्रकार की अर्थव्यवस्था के भरोसे जीवित नहीं रहती उनमें थोड़े-बहुत सभी प्रकार के कार्य देखने को मिलते हैं। अतः हम भारतीय जनजातियों की अर्थव्यवस्था को मिश्रित अर्थव्यवस्था कह सकते हैं। संकलन करने वाले पशु-पालन के साथ-साथ दस्तकारी का कार्य भी करते हैं और उद्योगों में मजदूरों के रूप में भी। इस प्रकार से किसी भी जनजाति को हम आजीविका कमाने की दृष्टि से एक स्पष्ट श्रेणी में नहीं रख सकते।

भारतीय आदिवासियों में पायी जाने वाली अर्थव्यवस्था का वर्गीकरण हम मुख्यतः निम्न पाँच भागों में कर सकते हैं

(1) **खाद्य संग्रहण तथा शिकारी जनजातियाँ–** अनेक जनजातियाँ अपने जीवनयापन हेतु जंगलों से कन्द मूल, शाक, सब्जी, फल आदि एकत्रित करती हैं। जनजातीय स्त्रियाँ और इनके बच्चे जंगलों में टोकरी लेकर निकल जाते हैं और उन्हें वहाँ फल फूल, शाक-सब्जी आदि जो कुछ भी मिलता है उसे ले आते हैं। कुछ लोग शहद, कत्था, गोंद, महुआ आदि का संकलन कर इन्हें बेचकर अपना जीवनयापन करते हैं। ट्रावनकोर कोचीन के कदार, पाला पल्लयन, पनियन, परैयन, कुरुम्बा, तमिलनाडु के चेंचु, उड़ीसा के बिरहोर, खड़िया, उत्तर प्रदेश के राजी, आदि सभी प्रकार की अर्थव्यवस्था अपनाये हुए हैं। महुआ भारतीय जनजातियों के लिए कल्पवृक्ष है। ये इसके फल एवं पत्ती को खाते हैं और इससे शराब बनाते हैं। ये लोग जंगली आम, पियाल, बेर, तेंदू, आदि से अपनी खाद्य सामग्री आंशिक रूप से प्राप्त करते हैं। वैयक्तिक आवश्यकताओं की पूर्ति के अलावा ये भविष्य के लिए भी संग्रहण करते हैं, अधिक संग्रहण होने पर विनिमय एवं विक्रय भी करते हैं। ये लोग शहद, फली, औषधियाँ और जंगली कन्द भी इनकी सम्पत्ति होती है। मछली एवं शिकार से भी ये लोग भोजन प्राप्त करते हैं। शिकार धनुष बाण से करते हैं। ये लोग पक्षी, हिरण, खरगोश एवं अन्य छोटे जानवरों का शिकार व्यक्तिगत रूप से, लेकिन बड़े शिकार का आयोजन सामूहिक रूप से करते हैं। संकलन एवं शिकार का एक विभाजन क्षेत्र होता है। संग्रहीत खाद्य पदार्थों एवं शिकार को सभी लोगों में बांटा जाता है।

(2) **पशुपालक जनजातियाँ–** भारत में जीविकोपार्जन हेतु सम्पूर्ण रूप से पशुपालन पर आधारित जनजातियाँ बहुत ही अल्प हैं। हिमाचल प्रदेश के गुज्जर दक्षिण के नीलगिरि पर्वत की टोडा एवं पशुपालन के द्वारा ही अपना जीवनयापन करते हैं। पशुपालन के लिए चारागाह की जरूरत होती है। इसलिए एक स्थान पर घास समाप्त हो जाने पर स्थान बदलना जरूरी होता है। इसलिए इनका जीवन घुमन्तू जैसा होता है। उदाहरणार्थ, हिमालय के गुज्जर शीत ऋतु में मैदानी में आ जाते हैं और ग्रीष्म ऋतु में अपने पशुओं को लेकर चम्बा की पहाड़ियों में चले जाते हैं। ये लोग पशुओं का दूध बेचकर ही अपना जीवनयापन करते हैं। ये लोग अब थोड़ी बहुत कृषि भी करने लगे हैं। उत्तराखंड में भोटिया जनजाति के लोग खेती के साथ-साथ पशुपालन भी करते हैं। नीलगिरि की टोडा जनजाति भैंसों का पालन करती है। ये भैंसशाला को मन्दिर की भाँति पवित्र स्थान मानते हैं। इन लोगों की संस्कृति का आधार चूँकि भैंस है, इसलिए इनकी संस्कृति 'भैंस संस्कृति' कही जाती है।

(3) **कृषि कार्य करने वाली (कृषक) जनजातियाँ–** अनेक जनजातियाँ कृषि (खेती) करके अपना जीवनयापन करती हैं, परन्तु शिकार करने के साथ ही कन्द-मूल एवं फल एकत्रित करने, तथा पशुपालन का कार्य भी करती हैं। कुछ जनजातियाँ स्थानान्तरित खेती करती हैं तो कुछ स्थायी। इस प्रकार की कृषि असम, तमिलनाडु, मध्यप्रदेश, आंध्र, कोचीन, ट्रावनकोर एवं कोंकण तट की जनजातियों में पायी जाती है। इस प्रकार की कृषि में केवल मोटा अनाज, जैसे- जौ, मटर, चना, मकई, बाजरा, आदि ही होता है।

कमार और बैगा जनजाति भूमि के एक छोटे भाग को चुनकर गर्मियों में उस स्थान के वृक्षों को काट डालते हैं। वर्षा होने के कुछ सप्ताह पूर्व उन्हें जला देते हैं और उसकी राख बिखर देते हैं। वर्षा के समय कुदाली से जमीन खोदकर बीज बो देते हैं। जहाँ 'हो' का प्रचलन है वहाँ हो द्वारा खेती की जाती है। पोदु कृषि में पहाड़ी के ढलानों पर सीढ़ीनुमा खेती की जाती है। आंध्र के कोडा रेड्डी, उड़ीसा के कुटिया, खोंड व बस्तर के मांडिया इसी प्रकार की खेती करते हैं। बैगा जनजाति खेतों में हल जोतकर कृषि नहीं करती। उनकी मान्यता है कि हल जोतना धरती माता के सीने पर अत्याचार करना है। कई जनजातियाँ स्थायी रूप से एक ही स्थान पर खेती करती हैं। राजस्थान में गोंड, भील, तमिलनाडु में बडगा, इरुला, कोट, टोडा, असम के खासी, बंगाल के संथाल और मणिपुरी, उत्तरप्रदेश के थारू, मांझी और हिन्दू, झारखंड के मुंडा हो, उराँव, आदि इसी प्रकार की खेती करते हैं। आधुनिकता के संपर्क में आकर अब ये नवीन खाद, बीज तथा यंत्रों का प्रयोग भी करने लगे हैं।

(4) **दस्तकारी करने वाली जनजातियाँ–** अनेक जनजातियाँ शिल्प उद्योग एवं दस्तकारी द्वारा अपना जीवनयापन करती हैं। ये छोटे मोटे वस्त्र निर्माण, टोकरी, रस्सी, चटाई, बर्तन एवं धातुओं की वस्तुएँ बनाने का काम करती हैं। गोंड लोग धातुओं की वस्तुएँ बनाते हैं, कपड़ा बुनते हैं, तथा बेंत का सामान व मिट्टी के बर्तन बनाते हैं। अगरिया और कोरवा भी धातु के बर्तन बनाते हैं। उड़ीसा के बिरहोर जंगल की लताओं से रस्सियाँ बनाते हैं। मारे गए हुए जानवरों से खाल बनाते हैं। इरुला बांस की टोकरियाँ और चटाइयाँ, बैगा, कमार, बैगा जनजाति बांस के बर्तन, सारा लोग खेती के साथ साथ बर्तन, वाद्य यंत्र, [illegible]

चटाई, आदि बनाने का कार्य भी करते हैं। कृषि करने वाली अनेक जनजातियाँ खाली समय में दस्तकारी का कार्य भी करती हैं।

(5) **उद्योगों में संलग्न जनजातियाँ**– औद्योगीकरण एवं मशीनीकरण ने समाज के विभिन्न वर्गों को प्रभावित किया है। जनजातीय समुदाय भी इनके प्रभावों से अछूता नहीं रहा है। आज अनेक जनजातियाँ नौकरी करके या उद्योगों में श्रमिकों के रूप में कार्य करके अपना जीवनयापन रही हैं। इनमें से अनेक लोग जंगलों तथा गाँवों को छोड़कर नगरों में आकर बस गये हैं। अनेक जनजातीय लोग असम और दार्जिलिंग के चाय बागानों में काम कर रहे हैं। मध्यप्रदेश के मैंगनीज उद्योगों में अनेक जनजातियाँ काम करती हैं। जमशेदपुर में लोहे के कारखाने और रानीगंज और झरिया की कोयला की खदानों में अनेक संथाल, 'हो' और अन्य जनजातीय लोग कार्य कर रहे हैं।

प्रश्न–8. परम्परागत जनजातीय राजनीतिक संगठनों का वर्णन कीजिए।

उत्तर– एक निश्चित भू–भाग में बसे हुए मनुष्यों के एक प्रभुता–सम्पन्न राजनैतिक संगठन को राज्य कहते हैं। दूसरे शब्दों में, राज्य मनुष्यों का वह राजनैतिक संगठन है जो कि एक निश्चित भू–भाग में प्रभुता–सम्पन्न है। इसी राज्य के संस्थापक अंग को सरकार कहते हैं। सरकार राज्य के नाम पर कार्य करती है तथा राज्य के शासन प्रबंध को चलाती है। यह सरकार किसी न किसी रूप में ये तीन कार्य करती है–

(1) कानून बनाने का कार्य

(2) शासन–प्रबंध करने तथा कानूनों को लागू करने का कार्य

(3) न्याय करने का कार्य।

आदिम समाजों में सरकार– आदिकालीन समाज के प्रत्येक सांस्कृतिक स्तर में किसी न किसी रूप में सरकार का अस्तित्व रहा है। आदिकालीन समाज इसका अपवाद नहीं है। इनमें एक निश्चित तरह की शासन व्यवस्था है जो समुदाय की आन्तरिक व्यवस्था को बनाये रखती है तथा आक्रमणों से समुदाय की रक्षा करती है। पर सभ्य समाजों की राज्य व्यवस्था का जो रूप हैं, वह आदिवासी समाजों से भिन्न है। आदिवासी समाजों में व्यवस्था हेतु वर्तमान की तरह नियमों को नहीं बनाया जाता। इस समाज में अधिकांश नियम प्रथा के रूप में प्रचलित हैं। आदिवासी समाज के सदस्य परम्परागत प्रथा के रूप में इन नियमों का पालन करते हैं।

आदिम सरकार के प्रकार– आदिम (जनजातीय) समाज में सरकार के अनेक रूप/प्रकार होते हैं। राज्य व्यवस्था के रूप का निर्धारण सांस्कृतिक तथा आर्थिक विकास के स्तरों ने किया है। इसलिए राज्य व्यवस्था का जो स्वरूप एक स्तर पर मिलता है, वह दूसरे स्तर पर नहीं मिलता है। **बील्स तथा हाइजर** ने राज्य व्यवस्था के आदिम स्वरूप को निम्न श्रेणियों में बांटा है–

(1) **सीमित जनसंख्या वाले संगठन**– इसके अन्तर्गत वे संगठन आते हैं, जो अविकसित हैं और जिनसे नेतृत्व का पर्याप्त विकास नहीं हुआ है। इसमें एक समुदाय संगठित रूप से दूसरे समुदाय के ऊपर आक्रमण नहीं करता है। लेकिन इन्हें राजनीतिक संगठन नहीं माना जा सकता।

(2) **अधिक जनसंख्या वाले संगठन**– इसके अन्तर्गत जनजातियों के उन समूहों को शामिल किया जाता है, जिनकी जनसंख्या अधिक है और जिनमें एक निश्चित अर्थव्यवस्था का विकास हुआ, पर यह विकास का स्तर नहीं है, जिनमें बचत होती हो। प्रायः इस स्तर पर एक समूह दूसरे समूह पर आक्रमण करता है। इसमें जो समूह विजयी होता है, वह उस क्षेत्र से दूसरे समूह को बाहर कर देता है, लेकिन जिस समूह की हार होती है, उसका राजनीतिक संगठन बना रहता है परन्तु उसके ऊपर विजयी समूह का नियंत्रण नहीं होता है।

(3) **विकसित अर्थव्यवस्था वाले संगठन**– इस वर्ग के अन्तर्गत ऐसे संगठन आते हैं, जिनकी अर्थव्यवस्था का पर्याप्त विकास हो चुका हो और जिसमें अतिरिक्त उत्पादन होता है। इस अतिरिक्त उत्पादन का विनिमय भी होता है। ऐसे संगठनों में जनसंख्या भी अधिक होती है। एक समूह दूसरे समूह पर आक्रमण करता है और उसे अपने आधिपत्य/अधीन में रखता है। अनेक अवसरों पर पराजित समूह से हर्जाना लेकर उसे निम्न वर्ग में शामिल कर दिया जाता है। इस स्तर पर वंशानुगत शासन की शुरूआत होती है।

उपरोक्त वर्गीकरण एक निश्चित तरह के राज्य के संगठनों का विभाजन है। हम इसके द्वारा प्राचीन और वर्तमान सभी प्रकार के राजनीतिक संगठनों का वर्गीकरण नहीं कर सकते।

आदिम सरकार के वर्तमान रूप अथवा प्रकार– आदिम सरकारों की शक्ति अंग्रेजी शासन की स्थापना के पश्चात् से निरन्तर घटती गई है पर अभी भी आदिम कानून पूरी तरह से समाप्त नहीं हुए हैं। आदिम क्षेत्रों में ग्रामीण पंचायतों की स्थापना से आदिम सरकारों की फिर से स्थापना हो सकी है। परिणामस्वरूप वर्तमान में आदिम क्षेत्रों में निम्नलिखित दो प्रकार की सरकारों का अस्तित्व मौजूद है–

(1) **प्रजातांत्रिक सरकार**– सरकार का यह रूप अधिकांशतः उन आदिम समाजों में पाया जाता है जिनमें कन्दमूल, फल एकत्रित करने का काम होता है। उन लोगों में वृद्ध तथा अनुभवी पुरुष कानून की व्याख्या करते हैं और न्याय व्यवस्था करते हैं। पंचायतों के नेता अधिकांशतः चुने हुए होते हैं और शासन व्यवस्था बहुमत से काम करती है। उत्तरी अमेरिका के भारतीय लोगों में इस तरह की सरकार का उदाहरण मिलता है।

(2) **प्रजातांत्रिक शासन**– सरकार के इस वर्ग में वे सब शासन व्यवस्थायें आती हैं जो कि प्रजातंत्र पर आधारित नहीं हैं। जबकि प्रजातंत्रीय सरकारें सरल कृषक समाजों तथा निम्न आर्थिक स्तर के आदिम समाजों में पाई जाती हैं, जटिल आर्थिक व्यवस्था के समाजों में अप्रजातांत्रिक सरकारें (उदाहणार्थ– अफ्रीका की जनजातियों में) होती हैं। इसमें कुछ जनजातियों में दृढ़ एकतंत्रीय शासन होता है। अन्य घुमक्कड़ जनजातियों में कोई नेता नहीं होता है। कहीं–कहीं पर राजा तथा धार्मिक पुजारी दोनों में शक्ति का विभाजन देखा जाता है।

भारतीय आदिम समाजों में अधिकांशतः जनजाति के सदस्यों द्वारा चुने हुए सरदार सरकार चलाते हैं। कुछ जनजातियों में सदस्यों द्वारा चुने हुए बड़े–बूढ़े लोग मिलकर ग्राम पंचायत बनाते हैं और यही ग्राम पंचायतें सरकार चलाती हैं। इस प्रकार वहाँ पर प्रजातांत्रिक तथा अप्रजातांत्रिक दोनों प्रकार की सरकारों के उदाहरण मिलते हैं। भारतीय आदिम समाजों

में अंग्रेज शासन की स्थापना के पश्चात् से अब केवल प्रजातांत्रिक सरकारों का अस्तित्व ही शेष रह गया है।

प्रश्न–9. 73वें संविधान संशोधन अधिनियम का वर्णन कीजिये।

उत्तर– 73वें संविधान संशोधन अधिनियम– इस संशोधन द्वारा पंचायती राज को संवैधानिक स्वतंत्रता मिली। इसके द्वारा संविधान में एक नया अध्याय जोड़ा गया। इसके द्वारा संविधान में 16 अनुच्छेद और एक अनुसूची 11 जोड़ी गई। यह 25 अप्रैल, 1993 में पारित हुआ। इसकी प्रमुख विशेषतायें निम्नलिखित हैं–

1. **ग्रामसभा–** यह गांव के स्तर पर एक शक्तिशाली व्यवस्था सभा बनाई गई है।
2. **पंचायतों का गठन–** अनुच्छेद 243–स के अनुसार किसी पंचायती राज का प्रावधान किया गया।
3. **पंचायतों की संरचना–** राज्य विधान मण्डलों को विधि द्वारा पंचायतों की संरचना के लिये शक्ति दी गई। इसके सदस्यों की संख्या का अनुपात सभी राज्यों में एक ही होगा। निर्वाचन प्रत्यक्ष होगा। सभी स्तरों पर पंचायतों में अप्रत्यक्ष निर्वाचन होंगे। इसका तरीका राज्य विधान मण्डल तय करेगा।
4. **पंचायतों में आरक्षण–** प्रत्येक पंचायत में अनुसूचित जाति तथा जनजाति के लिये स्त्रियों और पिछड़ों के स्थान रोटेशन से आरक्षित रहेंगे।
5. **पंचायतों का कार्यकाल–** इनका कार्यकाल 5 वर्ष होगा, पर विघटन हो जाये तो 6 महीने में दूसरे चुनाव कराने होंगे।
6. **वित्त आयोग–** राज्य का राज्यपाल 73वें संशोधन के प्रारंभ में एक वर्ष के भीतर और उसके बाद प्रत्येक 5 वर्ष के अवसान पर एक वित्त आयोग का गठन करेगा। यह आयोग निम्न विषय पर अपनी सिफारिशें करेगा– (अ) ऐसे करों, शुल्कों, पथकरों और फीस आदि का दर्शाना जो पंचायतों को प्रदान की जा सके। (ब) राज्य की संचित निधि में पंचायतों के लिये सहायता अनुदान। (स) पंचायतों में वित्तीय स्थिति के सुधार के लिये उपाय करना।
7. **निर्वाचन–** पंचायतों के निर्वाचन राज्य निर्वाचन आयोग करेगा।
8. पंचायतों को स्थानीय महत्व के सभी कार्य सौंपने का प्रावधान होगा। विधान में इनकी एक विस्तृत सूची भी बनाई गई है।

मूल्यांकन– संवैधानिक व्यवस्था हो जाने से अब पंचायती राज सरकारें भारतीय संविधान का हिस्सा बन गई हैं। इससे इन्हें सकारात्मक एकरूपता मिली है। 73वें संविधान संशोधन अधिनियम का नकारात्मक बिन्दु यह है, कि इसमें राजनीतिक दल की भूमिका को स्पष्ट रूप से परिमार्जित नहीं किया गया है। इसी प्रकार पंचायती राज संस्थाओं और स्थानीय नौकरशाहों के बीच समस्याओं के बारे में अधिनियम चुप है। इसलिये इनकी सफलता हर राज्य की सरकार पर निर्भर करती है।

पंचायती राज की राज्य राजनीति– पंचायती राज चूंकि राज्य का विषय अभी भी है, इसलिये संवैधानिक दृष्टि से पंचायती राज की स्थापना का सर्वाधिक प्रभाव राज्यों की राजनीति पर पड़ा है। इससे निम्न प्रकार से राज्य राजनीति प्रभावित हुई है–

1. इससे राजनीतिक दल यह समझ गये हैं, कि विधानसभा में और यहां तक कि लोकसभा में भी निर्वाचनों में सफलता प्राप्त करने के लिये पहले पंचायतों पर कब्जा करना अनिवार्य हो गया है।

2. सरपंचों, प्रधानों तथा जिला सरपंचों के माध्यम से ग्रामीण नेतृत्व विकसित हो रहा है।
3. अब यह स्पष्ट हो गया है, कि राज्य राजनीति और भारत की राजनीति की कुंजी अब गांवों के हाथ में होगी जिसका पंचायतों पर कब्जा होगा। इसलिये भारतीय जनता पार्टी जो अब तक शहरी प्रमुख पार्टी थी अब ग्रामोन्मुख हो रही है। पंचायती राज के माध्यम से भारत के स्थानीय शासन की एक नयी और सजीव प्रणाली विकसित हो रही है।

इसका निम्नलिखित प्रभाव पड़ा है–

1. जिला प्रशासन और सामुदायिक विकास की नौकरशाही को पहली बार सशक्त ग्रामीण जनभागीदार नेतृत्व का सामना करना पड़ रहा है।
2. इससे कांग्रेस की ताकत बढ़ी है, क्योंकि उसका जाल पहले ही गांवों में फैला है।
3. राजनीतिक अस्थिरता वाले राज्यों में इसका महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है, क्योंकि गांवों के नेताओं के साथ जोड़–तोड़ बिठाने का काम पहले से जटिल हो गया है।
4. इसका सबसे ज्यादा फायदा कांग्रेस को ही मिला है। कांग्रेस के आंतरिक ढांचे पर भी इसका असर पड़ा है। पार्टी के कार्यकर्ताओं के अवसर बढ़े हैं। नवयुवकों को मौका मिला है। दूसरी ओर निचले स्तर से कांग्रेस में घुसपैठ होने में नयी समस्यायें भी सामने आई हैं। स्थानीय स्तर की गुटबंदी अब ऊपर के स्तर तक पहुंचने लगी है।
5. पंचायती राज का दीर्घकालीन प्रभाव यह है कि ग्रामीण राजनीति में गतिशीलता आई है और प्रतिस्पर्धा उत्पन्न हुई है। दूसरा लाभ यह हुआ है कि अब कोई दल तभी पनप सकता है जब उसमें पर्याप्त अनुशासन हो। अनुशासनहीनता कांग्रेस की कमजोरी रही है। अब यह कमजोरी अन्य दलों में भी आने लगी है।
6. पंचायती संस्थाओं के माध्यम से सम्पर्क सूत्र की राजनीति का विकास हुआ है। गांव जिलों और राज्यों के मुख्यालयों से जुड़ने लगे हैं। इनका परस्पर एक–दूसरे पर प्रभाव पड़ने लगा है।
7. पंचायती राज संस्थाओं से पिछड़ी हुई जातियों में नयी चेतना का विकास हुआ है और पारंपरिक उच्च जातियों की स्थिति में ह्रास हुआ है। महिलाओं में कुछ चेतना आई है, परन्तु अनुसूचित जाति, जनजाति की स्त्रियों के व्यवहार में अभी कोई बदलाव नहीं आया है।
8. गांवों में कहीं–कहीं गुटबंदी और हिंसा के भी उदाहरण मिलते हैं।

उपरोक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि पंचायती राज एक नया प्रयोग है। इसके अच्छे परिणाम भी निकल सकते हैं और दुष्परिणाम भी। यह इस व्यवस्था के क्रियान्वितीकरण पर निर्भर करता है। इसका सबसे बड़ा दुष्परिणाम यह है कि राजनीति के जो दोष हैं, भ्रष्टाचार के रूप में उसका विकेन्द्रीकरण हुआ है। राजनीति में नौकरशाही का हस्तक्षेप और बोलबाला अभी भी समाप्त नहीं किया जा सका है। आज भी राजनेता नौकरशाहों का कुछ नहीं बिगाड़ पा रहे हैं।

प्रश्न–10. वर्तमान जनजातीय राजनीतिक संगठन का वर्णन कीजिए।

अथवा

वर्तमान जनजातीय राजनीतिक संगठन पर एक लेख लिखिए।

अथवा

टिप्पणी लिखिये–

(1) उत्तर–पूर्वी जनजातियों में राजनैतिक संगठन

(2) मध्य–भारतीय जनजातियों में राजनीतिक संगठन

(3) दक्षिण–भारतीय जनजातियों में राजनीतिक संगठन।

उत्तर– राजनीतिक व्यवस्था का सम्बन्ध सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्थाओं के उस पक्ष से होता है, जिसका सरोकार समाज के अन्तर्गत भौतिक बल प्रयोग के नियंत्रण एवं सामंजस्य तथा विभिन्न वर्गों और उनके सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों के सामंजस्य से होता है। भारत की जनजातियाँ अपनी विभिन्न औद्योगिक दशाओं और पारिस्थितिकीय परिवेशों के कारण विभिन्न राजनीतिक व्यवस्थाओं को प्रदर्शित करती हैं। एक ओर तो कावार, चेंचू, इरुला आदि दक्षिण भारत की यायावर, वनोपज, संग्रहक–शिकारी जनजातियाँ हैं जो अभी भी अत्यन्त निम्न प्रौद्योगिक स्तर पर अपना जीवन व्यतीत कर रही हैं, तो दूसरी ओर मेघालय की खासी एवं गारो पहाड़ियों तथा अरुणाचल प्रदेश की आपतानी जैसी जनजातियाँ हैं, जो कृषि तथा उद्यम तथा कृषि की उच्च विकसित रीतियों की सहायता से बड़े आराम का जीवन व्यतीत कर रही हैं। जनजातियों में अन्तर हम उनके हिन्दुओं तथा ईसाइयों के साथ घनिष्ठता के आधार पर भी कर सकते हैं। एक ओर छोटा नागपुर क्षेत्र तथा छत्तीसगढ़ की हिन्दू जनजातियाँ हैं तो दूसरी ओर नागालैंड, मेघालय, असम तथा मिजोरम की ईसाई जनजातियाँ हैं जो अत्यन्त उच्च एवं विकसित स्तर पर जीवन जीती हैं। ये उदाहरण इस बात के संकेतक हैं कि अब भारत की जनजातियाँ एक अखंड जनसमूह न होकर विभिन्न सामाजिक–सांस्कृतिक परिस्थितियों के अन्तर्गत रहने वाले विविध सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक समूहों का संग्रह हैं। इसी विविधता के परिणामस्वरूप, इन जातियों ने राजनैतिक संगठनों का एक विस्तृत क्षेत्र विकसित कर लिया है। इस प्रकार इन जातियों में हम एकतंत्रीय तथा केन्द्रीय सत्ता के साथ–साथ उच्च विकेन्द्रित राजनीतिक संगठनों का एक समूह पाते हैं। तीन भौगोलिक मंडलों में विभाजित भारत की जनजातियों के राजनैतिक संगठन का वर्णन निम्नवत् है–

उत्तर–पूर्वी जनजातियों में राजनीतिक संगठन– भारत के इस भौगोलिक मंडल में असम, मेघालय, अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड, मणिपुर, मिजोरम तथा त्रिपुरा शामिल हैं। गारो, खासी, जैन्तिया, लुशाई, अपातानी एवं विभिन्न नागा जनजातियाँ भारत के धीन क्षेत्र में बसने वाली जनजातियाँ हैं। असम की जनजातियों ने जनतांत्रिक राजनीतिक संगठन को संस्थापित किया है। इनमें से अधिकांश जनजातियाँ भूमि के सामूहिक स्वामित्व को मानती हैं और भूमि पर वैयक्तिक अधिकार को अच्छा नहीं मानतीं। एक गाँव के लोग अपनी इच्छानुसार खेती करने के लिए स्वतंत्र होते हैं। हालांकि विभिन्न परिवारों के आर्थिक स्तर भिन्न हैं फिर भी इस विविधता ने किसी प्रकार के सामाजिक भेदभाव को बढ़ावा नहीं दिया।

ये लोग बिना गाँव प्रणाली के ग्राम समुदायों में अपने शासक के अधीन होते हैं जो शेष ग्रामों से स्वतंत्र होते हैं। खासी लोगों में मुखिया की मर्यादा ज्येष्ठतम बहिन के ज्येष्ठतम पुत्र द्वारा वंशानुगत होती है। उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके ज्येष्ठतम भाई अथवा नाती और यदि पुरुष उत्तराधिकारियों का अभाव होता है तो ज्येष्ठतम बहिन को उत्तराधिकार का हक होता

है। खासी क्षेत्र तो राजनीतिक रूप से बीस खासी राज्यों में बँटा हुआ था, जो स्वतंत्र थे। यद्यपि प्राचीन समय में "सियम" नामक प्रमुख मुखिया होता था लेकिन प्रशासन जनतांत्रिक था।

इसी प्रकार लुशाई जनजाति का मुखिया खासी "सियम" की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली होता है, लेकिन प्रायः ग्राम के वरिष्ठ व्यक्तियों की राय अथवा सलाह की अनदेखी करना उनके लिए कठिन होता है। यद्यपि ये पद वंशानुगत होते हैं। प्रशासन पूर्णरूपेण जनतांत्रिक सिद्धान्तों के अनुसार चलाया जाता है। उत्तरी कछार जनपद की जनजातियों के वंशानुक्रम तथा निर्वाचन के सिद्धान्त दोनों के साथ कार्य करते हैं। जनजातीय समस्यायें एक खुले न्यायालय में ग्राम के सभी पुरुषों की उपस्थिति में सुलझाई जाती हैं। ग्राम के बुर्जुर्गों द्वारा एक अनौपचारिक परिषद का गठन किया जाता है। यह परिषद ग्राम अथवा ग्रामों के समूह के समक्ष आने वाली समस्याओं पर सदस्यों के साथ आपस में विचार–विमर्श करते हैं।

गारो जनजाति का राजनीतिक संगठन भी जनतांत्रिक नियमों के अनुसार संचालित होता है। वास्तव में गारो लोगों का कोई मुखिया नहीं होता है। एक मुखिया केवल नाम का प्रमुख होता है जबकि महत्वपूर्ण मामलों का निर्णय बुजुर्गों अथवा परिवारों के मुखियाओं द्वारा गठित ग्राम्य परिषद द्वारा किया जाता है।

नागा जनजातियों के राजनीतिक संगठन में बहुत विविधता पाई जाती है। कुछ नागा जनजातियाँ प्रमुखों के अधीन होती हैं, जो उन पर लगभग एकतंत्रीय प्रशासन करते हैं, जबकि अन्य जनजातियाँ जनतांत्रिक ग्राम्य परिषदों का गठन करती हैं। जिनमें मुखिया को नाममात्र का अधिकार होता है। अधिकांश नागा जनजातियाँ सदैव एक–दूसरे से युद्ध करती रही हैं। यह हिंसक प्रतिरोध उनका नियम है किन्तु इसे सामाजिक–ऐतिहासिक दृष्टिकोण से देखा जाना चाहिए। ऐसी परिस्थितियों में भी इनमें लचीले प्रकार का राजनीतिक संगठन हमेशा मौजूद रहता है। कोन्याक नागा एक प्रमुख के अधीन होते हैं। यह प्रमुख अति पवित्र तथा निषिद्ध व्यक्ति होता है और सामान्यतः अनेक ग्रामों पर पूरे अधिकार के साथ शासन करता है। उसे जनजातीय भाग्ययुग का अथवा उनके जीवन सिद्धान्त का ज्ञाता माना जाता है। कुछ ग्रामों में यह इतना अधिक पूज्य होता है, कि उसे भूमि स्पर्श की भी अनुमति नहीं दी जाती तथा यात्रा में उसे उठाकर ले जाया जाता है।

अंगामी नागाओं में आधारित इकाई ग्राम नहीं है बल्कि 'जनसंख्या का एक उपमंडल होता है, जो इस प्रकार इकट्ठा होकर "खेल" या "टेप्फू" कहलाता है, जो बहिर्विवाही होता है तथा जिसका वंश एक ही पूर्वज से माना जाता है। इन लोगों में गुटबाजी तथा हिंसात्मक लड़ाइयाँ अधिक होती हैं। नागा जनजातियों के राजनीतिक संगठन को सदैव दैवीय तथा प्राकृतिक खतरों से सुरक्षात्मक संरक्षण की आवश्यकता रही है।

मध्य भारतीय जनजातियों का राजनीतिक संगठन– छत्तीसगढ़, झारखंड तथा उड़ीसा की जनजातियाँ भारत की सबसे बड़ी जनजातीय पट्टी का निर्माण करती हैं। इन जनजातियों में कुल एकात्मकता पर आधारित राजनीतिक संगठन के कुछ गुण पाये जाते हैं। बुजुर्गों की परिषद की सहायता से ग्राम का प्रमुख, ग्राम का प्रशासन देखता है। इस परिषद में आम राय अथवा बहुमत के आधार पर निर्णय लिये जाते हैं और ग्राम प्रमुख को बहुमत के निर्णय को उलटने का अधिकार नहीं होता।

गोंड, ओराँव तथा भील संख्या की दृष्टि से इस मंडल की सबसे महत्वपूर्ण जनजातियाँ हैं। ओराँव लोगों ने ''परहा'' संगठन का विकास किया है जो अनके पड़ोसी ग्रामों का राज्य मंडल (संघ) होता है जिसके केन्द्रीय संगठन को ''परहा'' कहा जाता है। प्रत्येक ओराँव के संगठन ''परहा'' में अनेक गाँव होते हैं। इनमें से एक गाँव राजा ग्राम कहलाता है, दूसरा दीवान ग्राम, तीसरा पानेर ग्राम (राजा का लिपिक), चौथा कोतवाल ग्राम इत्यादि। ऐसे ग्राम, जिनका इस प्रकार कोई नाम नहीं होता है वे प्रजा ग्राम कहलाते हैं। ''राजा ग्राम'', ''परहा'' का प्रमुख ग्राम होता है। हालांकि ''परहा'' के प्रत्येक कार्यकर्ता के पास कोई विशिष्ट पद चिन्ह नहीं होता। प्रत्येक परहा ग्राम का अपना विशिष्ट झंडा तथा बिल्ले होते हैं जिसका प्रयोग किसी दूसरे ग्राम द्वारा नहीं किया जा सकता। कानून तथा व्यवस्था बनाये रखना, किसी दूसरे ग्राम में झगड़ों का निपटाना भी परहा परिषद के ही कार्य होते हैं। संथालों तथा मलेरों में निम्नतम राजनीतिक अधिकारी ग्राम प्रमुख होता है जिसे ''माझी'' कहते हैं। वह (माझी) और ग्राम के बुजुर्ग लोग आपस में मिल बैठकर गाँव की समस्याओं के सम्बन्ध में बातें करते हैं। ग्राम प्रमुख विवाहों तथा खुशियों के अवसर पर उपहार पाने का अधिकारी होता है और उसके पास किराया मुक्त भूमि होती है। माझी दीवानी तथा नैतिक प्राधिकारी होता है। दीवानी मामलों में उपप्रमुख जिसे ''परानिक'' कहते हैं, द्वारा सहायता दी जाती है।

मुंडा जनजाति के ग्राम प्रमुख को मुंडा नाम से ही जाना जाता है जबकि उसके धार्मिक प्रति स्थायी को ''पाहन'' कहते हैं। लगभग बारह ग्राम मिलाकर एक पट्टी अथवा ''परहा'' का निर्माण करते हैं जिसका मुखिया ''मानकी'' कहलाता है जो सामान्यतः ग्राम प्रमुखों के समूह में सर्वाधिक प्रभावशाली होता है। मुंडा तथा पाहन पुश्तैनी अधिकारी होते हैं।

गोंड लोगों की राजनीतिक इकाई ग्राम समुदाय है। ग्राम प्रमुख को ''पटेल'', ''मंडल'' अथवा ''मोई'' कहा जाता है। गाँव के मामलों को तय करने में गाँव के बुजुर्ग उसकी सहायता करते हैं। यद्यपि बस्तर के हिन्दू राजा के पास गोंडों पर कोई राजनीतिक अधिकार नहीं है, फिर भी वह समस्त गोंड समूहों में परंपरागत तौर पर अति श्रद्धा का केन्द्र होता है। बाईसन हॉर्न मारिया लोगों के राजनीतिक संगठन में विशेषता यह है धार्मिक कर्मकांडों तथा समारोहों के लिए उत्तरदायी पुरोहित तथा चिकित्सक ग्राम प्रमुख से अधिक प्रभावशाली होता है।

दक्षिण भारतीय जनजातियों का राजनीतिक संगठन– यह जनजातीय मंडल इसलिए अधिक महत्वपूर्ण है कि यह विश्व की आर्थिक तथा प्रौद्योगिकी की दृष्टि से सबसे अधिक पिछड़ी जनजातियों का निवास स्थान है। इस मंडल की अधिकांश जनजातियाँ वनों अथवा कृषक ग्रामों के सीमान्त में छोटे–छोटे समूहों में रहती हैं। प्रायः वे अपना अलग जीवन व्यतीत करते हैं। वे बाहरी लोगों से सम्पर्क करने तथा उनके हस्तक्षेप से बचते हैं और वे अकेले रहना चाहते हैं।

निकोबार की जनजातियाँ अब भी आर्थिक विकास के संग्रहण आखेट के बल पर जीवन व्यतीत कर रही हैं। हालांकि उनमें से अधिकांश घुमक्कड़ समूह हैं और वे एक निश्चित भौगोलिक मंडल के अन्तर्गत भ्रमण करते हैं। प्रत्येक स्थानीय समूह में गाँव से दस परिवार होते हैं। प्रत्येक समूह का अपना प्रमुख होता है। स्थानीय समूह स्वतंत्र रूप से रहते और कार्य करते हैं, फिर भी विशिष्ट शिकार–आयोजनों अथवा त्यौहारों के अवसरों पर अस्थायी रूप

से मिल जाते हैं। स्थानीय समूहों के प्रमुख अपने–अपने स्थानीय समूहों के मामलों को सुलझाते हैं। कुछ घुमक्कड़ जनजातियों में एक बस्ती के प्रमुख जैसी संस्था नहीं होती है। जब कभी समस्यायें पैदा होती हैं और उस पर वे निर्णय लेना जरूरी होता है तब एकाकी परिवारों के प्रमुख साधारणतया एकत्र होते हैं और समूह के मामलों को सुलझाते हैं। इसी प्रकार अल्लार तथा अरन्डार जातियों के भी प्रमुख नहीं होते। इन समुदाय के मामलों की बुजुर्गों के समूहों में चर्चा की जाती है तथा लोग इसका निर्णय मानने के लिए बाध्य होते हैं, जो असहमत होते हैं वे उस समूह को छोड़कर दूसरे समूह में शामिल हो जाते हैं। कादार लोगों में (जो कि भोजन संग्रहण करने वाली एक जनजाति है) प्रमुख की वंशानुगत संस्था का अस्तित्व अब खत्म हो चुका है।

केरल की अदियार जनजाति के संगठन प्रमुख का पद वंशानुगत होता है। यदि कोई पुत्र इस पद हेतु उपयुक्त नहीं होता है तो उसका भतीजा उस पद को विरासत में प्राप्त करता है। प्रमुख का एक विशिष्ट पदनाम होता है किन्तु वह एक निरंकुश शासक नहीं होता। वह केवल बुजुर्गों की बैठकों की अध्यक्षता मात्र करता है जिसमें समुदाय के मामलों पर विचार–विमर्श होता है। फिर भी विवाह व तलाक जैसे महत्वपूर्ण कार्यों में उसकी स्वीकृति जरूरी होती है और वह अंतिम संस्कार सम्बन्धी समारोहों की भी अध्यक्षता करता है।

लघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर-

प्रश्न–(1) कृषक समाज की विशेषतायें लिखिये।

उत्तर– **कृषक–समाज की विशेषतायें–** उपरोक्त अध्ययन के आधार पर कृषक–समाज की निम्नलिखित विशेषतायें हैं–

1. कृषक कहे जाने के लिये भूमि का स्वामी होना जरूरी नहीं है।
2. कृषक–समाज के सदस्यों की आजीविका का प्रमुख साधन भूमि पर नियन्त्रण रखना तथा भूमि को जोतना है।
3. कृषक–समाज में ऐसे लोग भी सम्मिलित हैं जिनके पास अपनी स्वयं की भूमि नहीं है परन्तु जो दूसरे भू–स्वामी की भूमि पर कृषि करते हैं।
4. कृषक–समाज आदर्श रूप में एक अविभेदीकृत और अस्तरीकृत समाज है।
5. कृषक–समाज की अपनी विशिष्ट परम्परागत संस्कृति होती है।
6. कृषक–समाज परम्परागत तरीके से ही जीवन–व्यतीत करता है।
7. कृषि के द्वारा ये लोग अपनी आजीविका चलाते हैं और अपनी अधिकांश आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं।
8. कृषक समाज के लिये भूमि पूँजी नहीं होती। अतः वे खेती को व्यापार नहीं मानते हैं।
9. कृषक समाज की मानसिकता सभी समाजों में एक समान होती है।
10. कृषक समाज एक छोर पर आदिम और दूसरे छोर पर आधुनिक होता है।

प्रश्न–(2) जनजातियों में ऋणग्रस्तता के तीन कारण लिखिये।

उत्तर– जनजातियों में ऋणग्रस्तता के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं–

(1) आर्थिक कारण– धन का अभाव ऋणग्रस्तता का सर्वप्रमुख कारण है शासन द्वारा वन–संरक्षण के लिये बनाये गये कानूनों से इनकी आय का मूल स्त्रोत समाप्त हो गया है।

कृषि में भी पुरानी तकनीक के कारण कम उत्पादन होने से इनके पास धन का अभाव रहता है। जिसे पूरा करने के लिये इन्हें ऋण लेना पड़ता है।

(2) **सामाजिक कारण**– जनजातीय सामाजिक व्यवस्था में दायित्व और सामाजिक मूल्यों का पालन कठोरता के साथ किया जाता है। विवाह, जन्म, मृत्यु आदि के अवसर पर सामाजिक भोज के लिये इन्हें ऋण लेना पड़ता है। जाति पंचायत द्वारा लगाये जाने वाले जुर्माने की राशि भी कई बार इन्हें ऋण लेने पर विवश करती है।

(3) **मनोवैज्ञानिक कारण**– पीढ़ी-दर-पीढ़ी ऋणग्रस्त रहने से जनजातीय समाज की मानसिक स्थिति भी इस प्रकार की हो जाती है कि बिना ऋण लिये वे कोई काम करते ही नहीं हैं जिससे वे हमेशा ऋणग्रस्त बने रहते हैं।

प्रश्न–(3) 73वाँ संवैधानिक संशोधन क्या है? समझाइये।

उत्तर– 73वाँ संवैधानिक संशोधन– 73वें संविधान संशोधन ग्रामीण स्थानीय सरकार से संबंधित हैं, जिन्हें पंचायती राज संस्थानों के रूप में भी जाना जाता है। इसका विवरण निम्नवत् प्रस्तुत है–

(1) 73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 तत्कालीन प्रधानमंत्री पी.वी. नरसिंहाराव के कार्यकाल में प्रभावी हुआ।

(2) 24 अप्रैल, 1993 से 73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम लागू हुआ था, अतः 24 अप्रैल को "राष्ट्रीय पंचायत दिवस" के रूप में मनाया जाता है।

(3) इस संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा संविधान में भाग-9 जोड़ा गया था।

(4) 73वें संविधान संशोधन द्वारा संविधान में 11वीं अनुसूची जोड़ी गई और इसके तहत पंचायतों के अन्तर्गत 29 विषयों की सूची की व्यवस्था की गई।

73वें संवैधानिक संशोधन से हुए मुख्य बदलाव– इनका विवरण निम्नलिखित है–

(1) **त्रि-स्तरीय बनावट**– इस संशोधन के पश्चात् सभी प्रदेशों में पंचायती राज व्यवस्था का ढाँचा त्रि-स्तरीय हो गया, जिससे सबसे नीचे यानी पहले स्थान पर ग्राम पंचायतें आती हैं, बीच में मंडल आते हैं जिन्हें खंड या तालुका भी कहते हैं और अन्त में सबसे ऊपर जिला पंचायतों का स्थान आता है।

(2) **प्रत्यक्ष चुनाव**– संशोधन से पूर्व कई स्थानों पर चुनावों की कोई भी प्रत्यक्ष एवं औपचारिक प्रणाली नहीं थी, परन्तु इस 73वें संवैधानिक संशोधन के माध्यम से यह व्यवस्था की गई कि अभी स्तरों पर चुनाव सीधे जनता करेगी और प्रत्येक पंचायती निकाय की अवधि 5 वर्षों की होगी।

(3) **आरक्षण**– सभी पंचायती संस्थानों में एक-तिहाई सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित की गईं और साथ ही सभी स्तरों पर अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लिए भी आरक्षण की व्यवस्था की गई।

(4) **राज्य चुनाव आयुक्त**– राज्यों के लिए यह अनिवार्य किया गया कि वे राज्य चुनाव आयुक्त की नियुक्ति करें, इन आयुक्तों को राज्य में सभी स्तरों पर पंचायती संस्थानों के चुनाव करने की जिम्मेदारी दी गई।

इकाई-4

दीर्घउत्तरीय प्रश्नोत्तर-

प्रश्न– 1. जनजातियों की प्रमुख समस्याओं पर प्रकाश डालिये।

अथवा

भारतीय जनजातीय की प्रमुख समस्यायें कौन-सी हैं? समझाइये।

अथवा

जनजातीय लोगों की समस्याओं के समाधान के लिये कौन से सुझाव दिये गये हैं? समझाइये।

अथवा

जनजातियों की प्रमुख समस्यायें क्या हैं? इन समस्याओं के समाधान के लिये सुझाव दीजिये।

अथवा

जनजातियों की प्रमुख समस्यायें क्या हैं? इन्हें दूर करने के लिये कुछ व्यावहारिक सुझाव दीजिये।

अथवा

भारत में जनजातीय समस्याओं पर निबन्ध लिखिये।

अथवा

भारत में जनजातियों की मुख्य समस्यायें कौन-सी हैं? उनके विविध कारणों की विवेचना कीजिये।

अथवा

भारतीय जनजातियों की प्रमुख समस्याओं का वर्णन कीजिये।

उत्तर– भारत की सभी जनजातियाँ पहाड़ी भागों, जंगलों, दलदली भूमि तथा ऐसे स्थानों पर निवास करती हैं, जहाँ पर सड़कों का अभाव है और वर्तमान यातायात एवं संचार के साधन अभी वहाँ उपलब्ध नहीं हो पाये हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि उनसे सम्पर्क करना एक कठिन कार्य हो गया है। अतः उनकी आर्थिक, शैक्षणिक, स्वास्थ्य सम्बन्धी एवं राजनीतिक समस्याओं का निराकरण नहीं हो पाया है।

भारतीय जनजातियों की समस्यायें– भारतीय जनजातियों की प्रमुख समस्यायें निम्नलिखित हैं–

(1) **आर्थिक समस्यायें**– नवीन सरकारी नीति के कारण जनजातीय लोगों को आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। इनकी प्रमुख आर्थिक समस्यायें निम्नलिखित हैं–

(i) **स्थानान्तरित खेती की समस्या**– कृषि-कार्यों में लगी जनजातियों में से कुछ स्थानांतरित खेती करती हैं। और जब भूमि खेती योग्य नहीं रहती है तब वे उसे छोड़कर अन्य स्थान पर इसी प्रकार खेती करते हैं। इससे भूमि का कटाव बढ़ जाता है, जंगलों में कीमती लकड़ी जल जाती है और उपज भी कम हो जाती है। परिणामस्वरूप जनजातीय लोगों को आर्थिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है।

(ii) **जंगलों से सम्बन्धित समस्यायें**– पूर्व में जनजातियों का जंगलों पर पूर्ण अधिकार होता था। वे जंगलों से प्राप्त वस्तुओं को बेचकर अपनी आजीविका चलाते थे, लेकिन अब सरकार की नयी नीति के कारण जंगलों को काटने, शिकार करने, व शराब बनाने पर भी नियंत्रण लगा दिया गया है। इस कारण इन्हें उद्योगपतियों,

व्यापारियों, ठेकेदारों एवं साहूकारों के यहाँ पर कार्य करने के लिये मजबूर होना पड़ा है।

भारतीय जनजातियों की समस्यायें
(1) आर्थिक समस्यायें
(2) सांस्कृतिक समस्यायें
(3) सामाजिक समस्यायें
(4) स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्यायें
(5) शिक्षा सम्बन्धी समस्यायें
(6) राजनीतिक चेतना की समस्या
(7) एकीकरण की समस्या

(iii) नई भूमि व्यवस्था एवं कृषि भूमि का अभाव– भूमि सम्बन्धी नई व्यवस्था के कारण भूमि से जनजातियों का अधिकार समाप्त हो गया। ये लोग पहाड़ी क्षेत्रों एवं घने जंगलों में रहते हैं जहाँ की भूमि कृषि–योग्य नहीं है। इनकी अज्ञानता एवं अशिक्षा का लाभ उठाकर साहूकारों ने इनकी भूमि को इनसे हड़प लिया है।

(2) **सांस्कृतिक समस्यायें–** आदिवासियों का सम्पर्क बाहरी संस्कृतियों से हुआ। इनके अत्यधिक सम्पर्क के बाद अनेक समस्यायें उत्पन्न हुई हैं, जो कि निम्नलिखित हैं–

(i) धार्मिक समस्यायें– कुछ जनजातीय लोगों पर हिन्दू धर्म का प्रभाव पड़ा है। तो कुछ पर ईसाई धर्म का प्रभाव पड़ा है। इसके परिणामस्वरूप कई जनजातीय लोगों ने धर्म परिवर्तन भी कर लिया है। जिससे इनकी एकता को आघात पहुंचा है और इनके जीवन में असंतोष, तनाव एवं विघटन पैदा हुआ है।

(ii) भाषा सम्बन्धी समस्यायें– बाह्य संस्कृतियों से सम्पर्क होने के कारण अनेक जनजातियों में दो भाषावाद की समस्या उत्पन्न हुई है। इसलिये इनके सांस्कृतिक मूल्यों एवं आदर्शों में कमी आई है।

(iii) अनुकूलन की समस्या– वर्तमान में नये उद्योग–धन्धों, खानों एवं चाय बागानों का कार्य उन स्थानों पर होने लगा है जहाँ आदिवासी लोग निवास करते थे। इसके फलस्वरूप ये नये औद्योगिक एवं नगरीय संस्कृति के सम्पर्क में आये। इसके परिणामस्वरूप नवीन सांस्कृतिक समस्याओं ने जन्म लिया।

(3) **सामाजिक समस्यायें–** नगरीय और सभ्य समाजों के सम्पर्क के कारण आदिवासियों में कई सामाजिक समस्याओं ने जन्म लिया। ये समस्यायें निम्नलिखित हैं–

(i) बाल–विवाह की समस्या– जनजातीय लोगों में विवाह साधारणतः युवा होने पर होते थे। पर अब उनमें बाल विवाह होने लगे हैं।

(ii) कन्या–मूल्य की समस्या– कुछ समय पहले तक जनजातीय लोगों में कन्या–मूल्य वस्तुओं के रूप में चुकाया जाता था, लेकिन अब मुद्रा अर्थव्यवस्था के कारण अब कन्या–मूल्य की माँग नकद के रूप में बढ़ती जा रही है। इसके परिणामस्वरूप जो लोग बढ़ते हुये कन्या–मूल्य को नकद के रूप में नहीं चुका पाते, उनके लिये विवाह करना एक कठिन समस्या बन गया है।

(iii) वेश्यावृत्ति एवं यौन–रोगों की बढ़ोत्तरी– जनजातीय लोगों की निर्धनता का लाभ उठाकर साहूकार, व्यापारी एवं कुछ अजनजातीय लोग उनकी स्त्रियों के साथ

अनुचित रूप से यौन–सम्बन्ध स्थापित कर लेते हैं जिससे वेश्यावृत्ति जैसी समस्या पनपने लगती है।

(4) **स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्यायें–** जनजातीय लोगों को अनेक स्वास्थ्य–सम्बन्धी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। ये समस्यायें निम्नलिखित हैं–

(i) कपड़ों का अभाव– सभ्य समाज के सम्पर्क में आने पर वे लोग शरीर पर कपड़े पहनने लगे। ये लोग निर्धनता के कारण एक ही वस्त्र अनेक दिनों तक पहने रहते हैं जिससे उनमें कई चर्म रोग एवं अन्य रोग फैल जाते हैं।

(ii) विभिन्न प्रकार के रोग व चिकित्सा–सुविधाओं का अभाव– अधिकांश जनजातियाँ घने जंगलों, पहाड़ी भागों एवं तराई वाले क्षेत्रों में निवास करती हैं। इन क्षेत्रों में अनेक बीमारियां पाई जाती हैं। इन जनजातियों में चर्म रोग, मलेरिया, पीलिया, चेचक, रोहे, अपच, एवं गुप्तांगों की बीमारियाँ पाई जाती हैं। इन बीमारियों के इलाज के लिये चिकित्सालयों, कुशल डॉक्टरों तथा आवश्यक दवाओं का अभाव है।

(iii) सन्तुलित आहार एवं पेयपदार्थों की कमी– जनजातीय लोगों को पौष्टिक भोजन एवं आवश्यक पेय–पदार्थ उपलब्ध नहीं हो पाते हैं। इसलिये सन्तुलित एवं विटामिन–युक्त भोजन के अभाव में भी इन लोगों का स्वास्थ्य लगातार गिरता जा रहा है।

(5) **शिक्षा सम्बन्धी समस्यायें–** जनजातियों में शिक्षा का अभाव है और वे अज्ञानता के अन्धकार में जी रही हैं। अशिक्षा के कारण वे अनेक अन्धविश्वासों, कुरीतियों एवं कुसंस्कारों से घिरी हुई हैं।

(6) **राजनीतिक चेतना की समस्या–** जनजातियों की परम्परागत राजनीतिक व्यवस्था अपने ही ढंग की थी जिनमें मुखिया ही प्रशासन सम्बन्धी कार्य करते थे। परन्तु आज वे नवीन राजनीतिक व्यवस्था से परिचित हुये हैं यही कारण है कि वे अपनी सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं के प्रति सजग हैं। वे अपने राजनीतिक अधिकारों का प्रयोग अपनी समस्याओं के समाधान में करने लगे हैं। मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, आन्ध्र प्रदेश, असम, बिहार, झारखण्ड, पश्चिम बंगाल एवं तमिलनाडु में इनकी राजनीतिक जागरूकता के कटु परिणाम निकले हैं। प्रशासकों, भू–स्वामियों एवं अजनजातीय लोगों से उनके सम्बन्ध तनावपूर्ण तथा विद्रोह पनपे हैं।

(7) **एकीकरण की समस्या–** भारतीय जनजातियों में अर्थव्यवस्था, समाज व्यवस्था, संस्कृति, धर्म, एवं राजनीतिक व्यवस्था के आधार पर अनेक भिन्नतायें पाई जाती हैं। अतः आज इस बात की आवश्यकता है कि देश एवं जनजातियों की विशिष्ट समस्याओं से मुक्ति पाने के लिये सभी देशवासियों द्वारा सामूहिक प्रयास किये जायें। जनजातियाँ अपने को अन्य लोगों से अलग न समझें, तभी हम गरीबी, शोषण, अशिक्षा, बीमारी, बेकारी और हीन स्वास्थ्य की समस्याओं से निपट सकेंगे।

जनजातीय समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव– जनजातीय समस्याओं के समाधान के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये गये हैं–

(1) आर्थिक समस्याओं को हल करने के लिये जनजातीय परिवारों को कृषि के लिये पर्याप्त भूमि दी जानी चाहिये और उन्हें आधुनिक कृषि के तरीकों से परिचित कराया जाना चाहिये। स्थानांतरित खेती पर रोक लगाई जाये, उन्हें खेती के लिये

बैल, बीज, नये यंत्र तथा कुंये आदि खोदने के लिये कम ब्याज पर ऋण देने की सुविधा दी जानी चाहिये।

(2) सामाजिक समस्याओं को हल करने के लिये बाल विवाह एवं कन्या–मूल्य पर कानूनी रोक लगाने के साथ–साथ इनके विरूद्ध जनमत तैयार किया जाना चाहिये। साथ ही आर्थिक स्थिति सुधारी जाये जिससे वेश्यावृत्ति समाप्त हो सके।

(3) स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं को हल करने के लिये आदिवासी क्षेत्रों में चिकित्सालय, कुशल डॉक्टर एवं दवाईयों का प्रबन्ध किया जाये। उनके लिये पौष्टिक भोजन की व्यवस्था की जाये जिससे इनमें कुपोषण से होने वाली बीमारियों को समाप्त किया जा सके।

(4) शैक्षणिक समस्या को हल करने के लिये आदिवासी जनजातियों के लिये सामान्य शिक्षा की व्यवस्था की जाये। इसके लिये प्राथमिक एवं उच्च शिक्षा के लिये शिक्षण संस्थायें खोली जायें तथा शिक्षा का माध्यम प्रादेशिक भाषा होनी चाहिये। इन लोगों को शिक्षा के अलावा स्कूलों में व्यावसायिक प्रशिक्षण दिया जाये जिससे कि शिक्षा ग्रहण करने के बाद उन्हें बेकारी का सामना न करना पड़े। इसके अतिरिक्त कृषि, पशुपालन, मुर्गी–पालन, मत्स्य–पालन, मधुमक्खी पालन एवं अन्य प्रकार की हस्तकलाओं का उन्हें प्रशिक्षण दिया जाये।

(5) सांस्कृतिक समस्याओं को हल करने के विषय में डॉ. एल्विन का मत है कि ऐसे विश्वविद्यालय की स्थापना की जाये, जिसमें आदिम ललित–कलाओं की रक्षा की जाये। जनजातियों के लिये किये जाने वाले मनोरंजनात्मक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम उन्हीं की भाषा में हों। इससे भाषा की समस्या भी हल होगी। तथा धार्मिक समस्याओं के हल के लिये भी यह आवश्यक है कि तर्क एवं वैज्ञानिक कसौटी के आधार पर धार्मिक अन्धविश्वासों को समाप्त किया जाये।

प्रश्न–2. अनुसूचित जनजातियों के समक्ष कौन–कौनसी प्रमुख समस्यायें हैं ? विवेचना कीजिये।

उत्तर– आधुनिक सभ्य समाज से सम्पर्क, नई प्रशासनिक व्यवस्था, जनजातीय क्षेत्रों में उद्योगों की स्थापना, लोगों द्वारा आर्थिक एवं दैहिक शोषण तथा धर्म–परिवर्तन ने जनजातीय लोगों के समक्ष गंभीर समस्यायें उत्पन्न कर दी हैं। इनमें से प्रमुख समस्यायें निम्नानुसार हैं–

1. **दुर्गम निवास–** अधिकांश जनजातियाँ जंगलों, पहाड़ों तथा ऐसे स्थानों पर निवास करती हैं जहाँ यातायात के साधन नहीं पहुँच पाते। इससे उनसे सम्पर्क स्थापित नहीं हो पाता। अतः एक ओर वे वैज्ञानिक प्रगति के लाभ से वंचित हैं वहीं उनकी विभिन्न प्रकार की समस्याओं का निराकरण भी सम्भव नहीं हो सका है।

2. **आर्थिक समस्यायें–** जनजातियों की प्रमुख आर्थिक समस्यायें निम्नानुसार हैं–

(i) **स्थानान्तरित खेती की समस्या–** कृषि करने वाली जनजातियाँ स्थानान्तरित खेती करती हैं। वे जंगल को आग लगाकर उस भूमि पर खेती करते हैं। फिर उसे छोड़कर वे दूसरी जगह इसी प्रकार खेती करते हैं। इससे भूमि का कटाव होता है और मूल्यवान वनोपज नष्ट हो जाती है। इससे इन्हें आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

(ii) **नई भूमि–व्यवस्था–** नवीन भूमि सम्बन्धी कानूनों के कारण उनकी स्थानान्तरित खेती को समाप्त कर दिया। वे ऐसे क्षेत्रों में निवास करते हैं जहाँ कृषि–भूमि का अभाव है। सरकार ने जहाँ इनको कृषि हेतु पट्टे वितरित किये वहीं महाजनों और सेठ–साहूकारों ने इनकी अज्ञानता एवं आर्थिक परिस्थिति का लाभ उठाकर वह जमीनें हड़प लीं। इससे बाध्य होकर इन्हें श्रमिकों के रूप में ही कार्य करना पड़ रहा है।

(iii) **ऋणग्रस्तता की समस्या–** जनजातियों में वस्तु–विनिमय की प्रथा प्रचलित थी परन्तु अब नई आर्थिक व्यवस्था लागू हुई जिसको ये समझ नहीं सके। उनकी अज्ञानता एवं विवशता का लाभ उठाकर व्यापारियों, सेठ–साहूकारों तथा मादक–द्रव्य बेचने वालों ने इन्हें खूब ठगा। एक बार ऋण लेने पर वे हमेशा कर्ज में डूबे रहे और ब्याज पर ब्याज चुकाते रहे।

(iv) **जंगलों से सम्बन्धित समस्यायें–** पहले जंगलों पर जनजातियों का ही अधिकार था। वे वनोपज से अपना गुजारा करते थे परन्तु अब जंगलों पर सरकार का आधिपत्य होने से वे अब न तो वनोपज प्राप्त कर सकते हैं और न ही शिकार कर सकते हैं। इस प्रकार बाध्य होकर उन्हें श्रमिकों के रूप में कार्य करना पड़ रहा है।

(v) **कृषि और उद्योग में लगे श्रमिकों की समस्यायें–** जनजातीय लोगों को आर्थिक विवशता के कारण चाय बागानों, कृषि–क्षेत्रों, खदानों एवं उद्योगों में श्रमिकों के रूप में कार्य करना पड़ रहा है। यहाँ उन्हें खराब कार्य की दशाओं एवं कम मजदूरी जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

3. सांस्कृतिक समस्यायें– जनजातियों की प्रमुख सांस्कृतिक समस्यायें निम्नानुसार हैं–

(i) **धार्मिक समस्यायें–** हिन्दू एवं ईसाई धर्म के सम्पर्क में आने एवं धर्म–परिवर्तन करने के कारण इनमें अनेक समस्यायें उत्पन्न हुई हैं। भील और गोंड जनजातियों पर हिन्दू–धर्म का और बिहार तथा आसाम की जनजातियों पर ईसाई धर्म का प्रभाव पड़ा है। धर्म परिवर्तन के कारण जनजातीय एकता को ठेस पहुँची है। धर्म जनजातियों की आर्थिक एवं सामाजिक समस्याओं को सुलझाने का एक प्रमुख साधन था। अब वही उनके जीवन में असंतोष, तनाव एवं विघटन उत्पन्न कर रहा है।

(ii) **भाषा सम्बन्धी समस्या–** सभ्य समाज के साथ सम्पर्क में आने के कारण कई जनजातियाँ दो भाषायें बोलने लगी हैं। जिन लोगों पर सभ्य समाज का प्रभाव अधिक है वे अपनी भाषा भूलने लगे हैं। इससे सामुदायिक भावना को धक्का लगा है तथा संस्कृति का भी क्षरण हुआ है।

(iii) **अनुकूलन की समस्या–** बाह्य संस्कृति के सम्पर्क के कारण तथा धर्म–परिवर्तन के कारण सांस्कृतिक विभेद उत्पन्न हुये तथा सामाजिक दूरी बढ़ी। वे नई संस्कृति को

भी पूरी तरह अपना नहीं सके। इस प्रकार अनेक सांस्कृतिक समस्याओं ने जन्म लिया।

(iv) **ललित कलाओं का पतन–** अंग्रेजी सभ्यता के प्रभाव से इनका रहन–सहन, खान–पान तथा वेश–भूषा में परिवर्तन आया। वे अपने रीति–रिवाज, प्रथायें त्यागने लगे। युवा–गृहों में जाने से कतराने लगे। यही युवा गृह सांस्कृतिक हस्तान्तरण का केन्द्र रहे हैं। यहाँ वे अपनी जनजातीय कलाओं को सीखते हैं। अब जनजातीय गायन शैली, संगीत, नृत्य तथा लकड़ी की कला तथा अन्य कलाओं का पतन हो रहा है।

4. **सामाजिक समस्यायें–** जनजातियों की प्रमुख सामाजिक समस्यायें निम्नानुसार हैं–

(i) **बाल विवाह–** जनजाति में वयस्क होने पर ही विवाह करने की प्रथा पाई जाती है परन्तु हिन्दुओं के सम्पर्क में आने के कारण अब उनमें बाल विवाह भी होने लगे हैं।

(ii) **कन्या–मूल्य की समस्या–** पहले विवाह के अवसर पर कन्या मूल्य वस्तुओं के रूप में चुकाया जाता था परन्तु अब मुद्रा सहित अर्थव्यवस्था में प्रवेश करने के कारण कन्या मूल्य नकद चुकाना पड़ता है। आर्थिक स्थिति कमजोर होने से उनके समक्ष अब कन्या मूल्य चुकाने की समस्या है।

(iii) **युवा–गृहों का पतन–** युवा–गृह जनजातियों के लिये केवल मनोरंजन के स्थल नहीं थे। यहाँ पर संस्कृति का हस्तान्तरण नई पीढ़ी को होता था। सामाजिक, व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा शिक्षा के ये महत्वपूर्ण स्थल हुआ करते थे परन्तु अब सभ्य समाजों के सम्पर्क में आने के कारण ये लोग इनसे घृणा कर रहे हैं। इससे सांस्कृतिक विघटन तो हो ही रहा है, सांस्कृतिक संघर्ष भी बढ़ रहे हैं।

(iv) **वेश्यावृत्ति एवं यौन रोग–** जनजातीय लोगों की आर्थिक विवशता तथा भोलेपन का नाजायज लाभ उठाकर कुछ लोग इनकी स्त्रियों एवं लड़कियों से यौन सम्बन्ध स्थापित करते हैं। औद्योगिक केन्द्रों और कारखानों में काम करने वाले श्रमिक वेश्याओं के चंगुल में फँसकर यौन रोगों से पीड़ित हो जाते हैं। गाँव में वापस जाकर वे पत्नियों को भी ये रोग दे देते हैं।

5. **स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्यायें–** निर्धनता, कुपोषण तथा अन्य परिस्थितिजन्य कारणों से स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्यायें उत्पन्न हुई हैं। प्रमुख स्वास्थ्य समस्यायें निम्नानुसार हैं–

(i) **वस्त्रों का अभाव–** सभ्य समाज से सम्पर्क के कारण वे शरीर पर कपड़े पहनने लगे परन्तु गरीबी के कारण वे अधिक वस्त्र खरीद नहीं पाते और न ही वे उनकी सफाई कर पाते हैं। एक ही वस्त्र पहनते रहने के कारण अनेक चर्म रोग तथा अन्य रोग फैलने लगते हैं।

(ii) **चिकित्सा सुविधाओं का अभाव–** एक तो विभिन्न प्रकार की बीमारियों से ये लोग प्रभावित होते हैं। दूसरे दुर्गम स्थानों पर निवास होने के कारण इन्हें समय पर चिकित्सा–सुविधायें उपलब्ध नहीं हो पातीं। ऐसी स्थिति में उनका स्वास्थ्य खतरे में पड़ जाता है।

(iii) **संतुलित भोजन एवं पेय–पदार्थों का अभाव–** गरीबी के कारण इन्हें दो समय का भोजन ही बड़ी मुश्किल से प्राप्त होता है, फिर पौष्टिक भोजन की बात तो बहुत बड़ी है। वे पहले महुआ, चावल और ताड़ की शराब पीते थे जो स्वास्थ्य के लिये हानिकारक नहीं होती थी। अब वे देशी और अंग्रेजी शराब पीने लगे हैं जो उनके स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव डालती है।

6. **शिक्षा सम्बन्धी समस्यायें–** जनजातीय लोगों में अशिक्षा व्यापक रूप से व्याप्त है। इससे वे अनेक कुप्रथाओं तथा अंधविश्वासों से ग्रसित हैं। आधुनिक शिक्षा के प्रति उदासीन हैं क्योंकि यह अनुत्पादक है। शिक्षित व्यक्तियों को बेकारी का सामना करना पड़ता है और साथ ही वे अपनी मूल संस्कृति से भी दूर हो जाते हैं।

7. **राजनीतिक चेतना की समस्या–** स्वतंत्रता के पश्चात् संविधान ने सभी नागरिकों को समान अधिकार प्रदान किये हैं। शासन में सभी व्यक्ति हिस्सेदार हैं। पंचायत से लेकर लोक सभा तक के प्रतिनिधि जनता द्वारा चुने जाते हैं। इससे जनजातियों की परम्परागत राजनैतिक व्यवस्था ध्वस्त हो गई। वे नई राजनीतिक व्यवस्था से परिचित हुये तथा मताधिकार और अपनी सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों से भी परिचित हुये हैं। इस चेतना के कारण कुछ राज्यों में राजनीतिक जागरूकता के कटु परिणाम निकले हैं। तनाव एवं विद्रोह में वृद्धि हुई है। अपने शोषण के प्रति यह आक्रोश व्यक्त कर रहे हैं।

8. **सीमा प्रान्तीय जनजातियों की समस्यायें–** उत्तरी–पूर्वी सीमा प्रान्तों में रहने वाली जनजातियाँ चीन, बर्मा, बंगलादेश के नजदीक हैं। चीन, पाकिस्तान और बंगलादेश के साथ हमारे मधुर सम्बन्ध नहीं हैं। इन देशों ने जनजातियों के आक्रोश को हवा दी है। उन्हें शस्त्रास्त्र एवं धन देकर भारत के खिलाफ भड़काया है। उत्तरी–पूर्वी प्रान्त की जनजातियाँ आज स्वायत्त प्रदेश की माँग कर रही हैं।

इस प्रकार भारतीय जनजातियाँ अनेक प्रकार की समस्याओं से जूझ रही हैं।

प्रश्न–3. जनजातीय समस्याओं के क्या कारण हैं ? विवेचना कीजिये।

उत्तर– जनजातियाँ आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं शैक्षणिक रूप से पिछड़ी हुई हैं। इस पिछड़ेपन को दूर करने के लिये अनेक प्रावधान संविधान में किये गये हैं। साथ ही अनेक प्रकार की विकास योजनायें भी विशेष रूप से इनके लिये बनाई गई हैं। इन विकास योजनाओं का उद्देश्य उनकी समस्याओं को हल करके देश की प्रगति में उनकी सहभागिता प्राप्त करना है। अतः इनके लिये बनाई गई विकास योजनाओं को जानने के पूर्व इनकी समस्याओं तथा इन समस्याओं के कारणों को जानना आवश्यक है।

जनजातीय समस्याओं के कारण– जनजातियों में पाई जाने वाली समस्याओं के महत्वपूर्ण कारण निम्नांकित हैं–

1. **पृथक निवास–** जनजातियाँ प्रायः पहाड़ों, जंगलों तथा दूर–दराज के क्षेत्रों में निवास करती हैं जहाँ सामान्य लोगों से उनका सम्पर्क नहीं हो पाता। यातायात के साधनों का अभाव तथा पृथक एवं दुर्गम निवास के कारण जीवन–यापन के साधनों को उन्हें ही जुटाना पड़ता है। इस परिस्थिति ने उनके सामने अनेक आर्थिक कठिनाईयाँ उत्पन्न की हैं।

2. **बाह्य समाजों से सम्पर्क–** हजारों वर्षों तक पृथक् रहने के बाद आधुनिक समय में यातायात एवं संचार साधनों के कारण इनका सम्पर्क बाह्य समाजों के साथ हुआ। इससे अनुकूलन की समस्या उत्पन्न हुई। साथ ही आर्थिक एवं शारीरिक शोषण की समस्यायें भी उत्पन्न हुईं।

3. **नई प्रशासनिक व्यवस्था–** अंग्रेजी शासन के पूर्व जनजातियाँ राजनैतिक दृष्टि से स्वतंत्र थीं। अंग्रेजों ने सम्पूर्ण देश में एक सामान्य राजनीतिक व्यवस्था लागू की। इससे इनके अधिकार सीमित हुये। स्थानान्तरित खेती तथा वनोपज के उपयोग पर प्रतिबंध लगा। नये प्रशासनिक अधिकारी तथा तंत्र से इनका परिचय हुआ। इस व्यवस्था को वे पूरी तरह स्वीकार नहीं कर सके। अतः इससे अनेक समस्यायें उत्पन्न हुईं।

जनजातीय समस्याओं के कारण

1. पृथक निवास
2. बाह्य समाजों से सम्पर्क
3. नई प्रशासनिक व्यवस्था
4. जनजातीय क्षेत्रों में वन सम्पत्ति तथा खनिजों का होना
5. बाह्य लोगों द्वारा शोषण
6. ईसाई मिशनरियों द्वारा धर्म परिवर्तन

4. **जनजातीय क्षेत्रों में वन सम्पत्ति तथा खनिजों का होना–** जनजातियों के क्षेत्रों में कीमती लकड़ी फल–फूल, जड़ी–बूटियाँ, चाय के बाग़ान तथा विभिन्न प्रकार के उद्योग लगाये गये। बाहरी लोगों ने इनके भोलेपन का अनुचित लाभ उठाकर इनका शोषण किया। बाह्य सम्पर्क ने इनकी संस्कृति को भी विघटित किया।

5. **बाह्य लोगों द्वारा शोषण–** व्यापारी, महाजन, ठेकेदार, सरकारी अधिकारी एवं कर्मचारी आदि लोगों ने इनका आर्थिक एवं दैहिक शोषण किया। इससे ये भूमिहीन हुये तथा यौन रोगों से ग्रसित हुये।

6. **ईसाई मिशनरियों द्वारा धर्म परिवर्तन–** अंग्रेजी शासन के समय से ही ईसाई मिशनरियों ने विशेषकर जनजातियों के क्षेत्र को अपना प्रमुख क्षेत्र बनाया। उनके उत्थान एवं कल्याण के नाम पर आर्थिक प्रलोभन देकर उन्हें धर्म परिवर्तन के लिये बाध्य किया। उनकी गरीबी और अज्ञानता का लाभ आज भी उठाया जा रहा है। उत्तरी–पूर्वी सीमान्त प्रान्तों में आज जो अलगाव की स्थिति एवं संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हुई है वह धर्म–परिवर्तन का ही परिणाम है। इसके साथ ही धर्म परिवर्तन एवं पर–संस्कृतिग्रहण से जनजातियों में अनेक समस्यायें उत्पन्न हुई हैं।

इस प्रकार उपर्युक्त कारणों से जनजातियाँ विभिन्न प्रकार की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा अन्य अनेक समस्याओं का सामना कर रही हैं। इन समस्याओं के चलते वे प्रगति नहीं कर पा रहे हैं। अतः इनकी समस्याओं का निराकरण करना अनिवार्य है।

प्रश्न–4. जनजातीय समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव प्रस्तुत कीजिये।

उत्तर– जनजातियों की अपनी विशिष्ट समस्यायें हैं। इन समस्याओं को सुलझाने के लिये केन्द्र सरकार और राज्य सरकारें कटिबद्ध हैं।

स्वतंत्रता के पश्चात् इनके हेतु किये जाने वाले कल्याण कार्यों में तेजी आई है। पंचवर्षीय योजनाओं में इनके कल्याण कार्यों के लिये करोड़ों रुपयों का प्रावधान रखा जाता है परन्तु फिर भी इसके अपेक्षित परिणाम सामने नहीं आ रहे हैं। कई स्वयंसेवी संगठन इनकी दशाओं में सुधार लाने हेतु अथक् परिश्रम कर रहे हैं। इन सबको मद्देनजर रखते हुये अग्रलिखित सुझाव दिये जा सकते हैं ताकि इनके लिये किये जा रहे कल्याण कार्यों का वास्तविक लाभ इन्हें मिल सके और राष्ट्र की प्रगति में इन लोगों की सहभागिता भी सुनिश्चित हो।

जनजातीय समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव– जनजातीय समस्याओं के समाधान हेतु निम्नलिखित सुझाव दिये जा सकते हैं–

1. **आर्थिक समस्याओं के समाधान हेतु–** जनजातियों की आर्थिक समस्या को प्राथमिकता के आधार पर सुलझाना अत्यन्त आवश्यक है। उन्हें कृषि करने हेतु पर्याप्त मात्रा में भूमि आबंटित की जाये। कृषि के आधुनिक तरीके बताये जायें तथा यंत्र, बीज, खाद आदि के लिये न्यूनतम ब्याज पर सुलभता से ऋण उपलब्ध कराया जाये। कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहन दिया जाये तथा उत्पादों का वास्तविक मूल्य इन्हें प्राप्त हो, इसके लिये सहकारी समितियों की स्थापना की जानी चाहिये। विभिन्न उद्योगों एवं बागानों में कार्यरत् श्रमिकों को उचित मजदूरी दी जानी चाहिये तथा इनके लिये अच्छे मकान, बिजली, पेयजल आदि की व्यवस्था की जानी चाहिये।

इनका आर्थिक और शारीरिक शोषण सख्ती से रोकने हेतु कानून बनाकर उनका क्रियान्वयन किया जाये। शिक्षण तथा प्रशिक्षण की उचित व्यवस्था कर उन्हें रोजगार के समुचित अवसर उपलब्ध कराये जाने चाहिये।

2. **सामाजिक समस्याओं के समाधान हेतु–** इनके बीच में फैली बाल–विवाह, कन्यामूल जैसी सामाजिक कुरीतियों एवं अंधविश्वासों के खिलाफ जनमत तैयार किया जाये। कुरीतियों के खिलाफ कानूनों का निर्माण किया जाये। सांस्कृतिक विरासत के केन्द्र 'युवा–गृहों' का पुनर्गठन किया जाये तथा शिक्षा विशेषकर व्यावहारिक शिक्षा का प्रबन्ध कर उसका प्रचार–प्रसार किया जाना चाहिये। वेश्यावृत्ति जैसी समस्या से निबटने के लिये इनकी आर्थिक स्थिति सुधारने के उपाय किये जाने चाहिये।

3. **स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं के समाधान हेतु–** स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं को सुलझाने के लिये इन्हें पौष्टिक एवं संतुलित आहार प्रदान करने की व्यवस्था की जानी चाहिये। इन्हें स्वास्थ्य के सामान्य नियमों से परिचित कराया जाना चाहिये। इस हेतु समय–समय पर स्वास्थ्य शिविरों का आयोजन किया जा सकता है। जनजातीय क्षेत्रों में चिकित्सालय एवं प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र बहुतायत से खोले जायें तथा उसमें चिकित्सक, नर्स, कम्पाउंडर एवं दवाइयों का सुनिश्चित प्रबन्ध किया जाये। इस हेतु चलते–फिरते अस्पतालों की व्यवस्था भी की जाये ताकि अधिक से अधिक व्यक्ति इन सुविधाओं का लाभ उठा सकें।

4. **शैक्षणिक समस्या के समाधान हेतु–** जनजातीय क्षेत्रों में प्राथमिक एवं उच्च शिक्षा के साथ–साथ तकनीकी शिक्षण संस्थायें स्थापित की जायें। इन शिक्षण संस्थाओं में शिक्षकों तथा अन्य आवश्यक सामग्री का उचित प्रबन्ध किया जाये। शिक्षा का माध्यम प्रादेशिक भाषा हो। इन शिक्षण संस्थाओं में उन्हें व्यावसायिक प्रशिक्षण भी दिया जाये ताकि शिक्षा प्राप्त करने के

बाद उन्हें बेरोजगारी का सामना न करना पड़े। विभिन्न हस्तकलाओं का प्रशिक्षण भी दिया जाये।

5. **सांस्कृतिक समस्याओं के समाधान** हेतु– इस सम्बन्ध में डॉ. वेरियर एल्विन का विचार है कि, ऐसे विश्वविद्यालयों की स्थापना की जाये जिनमें ललित कलाओं को सुरक्षित रखा जाये। जनजातियों के लिये सांस्कृतिक एवं मनोरंजनात्मक कार्यक्रम उन्हीं की भाषा में हों। इस प्रकार भाषा सम्बन्धी समस्या को हल किया जा सकता है। तर्क और विज्ञान के आधार पर धार्मिक अंधविश्वासों को दूर किया जा सकता है। युवा-गृहों का पुनर्गठन कर इसमें उनकी आस्था फिर से जागृत करना आवश्यक है। इस प्रकार प्रजातियों के सुधार हेतु व्यापक प्रयास किये जा सकते हैं।

लेकिन इस सम्बन्ध में हमें यह ध्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक है कि इन सुधारों के द्वारा वे आधुनिक समाज की प्रतिलिपि न बन जायें। इन सुधारों के पीछे यह उद्देश्य होना चाहिये कि आधुनिक तंत्र सीखने के साथ-साथ वह अपनी जनजातीय संस्कृति की विशिष्टता को भी बनाये रखें तभी हमारे समस्त प्रयास सार्थक हो सकते हैं।

प्रश्न–5. जनजातीय लोगों में अशिक्षा पर एक लेख लिखिये।

उत्तर– प्रायः जनजातीय लोगों में शिक्षा का अभाव पाया जाता है। स्वंतत्रता प्राप्ति के पश्चात् जनजातियों के विकास हेतु सामुदायिक विकास कार्यक्रम तथा अनेक अन्य योजनाएँ चलाई गईं, परन्तु इनका लाभ उच्च वर्गों एवं जातियों को ही मिला। उन लोगों को शिक्षा का लाभ नहीं मिल पाया जिनका मुख्य व्यवसाय खेती करना है। दूरस्थ गाँवों, जंगलों और पहाड़ी क्षेत्रों में निवास करने वाले जनजातीय लोग सामान्यतः अपने बच्चों को स्कूल नहीं भेज पाए क्योंकि इनके बच्चे भी या तो खेती करते हैं या मजदूरी करते हैं। ऐसी स्थिति में ये बच्चों को पढ़ाई हेतु स्कूल भेजने में खर्च वहन नहीं कर करते। यह अवश्य कहा जा सकता है कि जनजातियों में भी ऊँचे तबके के लोगों ने ही औपचारिक शिक्षा का लाभ उठाया है। वर्तमान में स्कूल से लेकर कॉलेज तक में अनुसूचित जनजातियों के कुछ छात्र ही अध्ययन करते हुए मिलते हैं। कुछ ने व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त कर उच्च पद भी प्राप्त कर लिए हैं। परन्तु यहाँ हमें यह स्मरण रखना होगा कि ऐसे लोग जनजातियों के उच्च तबकों से ही सम्बन्धित हैं। जनजातियों में बड़े किसानों और राजनेताओं को विकास कार्यों और शिक्षा का लाभ मिला है। आज की शिक्षा कहने को तो सुलभ है, लेकिन साथ ही मंहगी भी है। आज स्थिति यह है कि जो शिक्षण संस्था जितनी ऊँची होगी, उतना ही अधिक उसकी फीस होगी, ऐसे में निम्न आर्थिक स्थिति वाला जनजातीय बालक सामान्य शिक्षण संस्था से पढ़कर उच्च वर्गों और जातियों के विद्यार्थियों का प्रतियोगी परीक्षाओं में मुकाबला नहीं कर सकता। इसक आशय यह है कि ग्रामों में जनजातियों के बच्चे स्कूल खोले जाने और सब प्रकार की सुविधा उपलब्ध कराने के बावजूद भी सामान्यतः शिक्षा से वंचित रह जाते हैं या फिर ये बच्चे चौथी, पाँचवीं कक्षा तक पढ़कर स्कूल छोड़ देते हैं।

अनूसूचित जातियों एवं जनजातियों के लिए शिक्षा– अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों की पहचान उनके अत्यधिक सामाजिक, शैक्षणिक एवं आर्थिक पिछड़ेपन के आधार पर की गयी

है। जनजातीय वर्ग में व्याप्त अशिक्षा को दूर करने हेतु सरकार द्वारा निम्नलिखित अनेक कदम उठाये गये हैं–

(1) इस वर्ग के लोगों हेतु सभी प्रकार की शिक्षण संस्थाओं, इंजीनियरिंग महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों, केन्द्रीय विद्यालयों, नवोदय विद्यालय, आदि में स्थान आरक्षित (रिजर्वेशन) किए गये हैं और न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता में भी छूट दी गई है।

(2) अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के छात्रों के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा जूनियर एवं सीनियर रिसर्च फेलोशिप, टीचर फेलोशिप एवं रिसर्च एसोसियटशिप प्रदान की जाती है।

(3) इन लोगों हेतु प्रतियोगी परीक्षाओं, आई.आई.टी. आदि परीक्षाओं हेतु कोचिंग की व्यवस्था की गयी है।

(4) जनजाति क्षेत्रों में जनजाति भाषा में ही शिक्षा देने एवं द्विभाषा पढ़ाने के संदर्भ में NCERT तथा CIIL (Central institute Indian Language) के द्वारा पुस्तकें तैयार की जाती हैं।

(5) केन्द्र सरकार राज्यों एवं केन्द्र शासित प्रदेशों को यह निर्देश देती है कि जिन क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों का बाहुल्य है वहाँ स्कूल खोलने में प्रथामिकता दी जाये।

(6) शिक्षा विभाग के मुख्य कार्यक्रमों को अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति क्षेत्रों में प्राथमिकता के आधार पर लागू किया जाता है।

(7) इन लोगों हेतु प्राथमिक विद्यालयों को खोलने के नियमों में ढील दी गई है।

शिक्षा के क्षेत्र में भारत में अनेक विसंगतियाँ और समस्याएँ मौजूद हैं। देश में लाखों स्कूल और कॉलेज खोले जा चुके हैं फिर भी हमारी शिक्षा पद्धति को संविधान में दिये गये नीति निदेशक सिद्धान्तों के अनुरूप 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों हेतु शिक्षा देना संभव नहीं हो पा रहा है। आर्थिक दृष्टि से गरीब तथा पिछड़े वर्गों के अच्छे बच्चे आज भी शिक्षा से वंचित हैं। जैसा कि चौथे शिक्षा सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ है कि स्कूलों का न होना इस सम्बन्ध में मुख्य समस्या नहीं है। वास्तविकता तो यह है कि विशेषतः ग्रामीण क्षेत्रों में और कमजोर वर्ग के लोगों की सामाजिक और आर्थिक मजबूरियाँ, पाठ्यक्रमों का वस्तुस्थिति के अनुकूल न होना और स्कूलों में आवश्यक सुविधाओं का न होना आदि ऐसे अनेक कारण हैं जिससे शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति बहुत धीमी गति से हो रही है। यही कारण है कि पहली कक्षा में प्रवेश लेने वाले छात्रों में से 60% छात्र पांचवीं कक्षा तक पहुँचते-पहुँचते स्कूल छोड़ जाते हैं। इस प्रकार शिक्षा संसाधनों का पूरा उपयोग न होने से अधिक नुक्सान होता है। शिक्षा के क्षेत्र में अकुशलता आ जाती है, लक्ष्यों की प्राप्ति नहीं होती और आखिरकार परिवार और समाज को हानि उठानी पड़ती है।

प्रश्न–6. जनजातीय समाज में बेरोजगारी की समस्या पर एक लेख लिखिए।

उत्तर– जनजातीय समाज की स्थिति और उससे सम्बद्ध रोजगार की समीक्षा करने से पहले हमें भारत की जनजाति आबादी के व्यावसायिक ढाँचे को समझना होगा। कृषि क्षेत्र में जनजातियों का एक बहुत बड़ा जन समूह (लगभग 85%) काम करता है। इसमें कुछ तो

किसान हैं, कुछ सीमांतक खेती करते हैं और शेष खेतिहर मजदूर हैं। उनकी जनसंख्या का थोड़ा भाग औद्योगिक क्षेत्र में संलग्न है। वे कारखानों में मजदूरी करते हैं। कुछ समूह (जिनमें उत्तराखंड में हिमालयी उपक्षेत्र के भोटिया, नीलगिरि पर्वत (तमिलनाडु) के टोडा, जम्मू-कश्मीर क्षेत्र के बकरवाल आदि आते हैं) पशुपालक हैं। कुछ दस्तकार हैं, (जैसे- बिहार और मध्यप्रदेश के असुर पश्चिम बंगाल के महली और अंगेरिया) जो लोहारगिरी का काम करते हैं। लगभग 70 जनजातियाँ शिकार करती हैं और जंगलों से वनोपज वस्तुएँ एकत्र करके अपना जीवनयापन करती हैं। इनमें से अधिकांशतः लोग दक्षिणी भारत में हैं। अभी हाल में जनजातियों के काफी लोगों ने प्रवासी खेतिहर मजदूरी का काम अपना लिया है या फिर वे ईंट के भट्टों पर और मकान बनाने के काम में अदक्ष मजदूरों के रूप में कार्यरत हैं। जनजातियों की कुल आबादी में बहुत कम ऐसे व्यक्ति हैं जो पढ़े लिखे हैं। वे या तो सरकारी नौकरियों में हैं या फिर डॉक्टर्स, अध्यापक, उद्यमी आदि विभिन्न पेशों में कार्यरत हैं। गरीबी जनजातियों के भाग्य में है। केवल उत्तर-पूर्व भारत की जनजातियाँ भाग्यशाली हैं क्योंकि इन क्षेत्रों में "शिक्षा-पहले" के सिद्धान्त पर उसके विकास का आदर्श आधारित रहा है।

इस वर्तमान परिदृश्य में सन् 1980 से राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम पर जिसमें केन्द्र और राज्य की सरकारों ने बराबर की पूंजी लगाई है, यह योजना 1980 से चल रही है। ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम को 1983 से अमल में लाया गया है। इन दोनों कार्यक्रमों का लक्ष्य ग्रामीण भूमिहीन को न्यूनतम सुनिश्चित स्तर का रोजगार दिलाना है। इन भूमिहीनों में अधिकांशतः अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के लोग हैं। इन्हें वर्ष के उन महीनों में रोजगार दिलाना जरूरी है जब इनके पास कोई काम नहीं होता।

NREP और RLEGP उक्त दोनों को वर्ष 1989 से एक राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रमों में, जिसे **जवाहर रोजगार योजना** कहा जाता है में मर्ज कर दिया गया। इस कार्यक्रम में 80% पैसा केन्द्र सरकार और 20% पैसा राज्य सरकार लगा रही है।

जवाहर रोजगार योजना के उद्देश्य अतिरिक्त लाभकर रोजगार की व्यवस्था, उत्पादक सामुदायिक परिसम्पत्तियों का सृजन और ग्रामीण क्षेत्रों में कुल मिलाकर जीवन शैली को उन्नत करना है। जवाहर रोजगार योजना द्वारा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लोगों को रोजगार उपलब्ध कराने की विशेष व्यवस्था है। बंजारे जनजातियों के लोगों हेतु समन्वित परियोजनाएँ चलाने तथा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लोगों की वैयक्तिक सहायताओं हेतु जिला और ग्राम पंचायत स्तर के साधनों का 15% तक सुरक्षित कर दिया गया है। ऐसे ही अनुसूचित जनजाति के लाभार्थ काम की जाँच और उन्हें रोजगार के अवसर सुनिश्चित करने हेतु जनजाति वित्त और विकास निगम भी इस दिशा में प्रयासरत है। इस नियम की स्थापना वर्ष 1989 में विशेष रूप से इन दोनों अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के व्यापार, व्यवसाय, पेशे और अन्य आर्थिक क्रियाकलापों की पहचान और उनका पता लगाकर सहायता उपलब्ध कराने हेतु की गयी थी। साथ ही उसकी योजना सहायता देने वाली ऐसी परियोजनाएँ लागू करने की भी है जिनसे जनजातियों को रोजगार उपलब्ध हो सकें। जनजातीय विकास कार्यक्रमों और अनेक सरकारी और गैर-सरकारी दस्तावेजों के अध्ययनों से यह ज्ञात होता है कि जनजातीय क्षेत्रों में

रोजगार की स्थिति शोषण, साधनों की चोरी, प्रतिक्रिया के अभाव, निम्न स्तर के सरकारी कर्मचारियों के कठोर व्यवहार तथा अन्य अनेक विरोधी तत्वों के कारण खराब ही है।

प्रश्न-7. 'जनजातीय ऋणग्रस्तता एक विकराल समस्या है।' समझाइये।

अथवा

जनजातीय ऋणग्रस्तता के कारणों एवं दुष्परिणामों की विवेचना कीजिये।

अथवा

भारतीय जनजातियों में ऋणग्रस्तता के क्या कारण हैं? इसका समाधान समझाइये।

अथवा

जनजातियों की किसी एक समस्या पर अपने विचार स्पष्ट कीजिये।

उत्तर- सम्पूर्ण ग्रामीण भारत की एक प्रमुख समस्या ऋणग्रस्तता है। भारत में जनजातीय ऋणग्रस्तता की समस्या और भी अधिक विकराल है। क्योंकि जनजातीय समाज के लोग गरीबी और ऋण के चंगुल में फंसे हुये हैं। देश में समृद्ध कृषि के सभी तत्व जैसे- कृषि-योग्य भूमि की बहुलता, विभिन्न फसलें पैदा करने वाली जलवायु, पानी की उपलब्धता, मेहनती कृषक आदि के बावजूद भी कृषि की अवस्था पिछड़ी हुई है। कुछ जनजातीय लोगों को तो दो समय की रोटी तक भी नसीब नहीं होती है। उन्हें अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये ऋण लेना पड़ता है। इसलिये कुछ जनजातीय लोग ऋण में ही पैदा होते हैं, ऋण में ही जीवन गुजारते हैं, और ऋण में ही मर जाते हैं तथा अपने पीछे ऋण फिर भी छोड़ जाते हैं।

अखिल भारतीय ग्रामीण साख सर्वेक्षण के अनुसार देश के कृषक 70% ऋण महाजनों से, 14% ऋण रिश्तेदारों में, 3% ऋण समितियों से 10% ऋण सरकार से तथा 3% ऋण अन्य साधनों से प्राप्त करते हैं। ऋण देने वाले महाजनों की ब्याज-दर अत्यधिक (20% से लेकर 150%) तक होती है। जनजातीय लोगों की अज्ञानता एवं अशिक्षा का लाभ उठाकर साहूकारों एवं महाजनों ने चक्रवृद्धि ब्याज लागू कर उनको हमेशा ऋण के द्वारा अपने चंगुल में फंसाये रखते हैं। इसके अलावा वे उनकी फसलों को सस्ते मूल्य में खरीदकर उन्हें आवश्यकता पड़ने पर महँगे दामों में बेचते हैं। इस प्रकार जनजातियों का ऋण पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलता रहता है।

भारत की सम्पूर्ण जनजातीय जनसंख्या को आज भी ऋणग्रस्तता की विकट समस्या का सामना करना पड़ता है। जनजातियों में ऋणग्रस्तता का प्रमुख कारण उनमें फैली गरीबी एवं अभाव की अर्थव्यवस्था है। यद्यपि जनजातियों में ऋणग्रस्तता के विस्तार सम्बन्धी वैज्ञानिक तथ्य तो उपलब्ध नहीं हैं, लेकिन फिर भी इतना निश्चित है कि उनमें इस समस्या का आकार बहुत बढ़ा है। जनजातियों में ऋणग्रस्तता के कारण अधिकांश लोगों के जीवन में खुशी और शांति का अभाव है।

जनजातीय लोगों में ऋणग्रस्तता के कारण- जनजातीय लोगों में ऋणग्रस्तता के कारण निम्नलिखित हैं-

(i) भूमि तथा जंगलों पर जनजातीय अधिकारों की समाप्ति।
(ii) कृषि के परम्परागत एवं आदिम तरीके, परिणामस्वरूप अनाज की कमी का होना।
(iii) जनजातीय लोगों में शिक्षा एवं अज्ञानता का अभाव होना।

(iv) विवाह, मृत्यु, मेले तथा त्यौहारों के अवसरों पर अपने साधनों से अधिक खर्च करना।

(v) जनजातीय लोग भाग्य को अधिक मानते हैं इसलिये भाग्यवादी प्रवृत्ति के होने के कारण ये ऋण के तले दब जाते हैं।

(vi) जुर्मानों के सम्बन्ध में पंचायत निर्णयों को, बहिष्कृत किये जाने के भय से, पूरी तरह मानना।

उपर्युक्त कारणों की वजह से ही जनजातीय लोगों को सदैव रुपयों की आवश्यकता रहती है, और वे साहूकारों के शोषण का शिकार बन जाते हैं। इनके द्वारा ऋण के रूप में ली गई छोटी-सी रकम पर समय के साथ-साथ ब्याज इतना अधिक बढ़ता जाता है कि उस बढ़ी हुई रकम को लौटाना उनकी क्षमता के बाहर हो जाता है। इसके परिणामस्वरूप साहूकार के द्वारा दिये गये कर्ज के बदले में उसकी जमीन हड़प ली जाती है। स्वयं योजना आयोग ने अपनी रिपोर्ट में यह स्पष्ट किया है कि आर्थिक विकास का कोई भी कार्यक्रम जनजातीय अर्थव्यवस्था पर उस समय तक कोई भी प्रभाव नहीं डाल सकते हैं जब तक कि जनजातीय लोगों को साहूकारों के चंगुल से छुड़ाने के लिये कोई कठोर कदम नहीं उठाये जाते।

यहाँ हमें यह भी विचार करना होगा कि सभी प्रकार के सरकारी प्रयासों के बाद जनजातीय लोगों को साहूकार से ऋण क्यों लेना पड़ता है? इसका प्रमुख कारण यह है कि साहूकार जनजातीय लोगों के आस-पास सरलता से उपलब्ध हो जाते हैं। अतः जब किसी जनजातीय व्यक्ति को रुपये की आवश्यकता पड़ती है तो वह शीघ्र ही साहूकार के पास पहुँच जाता है। और साहूकार बिना किसी शर्त, सुरक्षा एवं गारन्टी के उसे कर्ज दे देता है। इसके लिये वह अधिक से अधिक एक खाली कागज पर उस व्यक्ति का अंगूठा लगवा लेता है और उसकी जमीन अपने यहाँ गिरवीं रख लेता है। इस प्रकार की स्थिति मध्य प्रदेश के जनजातीय क्षेत्रों में पाई जाती है। इस प्रकार गरीब जनजातीय व्यक्ति को अपने उपभोग और अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिये अपने सामाजिक एवं अनुशासनात्मक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये कर्ज की आवश्यकता रहती है। यह कर्ज उसे सरलता से साहूकार से प्राप्त हो जाता है।

ऋणग्रस्तता के दुष्परिणाम– ऋणग्रस्तता के कारण जनजातीय लोगों को कई कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। उन्हें भरपेट भोजन भी नसीब नहीं हो पाता है। इसी कारण वे अनेक प्रकार के रोगों का शिकार हो जाते हैं तथा सीमित साधनों के कारण वे चिकित्सा सुविधा भी नहीं जुटा पाते हैं। इसका प्रभाव उनकी कार्यक्षमता पर पड़ता है। वे कृषि में उन्नत खाद, बीज आदि का प्रयोग नहीं कर सकते हैं। अतः वे अकुशल श्रमिक का ही कार्य कर सकते हैं, कुशल श्रमिक का नहीं, क्योंकि वे साधनों के अभाव में शिक्षा और किसी प्रकार का प्रशिक्षण प्राप्त नहीं कर पाते हैं। इसलिये वे ऋणग्रस्तता एवं दासता के लिये उत्तरदायी हैं। ऋणग्रस्तता के जो कुछ दुष्परिणाम सामने आये हैं, वे निम्नलिखित हैं–

(i) स्वतंत्रता का समाप्त हो जाना और परिणामस्वरूप जनजातीय श्रम-शक्ति का साहूकारों के द्वारा उपयोग।

(ii) जनजातीय लोगों का भूमि से पृथक्करण तथा उस पर साहूकार का अधिकार।

(iii) जनजातीय लोगों की लड़कियों का विक्रय तथा उनके द्वारा वेश्यावृत्ति।

(iv) जनजातीय लोगों में गुप्त रोग एवं संक्रामक रोगों का बढ़ना।

ऋणग्रस्तता की समस्या का निवारण अथवा समाधान– जनजातीय लोगों की ऋणग्रस्तता की समस्या से छुटकारा दिलाने की दृष्टि से समय-समय पर विभिन्न राज्यों में अधिनियम पारित किये गये हैं। इन अधिनियमों के अन्तर्गत मध्य प्रदेश में मध्य प्रदेश अनुसूचित जनजाति ऋण सहायता अधिनियम, 1966, राजस्थान में 1961 में राजस्थान सागड़ी व्यवस्था उन्मूलन अधिनियम पारित किया गया। विभिन्न सर्वेक्षणों के आधार पर यह स्पष्ट है कि अधिनियमों के पारित हो जाने के बाद भी जनजातीय लोगों का शोषण अब भी जारी है। इस प्रकार की स्थिति का मुख्य कारण यह है कि राज्य सरकारों द्वारा जनजातीय लोगों को बन्धक श्रम के खिलाफ कोई सुरक्षा नहीं दी गई। इसके अलावा जनजातीय लोगों का शोषण जारी रखने के लिये उत्तरदायी साहूकारों के प्रति कठोर कदम उठाने की सरकार और उनके अधिकारियों में दृढ़ इच्छा-शक्ति का अभाव है।

जनजातीय विकास कार्यक्रमों पर योजना आयोग के अध्ययन दल के प्रतिवेदन में यह आंकलन किया गया है कि–

(1) जनजातीय लोगों को साहूकारों के चंगुल से छुड़ाने के लिये उन्हें लम्बी अवधि का कर्ज दिया जाना चाहिये।

(2) जनजातीय लोगों की आर्थिक दशा को सुधारकर कर्ज देना चाहिये और साथ में ही कर्ज देने सम्बन्धी तरीकों को सुगम बनाना चाहिये जिससे जनजातीय लोग ऐसी समितियों से कर्ज लेने के लिये उनकी ओर आकर्षित हों, लेकिन ऋणग्रस्तता की समस्या को हल करने के लिये प्रमुख रूप से इस ओर ध्यान दिया जाना चाहिये कि इसके लिये दृढ़ राजनीतिक इच्छा-शक्ति की आवश्यकता है।

इसके अलावा प्रतिबद्धता, ईमानदारी, तथा पूर्ण विश्वसनीयता की आवश्यकता है।

प्रश्न–8. जनजातीय निर्धनता पर एक निबंध लिखिये।

अथवा

जनजातियों में पाई जाने वाली निर्धनता का विवेचन कीजिये।

अथवा

'जनजातियों में निर्धनता एक प्रमुख समस्या है।' समझाइये।

अथवा

जनजातियों में निर्धनता के प्रमुख कारणों पर प्रकाश डालिये।

अथवा

भारतीय जनजातियों में निर्धनता के क्या कारण हैं? इसका समाधान सुझाइये।

उत्तर– जनजातीय क्षेत्रों में निर्धनता एक सामाजिक और आर्थिक समस्या है इसका विकराल रूप बहुत ही जटिल है। गरीबी के कारण इन लोगों को अच्छा भोजन, वस्त्र और निवास नहीं मिल पाता है। अनेक क्षेत्र तो ऐसे हैं जहाँ पर मजदूरी करने वाले जनजातीय परिवारों को वर्ष में लगभग 60 से लेकर 90 दिन तक भूखे ही सोना पड़ता है।

निर्धनता की परिभाषा देते हुये गिलिन एवं गिलिन लिखते हैं "गरीबी या निर्धनता वह दशा है, जिसमें एक व्यक्ति या तो अपर्याप्त आय अथवा मूर्खतापूर्ण व्यय के कारण अपने जीवन-स्तर को इतना ऊँचा नहीं रख पाता कि उसकी शारीरिक एवं मानसिक क्षमता बनी

रह सके और उसको तथा उसके प्राकृतिक आश्रितों को अपने समाज के स्तरों के अनुसार उपयोगी ढंग से कार्य करने के योग्य बनाये रख सके।''

गोडार्ड के अनुसार, ''निर्धनता उन वस्तुओं की अपर्याप्त पूर्ति की दशा है, जिनकी एक व्यक्ति को अपने तथा अपने आश्रितों के स्वास्थ्य एवं शक्ति को बनाये रखने के लिये आवश्यकता होती है।''

कृषि के पुराने तरीके, सिंचाई की अपर्याप्त सुविधायें, भूमि का खण्डीकरण, अलाभकारी जोतों, कृषि पर अत्यधिक भार तथा ऋणग्रस्तता आदि जनजातीय निर्धनता के प्रमुख कारण हैं। सामान्यतः गाँवों में निर्धन लोगों में अनुसूचित जाति एवं जनजाति, भूमिहीन मजदूर, लघु और सीमान्त कृषक, कारीगर एवं पिछड़े वर्ग के व्यक्तियों को गिना जाता है।

जनजातियों की निर्धनता के कारण– जनजातियों की निर्धनता के कारण निम्नलिखित हैं–

(1) **अनार्थिक जोत**– जनजातियों की निर्धनता का प्रमुख कारण अनार्थिक जोत का होता है क्योंकि जोत उचित न होने के कारण फसल करने में कठिनाई उत्पन्न होती है।

(2) **सिंचाई की सुविधा का अभाव**– जनजातीय क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधा का अभाव है। अतः सिंचाई की उचित व्यवस्था न होने के कारण खेती की पैदावार नहीं हो पाती है।

जनजातियों की निर्धनता के कारण
(1) अनार्थिक जोत
(2) सिंचाई की सुविधा का अभाव
(3) कम उपजाऊ भूमि
(4) कृषि करने का पुराना ढंग
(5) गतिशीलता एवं जागरूकता का अभाव
(6) अज्ञानता

(3) **कम उपजाऊ भूमि**– इन क्षेत्रों की भूमि के कम उपजाऊ होने के कारण यहाँ खेती नहीं हो पाती है। क्योंकि इन क्षेत्रों की मिट्टी में उर्वरा की शक्ति बहुत ही क्षीण होती है।

(4) **कृषि करने का पुराना ढंग**– जनजातियों के द्वारा कृषि करने का ढंग अत्यन्त पुराना है। इसलिये कृषि की अधिक पैदावार असंभव है। इसी कारण कृषि–उत्पादन बहुत ही कम हो पाता है।

(5) **गतिशीलता एवं जागरूकता का अभाव**– जनजातियों में गतिशीलता का अभाव पाया जाता है। इस कारण यह अभी तक जागरूक नहीं है। अतः जागरूकता के अभाव में यह गरीबी में ही जीवन–व्यतीत करते हैं। क्योंकि एक बार व्यापारी या साहूकार के चंगुल में फंसने के बाद सीधे और भोले–भाले आदिवासी लोग ब्याज पर ब्याज चुकाते–चुकाते निर्धनता के दुष्चक्र में फँसते जाते हैं।

(6) **अज्ञानता**– जनजातियों में शिक्षा का अभाव है। शिक्षित न होने के कारण ये लोग साहूकार का हिसाब–किताब समझ नहीं पाते हैं।

जब कभी सरकार के द्वारा जनजातीय लोगों के उत्थान के लिये नीतियाँ और कार्यक्रम बनाये जाते हैं तब या तो उन्हें लागू नहीं किया जाता या उनके स्वरूप को इस प्रकार जटिल कर दिया जाता है कि उनका लाभ गरीबों को न मिल पाये। कभी–कभी इनके द्वारा भूमिहीनों

को भूमि वितरण करने का नियम बनाकर जनजातीय लोगों, श्रमिकों, किसानों और गरीबों के प्रति अपनी उदारता का परिचय दिया जाता है, लेकिन उन्हें सही अर्थों में कभी लागू नहीं किया जाता है।

देश की अनुसूचित जनजातियाँ गरीबी से त्रस्त हैं, लेकिन कुछ जनजातियाँ ऐसी हैं जो अपेक्षा से अधिक गरीब हैं। इसलिये प्रथम एवं मुख्य समस्या यह है कि सबसे अधिक गरीब एवं उपेक्षित जनजाति का पता लगाया जाये जो कि सबसे कमजोर कड़ी है। इस कमजोर कड़ी के विकास एवं उन्नति के लिये विशेष कार्यक्रम बनाकर उनकी आवश्यकताओं को पूरा किया जाये। जनजाति आयुक्त ने विभिन्न राज्यों में ऐसी कमजोर जनजातियों का पता लगाया है जिनके अन्तर्गत गुजरात में चारण, दुगला, नयी कड़ा, एवं वरली जनजातियाँ, मध्य प्रदेश में बैंगा, गोंड, भारिया, भूमि या कमार, तथा मवासी जनजातियाँ, उत्तरांचल में भोरिया, जौनसारी और थारु, राजस्थान में भील, डामोर व सहरिया जनजातियाँ सबसे कमजोर कड़ी में आती हैं। इन जनजातियों की समस्यायें अन्य जनजातियों की तुलना में अधिक गंभीर हैं।

ए.आर. देसाई ने निर्धनता के दुष्प्रभावों का उल्लेख करते हुये लिखा है कि ''निर्धनता न केवल ग्रामीण लोगों के स्वास्थ्य तथा जीवन–शक्ति पर प्रभाव डालती है, बल्कि वह उनके सामाजिक व सांस्कृतिक पिछड़ेपन का कारण भी बनती है। यदि ग्रामीण लोग अशिक्षित, अन्धविश्वासी एवं असंस्कृत हैं, तो इसका यही कारण है कि वे अथाह निर्धनता में डूबे हुये हैं और अपनी शिक्षा की व्यवस्था नहीं कर सकते। इसी कारण वे शिक्षा तथा सांस्कृतिक संस्थाओं द्वारा प्रदत्त प्राकृतिक तथा सामाजिक जगत की वैज्ञानिक जानकारी को बिल्कुल प्राप्त नहीं कर पाते हैं। उन्नतशील सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन के लिये आर्थिक समृद्धि एक मौलिक पूर्वापेक्षित आवश्यकता है।'' इस कथन से स्पष्ट है कि निर्धनता अनेक सामाजिक बुराईयों की जड़ है। क्योंकि निर्धनता व्यक्ति पर शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक दृष्टि से बुरा प्रभाव डालती है। यह पारिवारिक विघटन और चारित्रिक पतन के लिये भी उत्तरदायी है।

जनजातीय लोगों के कल्याण की दृष्टि से सरकारी और गैर सरकारी स्तर पर अनेक कार्यक्रम बनाये गये हैं तथा उनको क्रियान्वित भी किया गया है; लेकिन इनका लाभ बहुत ही कम लोगों को मिल पाया है। सरकार के द्वारा प्रदत्त नीतियों एवं सरकारी नौकरियों का लाभ वे जनजातीय लोग ही उठा पाये हैं, जिन्होंने शिक्षा प्राप्त कर ली है।

प्रश्न–9. जनजातियों की कुपोषण और स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं पर एक लेख लिखिए।

उत्तर– जनजातीय लोगों का सामान्य स्वास्थ्य बहुत बुरा नहीं है लेकिन लगातार संक्रमण से उनको प्रायः बीमारियों का सामना करना पड़ता रहता है। मूल प्रश्न यह है कि जन स्वास्थ्य की आधुनिक सुविधाओं का कितना भाग इन जनजातियों तक पहुँचता है? इस प्रश्न पर विचार करने से पूर्व हमें जनजातियों की स्वास्थ्य समस्याओं का परीक्षण करना होगा। वैसे तो जनजातियाँ अनेक बीमारियों से ग्रस्त रहती हैं परन्तु इनमें सबसे अधिक मात्रा में जल संक्रामक रोग पाये जाते हैं जिनमें काफी लोगों की मृत्यु हो जाती है। इन रोगों का मुख्य कारण पीने योग्य पानी की उपलब्धता में कमी है। जिन स्थानों पर जल प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है वहाँ पर भी जल गंदा एवं प्रदूषित होता है। परिणामस्वरूप अधिकांशतः लोग पेट–आंत तथा

चर्मरोगों के शिकार हो जाते हैं। दूषित जल के प्रयोग के कारण इन्हें कालरा, अतिसार, पेचिश आदि बीमारियाँ हो जाती हैं।

बीमारियों का कारण खनिजों तथा अन्य तत्वों की कमी भी हैं। हिमालय क्षेत्र में इनमें घेंघा जैसी गले की बीमारी अधिक होती है। इसका कारण आयोडीन की कमी है। हिमाचल प्रदेश के कुछ भागों की जनजातियों में यौन रोग बहुत पाया जाता है। बहुत-सी जनजातियों में पोषण तत्वों की कमी के कारण टीबी रोग की भी बहुतायत है। अधिकांशतः जनजातियों के लोगों में सभी प्रकार की वैक्सीन नहीं लगी होने से भी इन्हें नयी बीमारी आसानी से लग जाती है। धेबर के एक ऐसी बीमारी है जिससे जनजातीय लोग सदा भयभीत रहते हैं। यह रोग दक्षिणी उड़ीसा, आंध्रप्रदेश के एजेंसी क्षेत्र के उत्तरी भागों में तथा छत्तीसगढ़ के बस्तर जिले और महाराष्ट्र के चन्दा जिले में अधिक पाया जाता है। कुछ रोग तो सम्पूर्ण भारत में व्याप्त हैं और इन लोगों से जनजातियाँ भी इससे बची न रह सकीं। आंध्रप्रदेश के एजेंसी क्षेत्रों, असम की मिकिर पहाड़ियों, पश्चिम बंगाल के बांकुरा तथा पुरुलिया जिलों, झारखंड के संथाल जिला तथा उड़ीसा में मयूरभंज से पुरी के क्षेत्रों में इस रोग की बहुतायत है। जनजातियों में चर्मरोग, खुजली, एनीमिया तथा चेचक जैसे रोग भी सामान्य रोग हैं।

वर्तमान में सरकार, स्वास्थ्य तथा चिकित्सा की दिशा में जनजातियों को अनेक योजनाओं के द्वारा अधिक से अधिक सुविधायें प्रदान करने के प्रयास कर रही है। योजनाओं के असफल होने के निम्नलिखित कारण हैं-

(1) **अंधविश्वास का होना**– जनजातीय लोग प्रायः सरकारी अस्पतालों में कम ही आते हैं। इसका कारण है इनकी स्वयं की चिकित्सा पद्धतियाँ। सुदूरवर्ती तथा दुर्गम क्षेत्रों में रहने वाली जनजातियों में फैला यह विश्वास कि बीमारियाँ दैवी शक्तियों, भूत-प्रेतों के प्रकोप या किसी परम्परा या नियम के उल्लंघन के कारण होती हैं। ये लोग ऐसा मानते हैं कि दैवी शक्तियों के कारण हुई बीमारियाँ या दुर्भाग्य का इलाज भी उसी प्रकार होना चाहिए। इसलिए सुदूरवर्ती तथा दुर्गम क्षेत्रों में रहने वाली जनजातियों के अपने ओझा, जादू-टोना करने वाले तथा तांत्रिक होते हैं। इन सभी के उपचारों से निराश होने के बाद ही ये लोग अस्पतालों में जाते हैं। डॉक्टरों द्वारा ओझाओं को अपना प्रतिद्वन्द्वी समझने के कारण स्थिति और भी गंभीर हो जाती है।

सरकार द्वारा डॉक्टरों को यह निर्देश है कि वे लोग क्षेत्रीय उपचार पद्धति का न तो विरोध करें और न ही उसे अंधविश्वास कहें। इसके स्थान पर इस प्रकार की पद्धति को उन्हें विश्व की अन्य मनोवैज्ञानिक एवं आस्था-उपचार पद्धतियों की भाँति सम्मान देना चाहिए। एक बुद्धिमान डॉक्टर स्थानीय ओझाओं व पुजारियों से मित्रता करके उन्हें अपने हॉस्पीटल में आमंत्रित करेगा। उन्हें प्रार्थना तथा बलि करने से नहीं रोकते हुए उन्हें यह समझाएगा कि आधुनिक चिकित्सा पद्धति उनकी प्रणाली की पूरक है। स्थानीय पुजारियों की भूमिका मनोवैज्ञानिक रूप से अत्यधिक महत्वपूर्ण है। यदि किसी रोगी को यह विश्वास है कि उस पर किसी भूत-प्रेत का साया है तो ऐसी स्थिति में यह पुजारी ही उसके मन में बैठे डर को दूर करके उसका इलाज कर सकते हैं। चिकित्सा कर्मचारियों के लिए आवश्यक है कि यह लोग जनजातीय ओझाओं तथा दवाओं के प्रति सही दृष्टिकोण तथा व्यवहार रखें। अनुसूचित क्षेत्र

व अनुसूचित जनजाति आयोग की रिपोर्ट के अनुसार "सफल चिकित्सक वह है जो स्वास्थ्य सम्बन्धी सामाजिक मान्यताओं में रूचि रखता हो। जनजातियों के सपनों का स्वास्थ्य पर प्रभाव, जैसी मान्यताओं तथा जनजातीय चिकित्सा पद्धति को सम्मान देता हो।"

(2) **कार्यकर्ताओं तथा स्वास्थ्य कर्मचारियों की समस्याएँ**– भारतीय जनजातीय स्वास्थ्य की समस्या का स्वास्थ्य कर्मचारियों तथा प्रशिक्षित नर्सों की कमी भी एक महत्वपूर्ण पहलू है। अधिकांशतः स्वास्थ्य कर्मचारी गाँवों तथा जनजातीय क्षेत्रों में जाने की इच्छुक नहीं हैं। इसका कारण समुचित आवास, शिक्षा एवं अन्य व्यवस्थाओं की कमी तथा नगरों में उपलब्ध विलासिता के साधनों का गाँवों में न होना है। धेबर आयोग के अनुसार बीस वर्षों के बाद यही लोग अपने अस्पतालों को प्रोसाहित करना चाहिये। जनजातीय लोग रोग निदान हेतु जड़ी-बूटियों का उपयोग पहले से ही करते जा रहे हैं, इसलिए इन लोगों को चिकित्सा पद्धति स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं होगी।

(3) **दुर्गम भौगोलिक स्थितियाँ**– जनजातीय क्षेत्रों की भौगोलिक स्थितियों तथा दुर्गमता को ध्यान में रखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि चलित अस्पताल स्थिर अस्पताल से अधिक लाभकारी सिद्ध होंगे। ये चलित अस्पताल भी छोटी-छोटी गाड़ियों में होने चाहिए जिनसे ऊबड़-खाबड़ रास्तों पर भी आसानी के पहुँचा जा सके। इस प्रकार के चलित अस्पतालों हेतु एक जीप अधिक उपयोगी होगी जिसमें एक डॉक्टर, कर्मचारी तथा दवायें आसानी से जा सकती हैं। इस हेतु कभी-कभी अच्छी मजबूत बैलगाड़ियों का भी उपयोग किया जा सकता है। उत्तर-पूर्व में इन स्वास्थ्य इकाइयों को दुर्गम स्थानों पर पैदल चलना पड़ता है। प्रतिकूल परिस्थितियों में भी कैम्प आयोजित करने ऑपरेशन किये जाते हैं। इन स्थितियों में सद्भाव तथा समर्पण के बिना कार्य करना असंभव है।

(4) **दवाओं के स्टॉक तथा आपूर्ति के जटिल नियम**– दुर्गम क्षेत्रों में दवाओं की माँग तथा आपूर्ति के नियम भी बहुत जटिल हैं। दवाओं की मात्रा की जाँच मैदानों के मापदण्ड से की जाती है। इस प्रकार के नियम बनाते समय इस बात पर ध्यान नहीं दिया जाता कि जनजातीय क्षेत्रों में डॉक्टरों को इलाज करने के साथ-साथ जलवायु की विविधता का भी सामना करना पड़ता है तथा कभी-कभी आकस्मिक आवश्यकताओं तथा चिकित्सा हेतु विशेष प्रकार की दवाओं को स्टॉक में रखना पड़ता है।

(5) **मद्यपान तथा मादक वस्तुओं का सेवन करना**– जनजातीय लोगों में अफीम तथा अन्य नशीली वस्तुओं की लत होना भी एक गंभीर स्वास्थ्य समस्या है। अरुणाचल प्रदेश की सिंहफो जनजाति इसका सबसे बड़ा उदाहरण है। लगभग 150 वर्ष पूर्व इन लोगों की संख्या चालीस हजार थी जो अब लगभग एक हजार रह गयी है। यद्यपि अनेक युद्धों, बीमारियों तथा कुपोषण ने भी इसमें अपनी भूमिका निभायी है परन्तु अफीम के दुर्व्यसन ने इन्हें सबसे अधिक हानि पहुँचाई है। ऐसा विश्वास है कि अफीम के कारण इनकी जनन क्षमता भी कम हो गई है और मृत्यु-दर एवं भुखमरी भ बढ़ी है। सिंहफो लोग दिनभर अफीम व तम्बाकू पीते देखे जा सकते हैं। अफीम सिंहफो जीवन का एक अभिन्न अंग बन चुकी है। ये लोग अपने पशुओं तथा भूमि का ध्यान नहीं रखते परन्तु अफीम खरीदकर उसका सेवन अवश्य करते है। ये लोग बुरी तरह से अफीम के आदि हो चुके हैं।

निष्कर्ष– जनजातियों को स्वास्थ्य शिक्षा देना आवश्यक है। अधिकांश जनजातियाँ अशिक्षित हैं, परन्तु सिनेमा तथा वीडियो कैसेटों की सहायता से इन्हें स्वास्थ्य तथा सफाई के मूल सिद्धान्तों की जानकारी चाहिये। जनजातियों के स्वास्थ्य स्तर को बेहतर बनाने हेतु राज्य सरकार, केन्द्र सरकार, गैर-सरकारी संस्थाओं तथा स्वास्थ्य कर्मचारियों को परस्पर मिलजुल कर प्रयास करने चाहिए।

प्रश्न–10. जनजातियों के विस्थापन एवं प्रवास पर एक निबंध/लेख लिखिए।

उत्तर– विश्व के सभी समुदायों को, विशेष रूप से आदिम समुदायों को, अपनी भूमि तथा मूल निवास स्थान से गहरा भावनात्मक लगाव होता है। इसलिये यह देखने में आता है कि सामान्य परिस्थितियों में जनजातीय प्रवसन नहीं होता।

जनजातीय संदर्भ में प्रवसन की अवधारणा अधिक पुरानी नहीं है। संचार के साधनों के विकसित होने के बाद प्रवसन की संभावनायें भी बढ़ीं है। जनजातीय प्रवसन को हम दो बिन्दुओं से समझ सकते हैं– पहला, उन कारकों के माध्यम से जो किसी जनजातीय समूह को अपनी ओर आकर्षित करके अपना मूल स्थान छोड़ने के लिए प्रेरित करते हैं। पहली श्रेणी के कारकों में सामाजिक–आर्थिक शोषण, बीमारी, भुखमरी, बाढ़ तथा अकाल जैसी प्राकृतिक विपदाओं को शामिल किया जाता है। दूसरे प्रकार के कारकों में नगरों में रोजगार के बेहतर अवसर और अधिक मजदूरी जैसे कारक हैं जिनके कारण अनेक जनजातियाँ प्रवासी हो जाती हैं।

जनजातीय प्रवसन कोई एक सामान्य घटना है परन्तु योजनाबद्ध तरीके से तथा संगठित तौर पर एजेंटों के माध्यम से बड़े पैमाने पर प्रेरित प्रवसन एक बड़ी घटना है। बिहार तथा बंगाल के संथाल, ओराव तथा मुंडा 'हो' जैसी जनजातियाँ उत्तरी बंगाल व असम के चाय बागानों में मजदूरी हेतु जाती रही हैं परन्तु पिछले कुछ दशकों में हरियाणा तथा पंजाब की ओर इनका प्रवसन एक नवीन घटना है। हरित क्रान्ति तथा समृद्धि के ये दोनों राज्य निर्धन तथा शोषित जनजातियों के लिए बड़े ही आकर्षण के केन्द्र बन गये हैं। यद्यपि 1980 के बाद से अज्ञात परिस्थितियों के कारण अब इन लोगों का पंजाब की ओर प्रवसन कम हो गया है। मीडिया की रिपोर्टों के अनुसार प्रवासी जनजातीय खेतिहर मजदूरों को हरियाणा और पंजाब में अफीम का आदी बनाकर उनका शोषण किया जाता रहा है। ये प्रवासी लोग असंगठित होने के कारण अपने शोषण के विरूद्ध अपनी प्रभावपूर्ण आवाज नहीं उठा पाते।

अनेक समाजशास्त्रियों का मत है कि इस प्रकार का प्रवसन एक अप्राकृतिक एवं तर्कसंगत घटना है जिसमें, श्रम के कम क्षेत्रों से बहुतायत एवं अधिकता वाले क्षेत्रों की ओर प्रवसन जरूरी है। इस प्रकार जनजातीय प्रवसन स्थायी भी हो सकता है तथा अस्थायी भी लेकिन प्रवसन अवश्य होता है, कभी कम मात्रा में तो कभी अधिक।

प्रश्न–11. जनजातीय आन्दोलन से आप क्या समझते हैं? इसके प्रमुख कारण लिखिये।

अथवा

भारत में जनजातीय आन्दोलन की पृष्ठभूमि का वर्णन कीजिये।

अथवा

जनजातीय आन्दोलन के प्रमुख कारकों की चर्चा कीजिये।

अथवा

उन कारणों की चर्चा कीजिये जिनसे जनजातीय आन्दोलनों की उत्पत्ति हुई।

अथवा

भारत में जनजाति आन्दोलन के क्या कारण हैं?

अथवा

जनजातीय आंदोलन क्या हैं? भारत में जनजातीय आंदोलनों के प्रमुख कारण बताइये।

अथवा

जनजातीय आन्दोलन को परिभाषित कीजिये। जनजातीय आन्दोलन के कारणों का वर्णन कीजिये।

उत्तर– आधुनिक युग आन्दोलनों का युग है। विश्व का कोई भी समाज इससे अछूता नहीं है। आन्दोलनकारियों की यह धारणा गलत नहीं है कि आज का शासक आन्दोलन की भाषा ही समझता है। आन्दोलन तब सम्भव होता है जब लोगों में अपने अधिकार के सम्बन्ध में पर्याप्त जागरूकता हो।

जनजातीय आन्दोलन की पृष्ठभूमि– भारत जनजातियों का अजायबघर है। अफ्रीका के बाद सबसे अधिक जनजातियों वाला देश भारत ही है। यहाँ प्रजातीय, सांस्कृतिक, भौगोलिक आदि अनेक आधारों वाली जनजातियाँ पाई जाती हैं। यहाँ अभी भी ऐसी जनजातियाँ हैं जिनका सभ्य समाज से ठीक से सम्पर्क नहीं है। वहीं ऐसी भी जनजातियाँ हैं जो सभ्य समाज के सम्पर्क में आने से परिवर्तन के दौर से गुजर रही हैं। बाह्य समाज के सम्पर्क, शिक्षा का प्रसार, सरकारी कानून और संवैधानिक व्यवस्थाओं से इन जनजातियों में आमूल–चूल परिवर्तन आये। उनका सम्पर्क देश–विदेशों के साथ स्थापित हुआ। 'आदिम समाज' के लिये यह स्थिति क्रान्तिकारी थी। इसी ने इन लोगों में आत्मविश्वास तथा जागरूकता उत्पन्न की। अपनी समस्याओं से सचेत किया और अन्याय के विरुद्ध संगठित होकर आवाज उठाने के लिये प्रेरणा दी। यहीं से जनजातीय आन्दोलनों का श्रीगणेश हुआ।

बी.के. रॉयबर्मन (B.K. Roy Burman) के अनुसार, अंग्रेजी शासन की स्थापना, ईसाई मिशनरियों का प्रभाव आदि के कारण आन्दोलनों की सुगबुगाहट विभिन्न जनजातियों में प्रारम्भ हुई। उन्होंने जनजातीय आन्दोलनों के लिये निम्नलिखित आधार प्रमुख रूप से माने हैं–

1. प्राकृतिक आवास की गोपनीयता भंग होने के डर से उपजे आन्दोलन।
2. प्राकृतिक साधनों पर नियंत्रण समाप्त होने के डर से उपजे आन्दोलन।
3. सम्पूर्ण सामाजिक अंतःक्रिया के ढांचे में उनकी परम्परागत स्थिति एवं भूमिका को ठेस पहुँचने के डर से उपजे आन्दोलन।
4. समाज तथा सरकार के बीच सम्बन्धों के नये अर्थ ढूंढने से सम्बन्धित आन्दोलन।
5. व्यक्ति तथा समाज के बीच सम्बन्धों के नये अर्थ ढूंढने संबंधी आन्दोलन।
6. अपने समुदाय की अलग पहचान बनाये रखने के प्रयासों से सम्बन्धित आन्दोलन।
7. अपने क्षेत्र के साधनों पर अपने समुदाय के नियंत्रण को बनाये रखने से सम्बन्धित आन्दोलन।
8. प्रत्येक स्तर पर अपने समुदाय के लिये अधिकाधिक सत्ता प्राप्त करने से सम्बन्धित आन्दोलन।

जनजातीय लोग सामान्यतः शान्त प्रकृति के सौम्य, सरल, नैसर्गिक, शांतिदायक तथा परोपकारी हैं परन्तु यही शांत प्रकृति कभी-कभी रौद्र स्वरूप धारण कर लेती है। जनजातीय जीवन में इसी कारण अनेक आन्दोलनों का जन्म हुआ।

जनजातीय आन्दोलनों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करें तो इन आन्दोलनों के लिये निम्नलिखित कारक उत्तरदायी प्रतीत होते हैं-

1. **भूमि अधिकारों से वंचित करना–** जंगलों की भूमि पर जनजातियों का आधिपत्य था परन्तु अंग्रेजों के शासन के समय से ही जंगलों पर सरकार का आधिपत्य हो गया। फलस्वरूप उनकी आर्थिक व्यवस्था तहस-नहस हुई।
2. **भूमि पर गैर आदिवासियों का आधिपत्य–** जनजातियों के पास जो भूमि थी वह सेठ, साहूकार, महाजनों ने षड्यंत्रों के तहत हथिया ली।
3. **शोषण–** जनजातीय लोगों के भोलेपन तथा अज्ञानता का लाभ उठाकर उनका खूब आर्थिक एवं शारीरिक शोषण बाहरी लोगों के द्वारा किया गया।
4. **अत्यधिक करारोपण–** वनोपजों पर शासन ने इतने अधिक कर लाद दिये कि इनकी आर्थिक स्थिति चरमरा गई और ये श्रम करने पर मजबूर हुये।
5. **धर्म-प्रचारकों द्वारा धोखाधड़ी–** ईसाई धर्म-प्रचारकों ने इन्हें विविध प्रकार के लालच देकर इनका धर्म परिवर्तन किया। फलस्वरूप इनके समक्ष विविध समस्यायें उठ खड़ी हुईं।
6. **ब्रिटिश सरकार की स्वार्थी नीति–** ब्रिटिश सरकार की अहस्तक्षेप की नीति के कारण उन्होंने जनजातीय समस्याओं पर कोई ध्यान नहीं दिया और इनका खूब शोषण किया।
7. **पर-संस्कृति ग्रहण की प्रतिक्रिया–** ईसाईकरण के कारण इनके समूह में ईसाई और गैर ईसाई लोगों में संघर्ष उत्पन्न हुये।
8. **हिन्दू समाज के साथ संस्कृतिकरण के लिये आन्दोलन–** भील तथा गोंड जनजातियों पर हिन्दू धर्म का प्रभाव पड़ा है। हिन्दू समाज के साथ संस्कृतिकरण की प्रक्रिया तेज हुई है।
9. **राजनीतिक स्वार्थ–** जनजातीय क्षेत्रों के राजाओं ने अपने राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति के लिये इनका दुरुपयोग किया।
10. **स्वाधीनता आन्दोलन–** स्वाधीनता के आन्दोलन से संबद्ध होने के कारण इन पर भी इस आन्दोलन का प्रभाव पड़ा।

प्रश्न–12. प्रमुख जनजातीय आन्दोलनों का वर्णन कीजिये तथा इनके परिणामों पर टिप्पणी कीजिये।

अथवा

भारत में हुये किसी एक जनजातीय आंदोलन का वर्णन कीजिये।

अथवा

भारत में प्रमुख जनजातीय आंदोलनों का वर्णन कीजिये।

उत्तर– मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, बिहार, उड़ीसा आदि राज्य जनजातीय बहुल क्षेत्र हैं। बिहार का छोटा नागपुर क्षेत्र इस दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मुण्डा, उरांव तथा संथाल जो

सबसे बड़ी जनजातियाँ मानी जाती हैं, इसी क्षेत्र मे निवास करती हैं। ये कृषि-प्रधान तथा शांत प्रकृति के लोग हैं। अंग्रेजी शासन तथा ईसाई धर्म-प्रचारकों के प्रभाव से यहां तीन बड़े आन्दोलन पैदा हुये।

1. **मुण्डा-बिरसा आन्दोलन–** मुण्डा जनजाति में भूस्वामित्व सामुदायिक होता था। इसकी व्यवस्था जनजातीय सरदार करते थे। धीरे-धीरे ये शक्तिशाली हुये। गैर आदिवासी राजाओं के साथ इनके सम्पर्क के कारण बाहरी लोग जैसे- कृषक, व्यापारी, महाजन आदि इन क्षेत्रों मे बस गये और जमींदार हो गये। ब्रिटिश शासन ने इनके माध्यम से जनजातीय लोगों का खूब शोषण किया। उनके अत्याचारों की कोई सीमा नहीं थी। ईसाई धर्म-प्रचारकों ने भी झूठे आश्वासन देकर इनका धर्म परिवर्तन किया परन्तु जब धर्म-प्रचारकों के दावे खोखले निकले तो ये शिक्षित व्यक्ति अपनी कठिनाईयों से मुक्ति पाने के लिये संगठित हुये। इन लोगों को बिरसा ने नेतृत्व दिया। धर्म परिवर्तन के बाद उसने शिक्षा प्राप्त की। परन्तु उस पर हिन्दू धर्म का प्रभाव था, वह यह जानता था कि मुण्डाओं में संस्कृतिकरण की आकांक्षा है। हिन्दू धर्म के बारे में उसे पूर्ण ज्ञान था। अतः वह इनका नेता बना और स्वयं को ईश्वर का अवतार बताया। उसने समाज-सुधार की दृष्टि से लोगों को चोरी, बेईमानी, हत्या, मद्यपान तथा एक से अधिक विवाह न करने के लिये प्रवृत्त किया। 1895 में उसके नेतृत्व में मुण्डा राज्य की स्थापना तथा शोषण से मुक्ति के लिये आन्दोलन किया। उसे कुटिलता से पकड़कर ढाई वर्ष की सजा दी गई। जेल से छूटने के बाद उसने भूमिगत रहकर आन्दोलन जारी रखा। अंग्रेजों ने फौज भेजकर आन्दोलन को कुचल दिया। बिरसा की मृत्यु से आन्दोलन की गति धीमी पड़ गई।

2. **ताना भगत आन्दोलन–** इस आन्दोलन पर बिरसा मुण्डा का प्रभाव था। इस का प्रणेता जात्रा उरांव था। ताना भगत आन्दोलन के तीन लक्ष्य थे-

(i) संस्कृतिकरण (हिन्दू),
(ii) जमींदारों, साहूकारों तथा मिशनरियों का विरोध।
(iii) देश के स्वतंत्रता आन्दोलन में योगदान।

जात्रा ने प्रचारित किया कि वह ईश्वर का प्रतिनिधि है। उसने मांस खाने तथा मद्यपान करने से लोगों को रोका। उसने परम्परागत देवी-देवताओं के प्रति अनास्था प्रकट कर गौपूजा के लिये लोगों को प्रेरित किया। एकेश्वरवाद पर बल दिया। इसका हार को प्रोत्साहित किया। इनमें आस्था रखने वाले ताना भगत कहलाने लगे।

यह आन्दोलन धार्मिक आन्दोलन के साथ ही स्वाधीनता का आन्दोलन भी था। अंग्रेज अधिकारियों, जमींदारों एवं मिशनरियों पर हमला बोलकर इन्होंने स्वतंत्रता सेनानियों का साथ दिया। स्वदेशी आन्दोलन के प्रभाव में मिल के बने कपड़ों का बहिष्कार भी किया। 1921 में जात्रा भगत की गिरफ्तारी से अहिंसक आन्दोलन हिंसक बना। अंग्रेजों के दमन के बावजूद यह आन्दोलन चलता रहा।

3. **संथाल विद्रोह–** आर्थिक शोषण के कारण संथाल विद्रोह उत्पन्न हुआ। कान्हू और सिद्धू भाईयों ने इस आन्दोलन का नेतृत्व किया। यह आन्दोलन 1855 में हुआ। इस जनजाति में भी भूमि पर सामुदायिक आधिपत्य पाया जाता है। उन्होंने परिश्रम से वन भूमि को

उपजाऊ भूमि में परिवर्तित किया। अंग्रेजों ने इनसे कार्य करवाकर भू-स्वामित्व जमींदारों को सौंपा तथा इनके माध्यम से लगान में बेतहाशा वृद्धि की। इनके साथ ही व्यापारी, महाजन, साहूकार इन्हें लूटने-खसोटने लगे। उनसे बेगार करवाने लगे। इससे उनमें विद्रोह की भावना उत्पन्न हुई। उन्होंने बाहरी लोगों को जनजातीय क्षेत्रों को छोड़ने की चेतावनी दी। शासन को प्रार्थना-पत्र दिये। परन्तु जब इसका कोई असर नहीं हुआ तो 1855 में यह आन्दोलन उग्र हो गया। इस आन्दोलन को दबाने के लिये अंग्रेजों ने फौज की सहायता ली। अंग्रेजों ने कुटिलता से इसके नेताओं को मार डाला परन्तु इन्होंने अपना लक्ष्य नहीं त्यागा। वे देश के स्वतंत्रता आन्दोलन में अपना योगदान देते रहे।

4. **राजमोहिनी देवी आन्दोलन–** यह आन्दोलन भी संस्कृतिकरण आन्दोलनों की श्रेणी का है। राजमोहिनी देवी जो मांझी गोण्ड थी महात्मा गाँधी से प्रभावित थी। 1951 में अकाल के दिनों में वर्षा हेतु इन्होंने 21 दिन का उपवास किया और 22 वें दिन वर्षा हुई। लोग उनके भक्त बन गये। राजमोहिनी देवी ने बापू धर्म सेवा आदिवासी मण्डल बनाया। इसके माध्यम से उन्होंने बुराईयों को छोड़कर गाँधीवादी मार्ग अपनाने पर लोगों को प्रवृत्त किया। शराबबंदी, मांसाहार का त्याग, प्रतिदिन स्नान करना तथा सत्य बोलना ये बातें अपनाने पर जोर दिया। लोग नशा करना छोड़ने लगे परन्तु कुछ स्वार्थी तत्वों के घुस आने से इस आन्दोलन का प्रभाव जाता रहा।

5. **नागा विद्रोह–** ये लोग स्वाभिमानी तथा स्वायत्तता प्रिय हैं। 1885 में अंग्रेज बड़ी मुश्किल से इन पर सत्ता स्थापित कर सके। इसके साथ ही मिशनरी इनके क्षेत्र में घुस पड़े। शिक्षा, स्वास्थ्य और विकास की आड़ में उन्होंने इनकी जिन्दगी बदल दी। ईसाईकरण के साथ-साथ भारत द्वेष की भावना भरी गई। वे भारत से स्वतंत्र होने का स्वप्न देखने लगे। उन्हें विश्वास था कि स्वतंत्रता के समय पाकिस्तान के साथ ही उन्हें भी स्वतंत्रता मिल जायेगी परन्तु ऐसा संभव नहीं हुआ। विदेशी सहायता, चर्च तथा चीन के सहयोग से उन्होंने सशस्त्र आन्दोलन प्रारम्भ किया लेकिन चर्चाओं एवं वार्ताओं के माध्यम से शांतिपूर्ण हल निकालकर नागा राज्य के लिये उन्हें तैयार कर लिया गया। यह राज्य नागालैण्ड के नाम से जाना जाता है। इससे प्रेरणा प्राप्त कर त्रिपुरा, अरुणाचल, मेघालय और मिजोरम राज्य अस्तित्व में आये। अब बोडो जनजाति द्वारा बोडोलैण्ड की माँग की जा रही है।

6. **झारखण्ड आन्दोलन–** संथालों द्वारा 1855 में अंग्रेजों के विरुद्ध स्वतंत्रता हेतु किया गया आन्दोलन सफलता प्राप्त नहीं कर सका। देश की स्वतंत्रता के पश्चात् इसने पुनः जोर पकड़ा। धीरे-धीरे यह तीव्र होता गया। आन्दोलनकारियों ने अलग झारखण्ड राज्य की माँग की थी। इस आन्दोलन में जिसके फलस्वरूप बिहार राज्य का विभाजन कर पृथक झारखण्ड राज्य बनाया गया।

इस प्रकार समय-समय पर विभिन्न क्षेत्रों में जनजातीय लोगों ने अपने अधिकारों की प्राप्ति हेतु आन्दोलन किये हैं।

प्रश्न–13. भारतीय जनजातियों में हुये सामाजिक–राजनीतिक आन्दोलनों का वर्णन कीजिये।

अथवा

'जनजातीय आन्दोलन' पर एक निबन्ध लिखिये।

अथवा

भारत में जनजातीय आन्दोलन का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत कीजिये।

अथवा

भारत में जनजातीय आन्दोलन विषय पर एक निबन्ध लिखिये।

अथवा

भारत में जनजातीय आन्दोलन पर लेख लिखिये।

उत्तर– भारतीय जनजातियों द्वारा चलाये गये मुख्य सामाजिक-राजनीतिक आन्दोलनों को क्षेत्रीय आधार पर तीन वर्गों में बाँटा जा सकता है। ये वर्ग हैं क्रमशः (i) पूर्वी भारत की जनजातियों द्वारा आन्दोलन, (ii) छोटा नागपुर की जनजातियों द्वारा आन्दोलन, (iii) मध्य भारत की अन्य जनजातियों द्वारा आन्दोलन। इन सामाजिक-राजनीतिक आन्दोलनों का संक्षिप्त परिचय निम्नलिखित है-

(I) पूर्वी भारत की जनजातियों द्वारा आन्दोलन– पूर्वी भारत में अनेक जनजातियों का निवास है, जिनमें से मुख्य हैं- नागा, गारो, खासी, मीजो, कूकी, डकला, मिकिर तथा कचारी। एक ही क्षेत्र में रहने वाली इन जनजातियों की भाषायें अलग-अलग हैं तथा सांस्कृतिक भिन्नता भी है। इस क्षेत्र की जनजातियों की एक उल्लेखनीय विशेषता यह है कि जनजातियाँ सांस्कृतिक तथा राजनीतिक दृष्टि से जागरूक हैं। इसका एक कारण यह है कि ये जनजातियाँ पाश्चात्य सभ्यता के सम्पर्क में अधिक रही हैं। इस क्षेत्र में ईसाई मिशनरियों की गतिविधियाँ अधिक रही हैं। इन्हीं मिशनरियों के सम्पर्क एवं प्रयासों के परिणामस्वरूप इस क्षेत्र की जनजातियों ने काफी अधिक संख्या में ईसाई धर्म को स्वीकार कर लिया है। गत एक-दो शताब्दियों में इस क्षेत्र में अनेक जनजातीय आन्दोलन हुये हैं। ये आन्दोलन मुख्य रूप से धार्मिक तथा राजनीतिक प्रकार के थे। जब तक भारत में अंग्रेजों का शासन स्थापित नहीं हुआ था, तब तक इस क्षेत्र में जनजातीय आन्दोलन स्थानीय शासक के विरुद्ध होते थे। इसके बाद ब्रिटिश शासकों के विरुद्ध भी इस क्षेत्र में जनजातीय आन्दोलन हुये।

जैसा कि कहा गया है कि इस क्षेत्र की जनजातियों का रुझान धर्म की ओर अधिक हो गया था अतः इन जनजातियों ने हिन्दू, बौद्ध एवं इस्लाम धर्म के प्रति उदासीन एवं विरोध का ही रुख बनाये रखा। इस क्षेत्र की अधिकाँश जनजातियाँ देश की मुख्य धारा एवं सामाजिक-साँस्कृतिक जीवन से अलग ही रहीं। इन आन्दोलनों को आयोजित एवं संचालित करने में विभिन्न जनजातीय संगठनों का हाथ रहा है। मुख्य रूप से नागा क्लब, नागा नेशनल कौंसिल, नागा यूथ मूवमैन्ट तथा नागा वूमैन सोसाइटी का उल्लेख किया जा सकता है।

भारत के स्वतंत्र हो जाने के उपरान्त भी इस क्षेत्र में जनजातीय आन्दोलन चलते ही रहे। इस क्षेत्र के विभिन्न जनजातीय संगठन निरन्तर स्वायत्तता की माँग करते रहे। इस माँग को उठाने वाले मुख्य संगठन थे- नागा राष्ट्रीय परिषद्, आसाम-हिल ट्राइब यूनियन, इस्टर्न इण्डियन ट्राइबल यूनियन तथा ऑल पार्टी हिल कौंसिल। भारत सरकार इन आन्दोलनों के प्रति निरन्तर सजग रही है तथा समस्या के समाधान के लिये निरन्तर प्रयास किये गये। इस उद्देश्य को लेकर अशोक मेहता कमीशन, परासकर कमीशन तथा जयप्रकाश शांति मिशन भी गठित किये गये तथा अन्त में स्थायी शान्ति एवं व्यवस्था बनाने के लिये राजनीतिक हल खोजे गये। इस दल के परिणामस्वरूप 1961 में नागालैण्ड नाम से एक अलग राज्य स्थापित किया गया। इसी प्रकार त्रिपुरा, मणिपुर तथा मेघालय के नाम से भी अलग-अलग राज्य

बनाये गये। ये सब प्रयास करने पर भी इस क्षेत्र के जनजातीय आन्दोलन समाप्त नहीं हुये हैं। आये दिन किसी न किसी माँग को लेकर जनजातीय आन्दोलन होते ही रहते हैं। इसी सन्दर्भ में आजकल चल रहे बोरो छात्र आन्दोलन का भी उल्लेख किया जा सकता है।

(II) छोटा नागपुर की जनजातियों द्वारा आन्दोलन– छोटा नागपुर क्षेत्र में भी अनेक जनजातियाँ अति प्राचीन समय से बसी हुई हैं। ये जनजातियाँ भी समय–समय पर सामाजिक, राजनीतिक तथा धार्मिक आन्दोलन करती रही हैं। इस क्षेत्र के आन्दोलन मुख्य रूप से स्थानीय शासकों तथा भू–स्वामियों के तथाकथित अत्याचारों के विरुद्ध होते रहे हैं।

इन आन्दोलनों को संगठित करने में विभिन्न चमत्कारिक नेताओं का विशेष रूप से हाथ रहा है। इन नेताओं ने समय–समय पर विभिन्न माँगें उठायीं तथा जनजातीय माँगों के आधार पर आन्दोलन चलाये। इस क्षेत्र के जनजातीय आन्दोलन अपने स्वरूप से मुख्य रूप से क्रान्तिकारी तथा सुधारवादी थे। इन आन्दोलनों को सम्बन्धित नेता के नाम से जाना जाता है। कुछ मुख्य आन्दोलनों का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है–

(1) **बिरसा आन्दोलन–** छोटा नागपुर क्षेत्र की मुण्डा जनजाति ने सन् 1870 से 1890 तक एक प्रबल आन्दोलन चलाया, जिसे बिरसा आन्दोलन के नाम से जाना जाता है। इस आन्दोलन को चलाने वाले व्यक्ति का नाम बिरसा था तथा इस व्यक्ति को मुण्डा जनजाति के लोग भगवान के अवतार के रूप में स्वीकार करते थे। यह बिरसा आन्दोलन मुण्डा जनजाति की सामाजिक–आर्थिक स्वतंत्रता तथा धार्मिक सुधारों के लिये हुआ था। यह विद्रोहरूपी आन्दोलन लगभग बीस वर्ष तक चलता रहा। मुण्डा लोगों ने विद्रोहस्वरूप लगान देना भी बन्द कर दिया। इस आन्दोलन का काफी प्रभाव तत्कालीन अंग्रेजी शासन पर भी पड़ा था।

(2) **तानाभगत आन्दोलन–** यह आन्दोलन ओरांव जनजाति द्वारा आयोजित किया गया था। यह आन्दोलन भी जनजातीय सामाजिक सुधारों से सम्बन्धित था। इस आन्दोलन का संचालक जावा नामक व्यक्ति था। इस आन्दोलन का आयोजन 1913–14 ई. में किया गया। इस समाज–सुधारक आन्दोलन के अन्तर्गत सम्बन्धित नेतृत्व ने ओरॉव जनजाति के सदस्यों को शराब पीने एवं माँस खाने की प्रवृत्ति को त्यागने के लिये प्रेरित किया। पारस्परिक रूप से प्रचलित जादू–टोने तथा भूत–प्रेत सम्बन्धित विश्वासों को छोड़कर ईश्वर के प्रति आस्था जागृत की गयी। इस आन्दोलन के अनुयायियों को तानाभगत कहा जाता था तथा सभी तानाभगत खादी के वस्त्र पहिनते थे। आन्दोलनकारियों ने भी भूमि का लगान देना बन्द कर दिया था तथा आन्दोलन को असहयोगात्मक रूप दे दिया था।

(3) **बीरसिंह आन्दोलन–** यह आन्दोलन मुख्य रूप से संथाल जनजाति द्वारा चलाया गया। इस आन्दोलन का प्रारम्भ 1854 ई. में हुआ। आन्दोलन के नेता का नाम बीरसिंह था। यह आन्दोलन मुख्य रूप से भू–स्वामियों के विरुद्ध खुला विद्रोह था। इसी क्षेत्र में भागीरथ आन्दोलन 1870 तथा बेनगाम आन्दोलन, 1930 भी आयोजित हुये। इसके अतिरिक्त 'हो' जनजाति ने भी स्थानीय शासकों तथा जमींदारों के विरुद्ध 1882 में आन्दोलन किया। असुर जनजाति द्वारा धार्मिक आन्दोलन का संचालन हुआ।

उपर्युक्त वर्णित मुख्य आन्दोलनों के अतिरिक्त मध्य भारत में कुछ अन्य जनजातीय आन्दोलन भी होते रहे हैं। उदाहरण के लिये– गोंड जनजाति द्वारा हिन्दूकरण के लिये आन्दोलन हुये। इसी जनजाति के माऊसिंग तथा राजनेगी ने कुछ सुधारवादी आन्दोलन चलाये। महुआदेव ने 1945 में एक आन्दोलन का संचालन किया जिसका उद्देश्य नशाखोरी का विरोध करना था।

जनजातीय आन्दोलनों की वर्तमान स्थिति

उपरोक्त विवरण द्वारा इन आन्दोलनों का विवरण प्राप्त होता है, जो स्वतंत्रता पूर्वकाल में आयोजित हुये थे। स्वतंत्रता प्राप्त करने के उपरान्त हमारे देश की परिस्थितियों में उल्लेखनीय परिवर्तन हुये। परन्तु इस काल में भी अनेक जनजातीय आन्दोलन होते रहे हैं। कुछ जनजातीय आन्दोलन तो सकारात्मक तथा निर्माणकारी रहे हैं जबकि कुछ अन्य आन्दोलन संगठित विरोध तथा विद्रोह के रूप में सामने आये हैं। कुछ जनजातियाँ समय–समय पर पृथक् राज्य की माँग को लेकर आन्दोलन करती रहती हैं। उदाहरण के लिये– झारखण्ड आन्दोलन इसी प्रकार का एक लम्बे समय से चलने वाला आन्दोलन है। इसी प्रकार गोंडवाना क्षेत्र की जनजातियों ने भी सन् 1960 में अलग राज्य की माँग को लेकर आन्दोलन किया था। भीलों ने भी इसी प्रकार की माँग उठाई थी। दक्षिणी गुजरात की जनजातियाँ भी अलग राज्य की माँग करती रही हैं। नक्सलवादी आन्दोलन भी प्रबल रहा है। आजकल असम में बोरो आन्दोलन चल ही रहा है।

प्रश्न– 14. भारतीय जनजातियों में क्या परिवर्तन हो रहे हैं? विवेचना कीजिये।

अथवा

'भारतीय जनजातियाँ परिवर्तन के दौर से गुजर रही हैं।' स्पष्ट कीजिये।

उत्तर– भारतीय जनजातियों में परिवर्तन अंग्रेजी शासन काल से ही प्रारम्भ हो चुका था। स्वतंत्रता के पश्चात् परिवर्तन की प्रक्रिया में तेजी आई। औद्योगिकरण, नगरीकरण, संचार सुविधाओं में वृद्धि, नये कानून, विभिन्न धर्मों के लोगों से संपर्क आदि के कारण जनजातीय समाज के सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक आदि सभी पहलुओं में परिवर्तन दिखाई दे रहा है।

जनजातीय समाजों में परिवर्तन– जनजातीय समाजों में हमें निम्नलिखित क्षेत्रों में परिवर्तन दिखाई देते हैं–

(1) **सामाजिक–सांस्कृतिक क्षेत्र में परिवर्तन–** बाह्य संपर्क, आधुनिकीकरण, शिक्षा आदि के फलस्वरूप जनजातीय समाज में अनेक सामाजिक, सांस्कृतिक परिवर्तन दिखाई देते हैं। बिहार की अनेक जनजातियाँ जाति व्यवस्था में परिवर्तित हो गई हैं। डॉ. श्री निवास ने मैसूर की जनजातियों में ''संस्कृतिकरण'' की प्रक्रिया के संबंध में विवेचना की है। बिहार की जनजातियां हिन्दू संस्कारों को अपना चुकी हैं। नागा, गारो, भील, गोंड आदि जनजातियों ने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया है।

धर्म परिवर्तन से इनमें कई परिवर्तन दिखाई देते हैं। ये अब बहु विवाह के स्थान पर एक विवाह करने लगे हैं। संयुक्त परिवार को छोड़ एकाकी परिवार में रहने लगे हैं। गोत्र व्यवस्था शिथिल हो रही है। जीवन–साथी चुनने की प्रथायें भी खत्म हो रही हैं। इनकी सांस्कृतिक संस्था 'घोटुल' अथवा 'युवागृह' अब उपेक्षा का शिकार हो रही है।

(2) **धार्मिक परिवर्तन–** जनजातीय धर्म प्रकृति पर निर्भर था। ये लोग जीवसत्तावाद, प्रकृतिवाद एवं आत्मवाद में विश्वास कर प्रकृति की पूजा करते थे। बिरसा आन्दोलन के कारण मुण्डा जनजाति तथा भगत आंदोलन के कारण ओरांव तथा भील जनजातियों में हिन्दू धर्म का प्रभाव दिखाई देता है। हिन्दू धर्म को स्वीकारने वाली जनजातियां हिन्दू देवी-देवताओं एवं धर्मग्रंथों को मानने लगी हैं। ईसाई धर्म को स्वीकारने वाली जनजातियां चर्च जाती हैं तथा ईसाई त्यौहारों को मनाती हैं। अपने मूल धर्मों को छोड़ने वाले व्यक्ति अपने जनजातीय समूह से अलग हो जाते हैं। इससे उनकी जनजातीय एकता खत्म हो गई है।

(3) **शैक्षणिक परिवर्तन–** जनजातियों में आधुनिक शिक्षा का प्रचार-प्रसार हुआ है। वे अब अपनी परम्परागत संस्थाओं के स्थान पर विद्यालयों एवं महाविद्यालयों में विज्ञान एवं तकनीकी शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। जो उच्च शिक्षा ग्रहण कर लेते हैं वे समाज में उच्च स्थान प्राप्त करते हैं। साथ ही उच्च शिक्षित व्यक्ति अपने जनजातीय समूह से पृथक भी हो जाता है।

(4) **आर्थिक परिवर्तन–** जनजातियों का आर्थिक जीवन सरल था। जंगलों से वे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर लेते थे लेकिन नये कानूनों के कारण जंगलों पर से उनका अधिकार खत्म हो गया। साथ ही मुद्रा के प्रचलन से उनकी संपूर्ण आर्थिक व्यवस्था में परिवर्तन आया। जहां आर्थिक समृद्धि ने इन्हें राजनैतिक प्रतिस्पर्धा के लिये तैयार किया है वहीं इनके शोषण में भी वृद्धि हुई है।

(5) **राजनीतिक परिवर्तन–** इनकी राजनीतिक व्यवस्था भी बदल गई है। इनके समाज के कानूनों का स्थान अब आधुनिक कानूनों एवं न्याय व्यवस्था ने ले लिया है। परम्परागत नेतृत्व के स्थान पर अब प्रजातांत्रिक नेतृत्व स्थापित हो चुका है। वे अब चुनाव की प्रक्रिया के तहत पंचायत से लेकर संसद तक शासन की प्रक्रिया में भागीदार हो चुके हैं। वे अब विभिन्न राजनीतिक दलों की सदस्यता ग्रहण कर चुके हैं। संविधान द्वारा दी गई राजनीतिक एवं आर्थिक सुविधाओं के कारण न केवल उनकी आर्थिक स्थिति मजबूत हुई है वरन् उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा में भी वृद्धि हुई है। इसके साथ ही प्रतिस्पर्धा, संघर्ष, गुटबाजी, तनाव आदि का विस्तार भी जनजातीय समाज में हुआ है।

प्रश्न–15. जनजातीय विकास योजनायें क्या हैं? भारत में जनजातीय विकास योजनाओं का मूल्यांकन कीजिये।

अथवा

भारतीय जनजातियों की समस्याओं के समाधान हेतु सरकार द्वारा किये गये प्रयत्नों का उल्लेख (वर्णन) कीजिये।

अथवा

भारत में स्वतंत्रता के पश्चात् जनजातीय कल्याण हेतु किये गये प्रयत्नों का मूल्यांकन कीजिये।

अथवा

जनजाति का अर्थ बताते हुये जनजातीय विकास की दशा में किये जा रहे प्रमुख प्रयासों का वर्णन कीजिये।

अथवा

जनजातीय कल्याण के सन्दर्भ में विकास योजनाओं की विवेचना कीजिये।

अथवा

भारत में जनजातियों के लिये किये जा रहे विकास कार्यक्रमों का वर्णन कीजिये।

अथवा

भारत में जनजातीय विकास की प्रमुख योजनायें क्या हैं? विवेचना कीजिये।

उत्तर– जनजातीय समस्याओं को हल करने के व्यापक प्रयास स्वतंत्रता के पश्चात् ही किये गये हैं। बुद्धिजीवियों, समाजसेवी संस्थाओं तथा सरकार द्वारा अनेक प्रयास किये हैं। यहाँ हम सरकार द्वारा किये गये विकास कार्यों का अवलोकन करेंगे–

जनजातियों के लिये सरकार द्वारा किये गये विकास कार्य
1. प्रशासनिक व्यवस्था
2. कल्याणकारी एवं सलाहकार संस्थायें
3. संसदीय समितियाँ
4. राज्यों में कल्याण विभाग
5. विधानसभाओं में प्रतिनिधित्व
6. शासकीय सेवाओं में आरक्षण
7. कल्याण योजनायें
8. योजना कार्यक्रम

1. प्रशासनिक व्यवस्था– अनुच्छेद 224 द्वारा मध्यप्रदेश, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश, उड़ीसा, बिहार के कुछ क्षेत्र 'अनुसूचित' घोषित किये हैं। इन राज्यों के राज्यपाल प्रतिवर्ष इन क्षेत्रों की रिपोर्ट राष्ट्रपति को प्रस्तुत करते हैं। संविधान के विशेष उपबंधों के आधार पर असम, मेघालय और मिजोरम का प्रशासन किया जाता है। इन राज्यों के जिलों को स्वायत्तशासी जिलों में बाँटा गया है। प्रत्येक जिले में जिला परिषद् होती है जिसकी सदस्य संख्या अधिकतम 30 है। चार सदस्य मनोनीत और शेष का चुनाव किया जाता है। परिषद् को प्रशासनिक, न्यायिक और वैधानिक अधिकार दिये गये हैं।

2. कल्याणकारी एवं सलाहकार संस्थायें– केन्द्रीय गृह मंत्रालय जनजातियों के कल्याण हेतु योजनायें बनाता है और क्रियान्वित करता है। 1978 में इनके लिये एक पृथक् आयोग की स्थापना संविधान के तहत की गई। यह इनके लिये संवैधानिक सुरक्षा के प्रावधानों की जाँच करता है एवं उपाय सुझाता है।

3. संसदीय समितियाँ– केन्द्रीय सरकार ने अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के लिये संविधान में प्रदत्त सुरक्षा एवं कल्याण कार्यों की जाँच करने के लिये 1968, 1971 एवं 1973 में तीन संसदीय समितियाँ नियुक्त कीं। वर्तमान में एक स्थायी समिति का गठन किया है। इसका कार्यकाल एक वर्ष का होता है तथा 20 सदस्य लोकसभा से एवं 10 राज्यसभा से लिये जाते हैं।

4. राज्यों में कल्याण विभाग– राज्यों में भी अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों की देखरेख एवं कल्याण विभागों की स्थापना की गई है। मध्यप्रदेश, बिहार और उड़ीसा में इनके लिये अलग से मंत्रालय बनाये गये हैं।

5. विधानसभाओं में प्रतिनिधित्व– लोकसभा तथा राज्य विधान सभाओं में इनकी जनसंख्या के अनुपात में संवैधानिक व्यवस्था के अनुसार स्थान सुरक्षित किये गये हैं। यह व्यवस्था सन् 2000 तक बढ़ाई गई है। लोकसभा में 41 तथा विधानसभाओं में अनुसूचित जनजातियों के लिये स्थान आरक्षित हैं। ग्राम पंचायत तथा स्थानीय निकायों मे भी इनके लिये स्थान सुरक्षित हैं।

6. शासकीय सेवाओं में आरक्षण– अनुसूचित जनजातियों के लिये अखिल भारतीय सेवाओं में 7.5% स्थान आरक्षित हैं। प्रान्तों में भी इनकी जनसंख्या के अनुपात में शासकीय सेवाओं में स्थान सुरक्षित रखे हैं। 2250 रु. से कम वेतन पाने वालों के लिये पदोन्नति में

भी स्थान सुरक्षित हैं। इनका समुचित प्रतिनिधित्व हो सके इसलिये आयु सीमा, मानदण्ड आदि में छूट प्रदान की गई है।

7. कल्याण योजनायें– विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में इनके कल्याण हेतु विशेष प्रावधान किये गये। पहली पंचवर्षीय योजना में 30.4 करोड़, द्वितीय पंचवर्षीय योजना में 74.41 करोड़ रुपये, तृतीय पंचवर्षीय योजना में 100 40 करोड़ रुपये चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में 172.10 करोड़ रुपये, पाँचवीं पंचवर्षीय योजना में 288.88 करोड़ रुपये खर्च किये गये। छठी पंचवर्षीय योजना में 2030.30 करोड़ रुपये खर्च किये गये। ये रुपये प्रशिक्षण, आवास, स्वास्थ्य और शिक्षा जैसी उच्च प्राथमिकता वाली आवश्यकताओं पर खर्च किये गये। सातवीं पंचवर्षीय योजना में 10,500 करोड़ रुपयों का प्रावधान किया गया।

8. योजना कार्यक्रम– अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों को रोजगार प्रदान करने के लिये परीक्षा पूर्व प्रशिक्षण केन्द्र तथा शिक्षण व पथ-प्रदर्शन केन्द्र प्रारम्भ किये गये हैं। ऐसे 10 प्रशिक्षण केन्द्र हैं। इलाहाबाद और तिरुचिरापल्ली में तकनीकी सेवाओं की परीक्षा हेतु प्रशिक्षण केन्द्र खोले गये। छात्रों को पालकों की आय के आधार पर मेट्रिकोत्तर छात्रवृत्तियाँ प्रदान की जाती हैं। छात्रों को 1,000 एवं छात्राओं को 1,250 रुपये वार्षिक दिये जाते हैं। बालिकाओं के लिये छात्रावास खोले गये हैं।

जनजातियों से सम्बन्धित अनुसंधान के लिये 11 अनुसंधान केन्द्र खोले गये हैं। विदेशों में पढ़ने के लिये भी 1955 से छात्र-वृत्तियाँ दी जा रही हैं। जनजातीय लोगों का शोषण रोकने के लिये सहकारी समितियों की व्यापक रूप से स्थापना की गई है। जनजातीय विकास परियोजनाओं के लिये प्रारम्भ की जनजातीय उपयोजनाओं के अन्तर्गत लगभग 4 करोड़ जनसंख्या आती है। राज्य क्षेत्र में भी इनके कल्याण के लिये विभिन्न प्रकार की योजनायें शिक्षा, आर्थिक विकास, स्वास्थ्य, आवास आदि के लिये चलाई जा रही हैं।

इस प्रकार सरकारी स्तर पर जनजातियों के लिये विभिन्न प्रकार की योजनायें कार्यरत हैं।

प्रश्न–16. स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सरकार द्वारा जनजाति के लिये प्रारम्भ की गयी कल्याण योजनाओं का उल्लेख कीजिये।

अथवा

जनजातीय विकास योजनायें क्या हैं? भारत में जनजातीय विकास योजनाओं का मूल्यांकन कीजिये।

अथवा

आजादी के बाद जनजातीय परिदृश्य पर एक निबंध लिखिये।

अथवा

भारतीय जनजातियों की समस्याओं के समाधान हेतु सरकार द्वारा किये गये प्रयत्नों का उल्लेख (वर्णन) कीजिये।

अथवा

जनजाति का अर्थ बताते हुये जनजातीय विकास की दशा में किये जा रहे प्रमुख प्रयासों का वर्णन कीजिये।

अथवा

जनजातीय कल्याण के सन्दर्भ में विकास योजनाओं की विवेचना कीजिये।

अथवा

भारत में जनजातियों के लिये किये जा रहे विकास कार्यक्रमों का वर्णन कीजिये।

अथवा

'जनजातीय विकास की योजनायें' विषय पर एक निबन्ध लिखिये।

अथवा

देश के निर्माण की प्रक्रिया में जनजाति का योगदान दीजिये।

उत्तर– जनजातीय समस्याओं को हल करने के व्यापक प्रयास स्वतंत्रता के पश्चात् ही किये गये हैं। बुद्धिजीवियों, समाजसेवी संस्थाओं तथा सरकार द्वारा अनेक प्रयास किये हैं। यहाँ हम सरकार द्वारा किये गये विकास कार्यों का अवलोकन करेंगे–

(जनजाति के अर्थ एवं परिभाषा हेतु पूर्व प्रश्न का उत्तर देखें)

1. **प्रशासनिक व्यवस्था–** अनुच्छेद 224 द्वारा मध्यप्रदेश, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश, उड़ीसा, बिहार के कुछ क्षेत्र 'अनुसूचित' घोषित किये हैं। इन राज्यों के राज्यपाल प्रतिवर्ष इन क्षेत्रों की रिपोर्ट राष्ट्रपति को प्रस्तुत करते हैं। संविधान के विशेष उपबंधों के आधार पर असम, मेघालय और मिजोरम का प्रशासन किया जाता है। इन राज्यों के जिलों को स्वायत्तशासी जिलों में बाँटा गया है। प्रत्येक जिले में जिला परिषद होती है जिसकी सदस्य संख्या अधिकतम 30 है। चार सदस्य मनोनीत और शेष का चुनाव किया जाता है। परिषद् को प्रशासनिक, न्यायिक और वैधानिक अधिकार दिये गये हैं।
2. **कल्याणकारी एवं सलाहकार संस्थायें–** केन्द्रीय गृह मंत्रालय जनजातियों के कल्याण हेतु योजनायें बनाता है और क्रियान्वित करता है। 1978 में इनके लिये एक पृथक् आयोग की स्थापना संविधान के तहत की गई। यह इनके लिये संवैधानिक सुरक्षा के प्रावधानों की जाँच करता है एवं उपाय सुझाता है।
3. **संसदीय समितियाँ–** केन्द्रीय सरकार ने अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के लिये संविधान में प्रदत्त सुरक्षा एवं कल्याण कार्यों की जाँच करने के लिये 1968, 1971 एवं 1973 में तीन संसदीय समितियाँ नियुक्त कीं। वर्तमान में एक स्थायी समिति का गठन किया है। इसका कार्यकाल एक वर्ष का होता है तथा 20 सदस्य लोकसभा से एवं 10 राज्यसभा से लिये जाते हैं।
4. **राज्यों में कल्याण विभाग–** राज्यों में भी अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों की देखरेख एवं कल्याण विभागों की स्थापना की गई है। मध्यप्रदेश, बिहार और उड़ीसा में इनके लिये अलग से मंत्रालय बनाये गये हैं।
5. **विधानसभाओं में प्रतिनिधित्व–** लोकसभा तथा राज्य विधान सभाओं में इनकी जनसंख्या के अनुपात में संवैधानिक व्यवस्था के अनुसार स्थान सुरक्षित किये गये है। यह व्यवस्था सन् 2000 तक बढ़ाई गई है। लोकसभा में 41 तथा विधानसभाओं में अनुसूचित जनजातियों के लिये स्थान आरक्षित हैं। ग्राम पंचायत तथा स्थानीय निकायों में भी इनके लिये स्थान सुरक्षित है।
6. **शासकीय सेवाओं में आरक्षण–** अनुसूचित जनजातियों के लिये अखिल भारतीय सेवाओं में 7.5% स्थान आरक्षित हैं। प्रान्तों में भी इनकी जनसंख्या के अनुपात में शासकीय सेवाओं में स्थान सुरक्षित रखे हैं। 2250 रु. से कम वेतन पाने वालों

के लिये पदोन्नति में भी स्थान सुरक्षित हैं। इनका समुचित प्रतिनिधित्व हो सके इसलिये आयु सीमा, मानदण्ड आदि में छूट प्रदान की गई है।

7. **कल्याण योजनायें–** विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में इनके कल्याण हेतु विशेष प्रावधान किये गये। पहली पंचवर्षीय योजना में 30.4 करोड़, द्वितीय पंचवर्षीय योजना में 74.41 करोड़ रुपये, तृतीय पंचवर्षीय योजना में 100.40 करोड़ रुपये चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में 172.10 करोड़ रुपये, पाँचवीं पंचवर्षीय योजना में 288.88 करोड़ रुपये खर्च किये गये। छठी पंचवर्षीय योजना में 2030.30 करोड़ रुपये खर्च किये गये। ये रुपये प्रशिक्षण, आवास, स्वास्थ्य और शिक्षा जैसी उच्च प्राथमिकता वाली आवश्यकताओं पर खर्च किये गये। सातवीं पंचवर्षीय योजना में 10,500 करोड़ रुपयों का प्रावधान किया गया। 1993-94 के बजट में इनसे सम्बन्धित संगठित योजना के लिये 247 करोड़ रुपये विशेष केन्द्रीय सहायता के तौर पर रखे गये हैं।

8. **योजना कार्यक्रम–** अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों को रोजगार प्रदान करने के लिये परीक्षा पूर्व प्रशिक्षण केन्द्र तथा शिक्षण व पथ-प्रदर्शन केन्द्र प्रारम्भ किये गये हैं। ऐसे 10 प्रशिक्षण केन्द्र हैं। इलाहाबाद और तिरुचिरापल्ली में तकनीकी सेवाओं की परीक्षा हेतु प्रशिक्षण केन्द्र खोले गये। छात्रों को पालकों की आय के आधार पर मेट्रिकोत्तर छात्रवृत्तियाँ प्रदान की जाती हैं। छात्रों को 1,000 एवं छात्राओं को 1,250 रुपये वार्षिक दिये जाते हैं। बालिकाओं के लिये छात्रावास खोले गये हैं।

जनजातियों से सम्बन्धित अनुसंधान के लिये 11 अनुसंधान केन्द्र खोले गये हैं। विदेशों में पढ़ने के लिये भी 1955 से छात्र-वृत्तियाँ दी जा रही हैं। जनजातीय लोगों का शोषण रोकने के लिये सहकारी समितियों की व्यापक रूप से स्थापना की गई है। जनजातीय विकास परियोजनाओं के लिये प्रारम्भ की जनजातीय उपयोजनाओं के अन्तर्गत लगभग 4 करोड़ जनसंख्या आती है। राज्य क्षेत्र में भी इनके कल्याण के लिये विभिन्न प्रकार की योजनायें शिक्षा, आर्थिक विकास, स्वास्थ्य, आवास आदि के लिये चलाई जा रही है।

इस प्रकार सरकारी स्तर पर जनजातियों के लिये विभिन्न प्रकार की योजनायें कार्यरत् हैं।

प्रश्न–17. जनजातियों को सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक सुरक्षा देने के लिये संविधान में क्या व्यवस्थायें की गई हैं ?

अथवा

भारत में जनजातीय कल्याण सम्बन्धी सवैधानिक प्रावधानों की प्रासंगिता का मूल्यांकन कीजिये।

अथवा

जनजातीय सवैधानिक व्यवस्थाओं की संक्षेप में विवेचना कीजिये।

अथवा

जनजातीयों के सम्बन्ध में प्रमुख सवैधानिक प्रावधानों की व्याख्या कीजिये।

अथवा

'जनजातियाँ और संवैधानिक व्यवस्थायें' इस शीर्षक पर एक निबन्ध लिखिये।

उत्तर– स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व भारत में जनजातियाँ उपेक्षित जीवन जी रही थीं। अंग्रेजी शासन ने दोषपूर्ण नीतियों का अनुसरण किया जिससे एक तरफ इनके परम्परागत आजीविका

के तरीके खत्म हुये और दूसरी ओर इनको किसी भी प्रकार की सुरक्षा शासन के द्वारा प्रदान नहीं की गई।

स्वतंत्रता के पश्चात् एक अखंड भारत की कल्पना की गई जिसमें सभी व्यक्तियों को समान अवसर प्रदान करने का प्रयास किया गया। अतः संविधान निर्माताओं ने जनजातियों की समस्याओं को सुलझाने के लिये एवं शेष भारत के साथ उनका एकीकरण सम्भव हो इस हेतु संविधान में इनकी सुरक्षा हेतु अनेक प्रावधान किये गये हैं।

अनुसूचित जनजातियों के लिये संवैधानिक– भारतीय संविधान में अनुसूचित जनजातियों तथा अन्य कमजोर वर्गों के लोगों को सुरक्षा प्रदान करने के लिये कुछ व्यवस्थायें की गई हैं। संविधान के अनुच्छेद 341 एवं 342 में राष्ट्रपति द्वारा जारी आदेश में अनुसूचित जातियों का विवरण दिया गया है।

संविधान का अनुच्छेद क्रमांक 15 भारत के प्रत्येक नागरिक को समानता का अधिकार प्रदान करता है। इस अनुच्छेद के अनुसार, किसी भी व्यक्ति के साथ धर्म, जाति, प्रजाति, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया जायेगा। इस प्रकार यह अनुच्छेद जनजातीय लोगों को अन्य भारतीयों के समान स्थिति प्रदान करता है। इनके लिये विशेष प्रावधान निम्नानुसार किये हैं–

1. लोकसभा तथा विधानसभाओं में जनजातियों के प्रतिनिधित्व को सुरक्षित करने के लिये जनसंख्या के आधार पर 20 जनवरी 2,000 तक के लिये सीटें आरक्षित की गई हैं।
2. संविधान के अनुच्छेद 16(4) तथा 335 के अनुसार सार्वजनिक सेवाओं तथा सरकारी नौकरियों में जनजातीय लोगों के लिये स्थान सुरक्षित रखने का अधिकार राज्य को दिया गया है। अखिल भारतीय सेवाओं में 5 प्रतिशत स्थान अनुसूचित जनजातियों के लिये आरक्षित हैं।
3. संविधान के दसवें भाग तथा पांचवीं एवं छठी अनुसूची में जनजातीय क्षेत्रों के सम्बन्ध में विशेष व्यवस्थायें की गई हैं।
4. अनुच्छेद 244 के अनुसार आसाम की जनजातियों के लिये जिला और प्रादेशिक परिषद् स्थापित करने का प्रावधान किया गया है।
5. संविधान के भाग 6 के अनुच्छेद 164 के द्वारा आसाम के अतिरिक्त बिहार, मध्यप्रदेश और उड़ीसा में जनजातीय कल्याण मंत्रालय स्थापित करने का प्रावधान है।
6. संविधान के भाग 4 के अनुच्छेद 46 में जनजातियों की शिक्षा की उन्नति और आर्थिक हितों की सुरक्षा की ओर विशेष ध्यान देना राज्य का कर्तव्य माना गया है।
7. संविधान के अनुच्छेद 338 के अनुसार राष्ट्रपति को अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिये विशेष अधिकार नियुक्त करने का अधिकार दिया गया है जो उन्हें इनकी स्थिति को उन्नत करने सम्बन्धी सुझाव दे।
8. दुकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों तथा सार्वजनिक मनोरंजन के स्थलों में प्रवेश तथा पूर्ण या आंशिक रूप में राज्यनिधि से पोषित अथवा आम जनता के लिये कुंओं, तालाबों, सड़कों तथा सार्वजनिक स्थलों के उपयोग के बारे में किसी

भी प्रकार के प्रतिबंध, शर्त या अयोग्यता को अनुच्छेद 15(2) द्वारा समाप्त कर दिया गया है।

9. अनुच्छेद क्रमांक 19 (5) द्वारा अनुसूचित जनजातियों के हितों की दृष्टि से सभी नागरिकों को स्वतंत्रतापूर्वक आने-जाने, बसने तथा सम्पत्ति अर्जित करने के आम अधिकारों में कटौती करने की कानूनी व्यवस्था की गई है।
10. अनुच्छेद क्रमांक 29(2) के द्वारा राज्य द्वारा चलाई जा रही या राज्य निधि से सहायता प्राप्त करने वाली किसी भी शिक्षण संस्था में प्रवेश पर किसी भी तरह के प्रतिबंध को समाप्त कर दिया है।
11. अनुच्छेद 224 और पांचवीं तथा छठी अनुसूची के द्वारा अनुसूचित जनजातीय इलाकों के प्रशासन और नियंत्रण के लिये विशेष व्यवस्था का प्रावधान किया गया है।
12. अनुच्छेद 25 शेष भारत के समान अनुसूचित जातियों को अपनी धार्मिक आस्थाओं का पालन करने की स्वतंत्रता प्रदान करता है।
13. अनुच्छेद 26 मनुष्यों के व्यापार एवं जबरन मजदूरी पर रोक लगाना है।
14. अनुच्छेद 29 अल्पसंख्यकों के सांस्कृतिक तथा शैक्षणिक हितों को सुरक्षा पहुँचाना है।

इसके अतिरिक्त राष्ट्रपति के द्वारा समय-समय पर जनजातियों के संदर्भ में संवैधानिक आदेश जारी किये गये हैं जो इस प्रकार हैं-

1. संविधान (अनुसूचित जनजातियाँ) आदेश 1950
2. संविधान (अनुसूचित जनजातियाँ- राज्य अंश) आदेश 1951
3. संविधान (अंडमान और निकोबार द्वीप समूह) अनुसूचित जनजाति आदेश 1959
4. संविधान (दादर और नागर हवेली) अनुसूचित जनजाति आदेश 1962
5. संविधान (गोवा, दमन और द्वीप) अनुसूचित जनजातियाँ आदेश संविधान (नागालैण्ड) अनुसूचित जनजातियाँ आदेश 1970.

मूल्यांकन- इस प्रकार संवैधानिक आधार पर जनजातियों को विशेष प्रकार की सुविधायें देकर उन्हें देश के अन्य लोगों के साथ खड़ा करने का प्रयास किया गया है। परन्तु इन सबका वास्तविक रूप में उन्हें लाभ नहीं मिल पाता है। इन सुरक्षात्मक उपायों का क्रियान्वयन ईमानदारी से नहीं हुआ है। इसलिये ये जनजातियाँ आज भी अपने आपको घोर उपेक्षित मानती हैं। ठेकेदारों, धनवानों तथा सरकारी अधिकारी एवं कर्मचारियों द्वारा इनका आर्थिक एवं शारीरिक शोषण आज भी जारी है। केवल कुछ परिवारों ने इनका लाभ उठाकर सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक क्षेत्र में अवश्य सफलतायें अर्जित की हैं, लेकिन इनकी विशाल जनसंख्या के अनुपात एवं प्रदान की गई विशेष सुविधाओं की तुलना में यह नगण्य ही कही जा सकती हैं।

प्रश्न-18. मध्यप्रदेश की जनजातीय समस्याओं के विषय में क्या किया जा रहा है? विवेचना कीजिये।

अथवा

मध्यप्रदेश में जनजातीय कल्याण हेतु चलाये जा रहे कार्यक्रमों का मूल्यांकन कीजिये।

अथवा

मध्य प्रदेश में जनजातीय योजनाओं के स्वरूपों एवं कार्य-क्षेत्र का वर्णन कीजिये।

अथवा

मध्यप्रदेश में जनजातीय विकास कार्यक्रम पर एक निबन्ध लिखिये।

अथवा

मध्यप्रदेश में जनजातियों के सम्बन्ध में वर्तमान नीतियों पर प्रकाश डालिये।

अथवा

म.प्र. में जनजातियों के संरक्षण एवं कल्याण के लिये विभिन्न प्रावधानों, नीतियों एवं विकास कार्यक्रमों का वर्णन कीजिये।

उत्तर- मध्यप्रदेश जनजातीय क्षेत्र है। भारत की जनजातीय जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग मध्यप्रदेश में निवास करता है। संवैधानिक प्रावधानों तथा विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं की देखरेख एवं मार्गदर्शन के लिये मध्यप्रदेश में एक पृथक मंत्रालय 'आदिम जाति कल्याण मंत्रालय' है। मध्यप्रदेश में निम्नानुसार विभिन्न कल्याण योजनायें आदिवासियों के लिये चलाई जा रही हैं-

(1) शिक्षा सुविधायें- आदिवासी विकास-खण्डों में शालेय शिक्षा प्रदान करने हेतु आदिमजाति कल्याण विभाग विभिन्न सुविधायें प्रदान करता है। आदिवासी क्षेत्रों में संचालित शालेय शिक्षा विभाग का पृथक संचालनालय है।

(i) छात्रावास में रहने वाले छात्र-छात्राओं को निःशुल्क आवास चिकित्सा, भोजन के अतिरिक्त नकद छात्रवृत्ति भी प्रदान की जाती है। यह छात्रवृत्ति माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक स्तर पर प्रदान की जाती है। छात्रों की तुलना में छात्राओं को डेढ़ गुना अधिक की छात्रवृत्ति प्रोत्साहन स्वरूप दी जाती है।

~~जनजातीय कल्याण योजनायें~~
(1) शिक्षा सुविधायें
(2) आर्थिक उन्नति हेतु सहायता
(3) आहार एवं पोषण कार्यक्रम
(4) स्वास्थ्य सेवायें
(5) कानूनी सहायता
(6) ऋण निवारण

(ii) इसके अलावा शैक्षणिक शुल्क, परीक्षा शुल्क एवं अन्य शालेय भुगतान आदिम कल्याण विभाग द्वारा ही किया जाता है।

(iii) प्राथमिक स्तर पर शिक्षा ग्रहण कर रहे जनजातीय छात्रों को पुस्तकें निःशुल्क प्रदान की जाती हैं। जबकि महाविद्यालयीन छात्रों को बुक-बैंक योजना के माध्यम से पुस्तकें प्रदान की जाती हैं।

(iv) जनजातीय छात्र-छात्राओं को औद्योगिक प्रशिक्षण प्रदान करने हेतु आदिम जाति कल्याण संचालनालय पृथक से औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थायें संचालित करता है। इनमें टर्नर, फिटर, मोटर मेकेनिक, बैल्डिंग, ड्राफ्ट्स मेन, इलैक्ट्रीशियन, स्टेनो-टायपिंग आदि का प्रशिक्षण दिया जाता है।

(v) शिक्षण संस्थाओं को सहायता- अशासकीय शिक्षण संस्थाओं में अध्ययनरत जनजातीय छात्र-छात्राओं के शिक्षण शुल्क की क्षतिपूर्ति आदिम जाति कल्याण विभाग द्वारा की जाती है।

(2) आर्थिक उन्नति हेतु सहायता- कृषि के विकास हेतु सिंचाई, कूप खनन, पम्प खरीदना आदि के लिये अनुदान प्रदान किया जाता है। इसके साथ ही अन्य कृषि उपकरण

तथा बीज आदि के लिये भी सरकार अनुदान प्रदान कर रही है। 'स्व' रोजगार हेतु भी आवश्यक उपकरणों को क्रय करने के लिये अनुदान प्रदान किया जाता है। इसके अलावा अंन्त्यावसायी रोजगार 'योजना के अन्तर्गत स्वरोजगार हेतु ऑटो, टैक्सी, ट्रक, टेम्पो, लोडिंग वाहन आदि के क्रय हेतु ऋण सुविधा उपलब्ध करायी जाती है।'

(3) **आहार एवं पोषण कार्यक्रम**– इस योजना के द्वारा विद्यालयों में अध्ययनरत् 6 से 14 वर्ष की आयु के जनजातीय छात्रों को मध्यान्ह भोजन प्रदान किया जाता है। 6 वर्ष से कम आयु के बच्चों एवं गर्भवती स्त्रियों एवं स्तनपान कराने वाली माताओं को विशेष आहार एवं पोषण सामग्री सरकार द्वारा प्रदान की जाती है।

(4) **स्वास्थ्य सेवायें**– वसुंधरा, आयुष्मति आदि योजनाओं द्वारा मध्यप्रदेश सरकार महिलाओं को चिकित्सा एवं प्रसूति सम्बन्धी सुविधायें प्रदान करती है। इन योजनाओं के द्वारा मरीज के साथ-साथ मरीज की देखभाल करने वाले व्यक्ति के ठहरने एवं खाने-पीने की व्यवस्था भी की जाती है। आदिवासी महिलाओं को दाई का प्रशिक्षण देकर घर पर ही प्रसूति करने के लिये शासकीय व्यय पर उन्हें नियुक्त किया जाता है। इसके अलावा प्राथमिक चिकित्सा केन्द्रों के माध्यम से पर्याप्त चिकित्सा-सुविधायें, प्रदान की जाती हैं।

(5) **कानूनी सहायता**– आदिम जनजाति के लोगों को सरकार द्वारा मुफ्त कानूनी सहायता प्रदान की जाती है। इसके लिये आदिम-जाति कल्याण विभाग ने अधिवक्ताओं की सूची तैयार की है। वकालत प्रारंभ करने वाले आदिवासी व्यक्ति को आरंभिक 12 महिनों तक प्रतिमास 2,000 की राशि प्रदान की जाती है।

(6) **ऋण निवारण**– जमींदार एवं साहूकारों के चंगुल से आदिवासियों को मुक्त करने के लिये **'आदिम-जाति ऋण निवारण सहायता अधिनियम, 1962'** पारित किया। इस अधिनियम के तहत अनुसूचित जनजातीय क्षेत्रों में ऋण निवारण न्यायालय खोले गये। 1967 में इसे पुनरीक्षित किया जाकर **'आदिम-जाति ऋण निवारण अधिनियम'** लागू किया गया। इसके तहत पृथक ऋण निवारण न्यायालय स्थापित किये गये। परन्तु इस अधिनियम के अन्तर्गत केवल 1967 के पूर्व के ही ऋण प्रकरणों का निपटारा किया जा रहा है। जबकि ऋणग्रस्तता की समस्या आदिवासियों के लिये एक शाश्वत समस्या है।

मूल्यांकन– इन सभी सुविधाओं के प्रदान किये जाने के बावजूद आदिम जनजातीय लोगों में व्यापक परिवर्तन नहीं हुये हैं। शिक्षा का प्रतिशत अपेक्षानुरूप बढ़ा नहीं है। गरीबी तथा ऋण-ग्रस्तता की समस्या दिनों-दिन विकराल स्वरूप धारण करती चली जा रही है। चिकित्सा सुविधायें भी समय पर एवं पर्याप्त मात्रा में नहीं मिल पा रही हैं। इन्हें सरकार द्वारा प्रदत्त सूखे मेवे, दूध-पावडर, घी, मक्खन आदि केवल कागजों पर ही इन्हें प्रदान किये जाते हैं। केवल दलिया तथा कम्बल ही इन्हें प्राप्त हो जाते हैं। लालफीताशाही और भ्रष्टाचार के कारण इन्हें प्रदत्त सुविधायें न तो इन्हें समय पर प्राप्त होती हैं और न ही पर्याप्त मात्रा में। बिना रिश्वत दिये छात्रवृत्ति, ऋण आदि का भुगतान नहीं होता।

लघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर-

प्रश्न–(1) अनुसूचित जनजातियों की तीन आर्थिक समस्यायें लिखिये।

अथवा

जनजातियों की प्रमुख समस्यायें क्या हैं?

उत्तर– आर्थिक समस्यायें– जनजातियों की प्रमुख आर्थिक समस्यायें निम्नानुसार हैं-

(i) **स्थानान्तरित खेती की समस्या**– कृषि करने वाली जनजातियाँ स्थानान्तरित खेती करती हैं। वे जंगल को आग लगाकर उस भूमि पर खेती करते हैं। फिर उसे छोड़कर वे दूसरी जगह इसी प्रकार खेती करते हैं। इससे भूमि का कटाव होता है और मूल्यवान वनोपज नष्ट हो जाती है। इससे इन्हें आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

(ii) **नई भूमि–व्यवस्था**– नवीन भूमि सम्बन्धी कानूनों के कारण उनकी स्थानान्तरित खेती को समाप्त कर दिया। वे ऐसे क्षेत्रों में निवास करते हैं जहाँ कृषि-भूमि का अभाव है। सरकार ने जहाँ इनको कृषि हेतु पट्टे वितरित किये वहीं महाजनों और सेठ-साहूकारों ने इनकी अज्ञानता एवं आर्थिक परिस्थिति का लाभ उठाकर वह जमीनें हड़प लीं। इससे बाध्य होकर इन्हें श्रमिकों के रूप में ही कार्य करना पड़ रहा है।

(iii) **ऋणग्रस्तता की समस्या**– जनजातियों में वस्तु-विनिमय की प्रथा प्रचलित थी परन्तु अब नई आर्थिक व्यवस्था लागू हुई जिसको ये समझ नहीं सके। उनकी अज्ञानता एवं विवशता का लाभ उठाकर व्यापारियों, सेठ-साहूकारों तथा मादक-द्रव्य बेचने वालों ने इन्हें खूब ठगा। एक बार ऋण लेने पर वे हमेशा कर्ज में डूबे रहे और ब्याज पर ब्याज चुकाते रहे।

प्रश्न–(2) अनुसूचित जनजातियों के लिये संविधान में की गई आरक्षण की व्यवस्था को समझाइये।

उत्तर– अनुसूचित जनजातियों के विकास के लिये संविधान में आरक्षण की व्यवस्था की गई है। उनके शैक्षणिक, राजनैतिक और आर्थिक विकास के लिये शिक्षण संस्थानों, प्रतियोगी परीक्षाओं, विधान सभा, लोकसभा, ग्राम पंचायतों, नगर पालिकाओं तथा शासकीय सेवाओं में आरक्षण की व्यवस्था की गई है। अनुच्छेद 335 के अनुसार उन्हें शासकीय सेवाओं में 7.5 प्रतिशत आरक्षण का लाभ दिया गया है। साथ ही आयु सीमा, अर्हता मानदण्ड तथा तकनीकी सम्बन्धी स्तरों में भी छूट दी गई है। संविधान के अनुच्छेद 340 के अनुसार सरकारी शिक्षण संस्थानों में उनके लिये स्थान आरक्षित किये जाने का प्रावधान है। केन्द्र सरकार के साथ-साथ राज्य सरकारों द्वारा भी अनुसूचित जनजातियो को शासकीय सेवाओं में भर्ती करने तथा पदोन्नति देने के लिये विभिन्न उपबन्धों की व्यवस्था की गई है।

प्रश्न–(3) मध्य प्रदेश की जनजातीय शैक्षणिक योजनायें समझाइये।

उत्तर– मध्य प्रदेश के जनजातियों के शैक्षणिक विकास के लिये राज्य सरकार द्वारा अनेक योजनाओं का संचालन किया जा रहा है जिनमें से कुछ प्रमुख योजनाएं निम्नलिखित हैं -

(1) शालेय शिक्षण योजना– प्रदेश के 89 आदिवासी विकासखण्डों में 9,210 कनिष्ठ माध्यमिक, 11,670 प्राथमिक, 3,840 माध्यमिक, 340 हाईस्कूल, 146 कन्या माध्यमिक शालाओं 1,146 पूर्व प्राथमिक छात्रावास, 82 मैट्रिकोत्तर छात्रावास और 614 आश्रम शालाओं के माध्यम से जनजातीय समाज को शिक्षा देने का प्रयास किया जा रहा है।

(2) **राज्य छात्रवृत्ति योजना–** इस योजना के अन्तर्गत शासन कक्षा 6 से 10वीं तक के अनुसूचित जनजाति के छात्रों को छात्रवृत्ति प्रदान करता है, जो कक्षा 6 से 8 तक 200 रु. प्रति छात्र और 300 रु. प्रति छात्रा तथा कक्षा 9 से 10 तक 300 रु. प्रति छात्र और 400 रु. प्रति छात्रा के मान से तीन किश्तों में प्रदान की जाती है।

(3) **मध्यान्ह भोजन योजना–** इस योजना के अन्तर्गत प्रदेश के जनजातीय विद्यार्थियों को भी शालाओं में दोपहर का भोजन ग्राम पंचायतों के माध्यम से वितरित किया जा रहा है।

(4) इसके अतिरिक्त कन्या शिक्षा प्रोत्साहन छात्रवृत्ति, निशुल्क पाठ्य-पुस्तक वितरण योजना, प्रशिक्षण कार्यक्रम आदि के द्वारा भी जनजातीय छात्रों को शैक्षणिक सुविधायें प्रदान की जा रही हैं।

प्रश्न–(4) झारखण्ड आन्दोलन को समझाइये।

उत्तर– झारखण्ड आन्दोलन– इस आन्दोलन का आरम्भ संथाल परगना क्षेत्र की संथाल जनजाति द्वारा सन् 1920 से किया गया। इसके पहले संथाल सन् 1855 में किये गये विद्रोह से यह समझ चुके थे कि जब तक जनजातीय स्तर पर उनका कोई पृथक संगठन नहीं होगा तब तक वे अपने अधिकारों की लड़ाई सही ढंग से नहीं लड़ सकेंगे। इस आधार पर सन् 1920 में संथालों द्वारा छोटा नागपुर उन्नति समाज की स्थापना की। सन् 1936 में इगनैरा बैंक नाम के एक संथाल युवक ने आदिवासी महासभा की स्थापना की जिसका उद्देश्य जमीदारों से पीड़ित सभी आदिवासी तथा गैर आदिवासी लोगों को संगठित करके संथालों की शक्ति को बढ़ाना था। परम्परागत रूप से संथाल परगना एक अलग राज्य था जिसमें बाहरी समूह उनका कोई शोषण नहीं कर सकता था। इसाई मिशनरियों के प्रभाव से इस क्षेत्र में साक्षरता बढ़ने लगी तब संथालों ने आदिवासी महासभा के रूप में संगठित होकर अपने क्षेत्र में अंग्रेजी राज्य का विरोध शुरू कर दिया। सन् 1939 में जब इस संगठन का नेतृत्व जयवाल सिंह के हाथों में आया तो एक नये झारखण्ड मुक्ति मोर्चा की स्थापना की गयी। सन् 1951 में झारखण्ड मुक्ति मोर्चा ही झारखण्ड पार्टी के रूप में बदल गया। आरम्भ में यह एक गैर राजनैतिक पार्टी थी जिसका उद्देश्य आदिवासी क्षेत्र में सरकारी हस्तक्षेप को रोकना था। जैसे-जैसे झारखण्ड आन्दोलन की शक्ति बढ़ती गयी इसके नेताओं द्वारा बिहार के 6 जिलों बंगाल के 9 जिलों तथा मध्य प्रदेश और उड़ीसा के कुछ अन्य जनजातीय जिलों को मिलाकर एक पृथक झारखण्ड राज्य की मांग करना आरम्भ कर दी गई एवं आम चुनाव में ही इस पार्टी को बिहार की 32 विधान सभा सीटों पर विजय मिल जाने से इसकी शक्ति बढ़ने लगी। अनेक मतभेदों के कारण सन् 1964 में हो, मुन्डा तथा संथाल नेताओं ने अपनी अलग-अलग झारखण्ड पार्टियां बना लीं। सन् 1973 में झारखण्ड मुक्ति मोर्चा के नाम से पुनः एक संगठन बना जिसके द्वारा जमींदारों और अधिकारियों का हिंसक विरोध किया जाने लगा। झारखण्ड आन्दोलन की शक्ति को बढ़ाने के लिये जमशेदपुर, राँची, सिंहभूमि तथा पालामऊ में अनेक उपद्रवी संथालों ने लगान, ऋण की किश्तों और करों का भुगतान करना बन्द कर दिया। सरकारी सम्पत्तियों को भी भारी नुकसान पहुँचाया गया। जिसके फलस्वरूप आन्दोलन का राजनैतिक आधार कुछ कमजोर पड़ गया था। लेकिन बाद में इस आन्दोलन की सफलता के फलस्वरूप बिहार का विभाजन होकर झारखण्ड नाम से एक पृथक राज्य बन गया है जिसकी राजधानी राँची है।

प्रश्न–(5) जनजातीय पृथक्करण को समझाइये।

उत्तर– पृथक्करण एक सामाजिक प्रक्रिया है। पृथक्करण अर्थात् अपने समूह से पृथक् हो जाना। समाज या समूह में कभी-कभी कुछ ऐसी परिस्थितियाँ निर्मित हो जाती हैं कि व्यक्ति स्वयं को समूह या समाज से पृथक् कर लेता है। व्यक्ति या समूह के पृथकत्व में जीवन-यापन करने की शैली पृथक्करण कहलाती है।

पृथक्करण एक सांस्कृतिक प्रक्रिया है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें सहिष्णुता और सामंजस्य का अभाव होता है। व्यक्ति और समूह का अपनी रूचियों और दृष्टिकोणों में असमानता के कारण पृथक् होना पृथक्करण कहलाता है ।

सामाजिक तथा आर्थिक दृष्टि से जनजातियाँ विकास की विभिन्न अवस्थाओं में स्थित हैं। परिवर्तन की प्रक्रिया ने आज इन्हें एक नवीन धरातल पर लाकर खड़ा कर दिया है। नवीन परिस्थितियाँ यद्यपि जनजातियों को विकास की ओर ले जा रही हैं, परन्तु सम्पर्क के दौरान कुछ जनजातीय समूह हीनतावश अपनी सांस्कृतिक विशेषताओं का त्याग भी करते जा रहे हैं। इसी क्रम में आदिवासी जीवन और संस्कृति विघटन के द्वार पर पहुँच गई है। सभ्य समाजों के बढ़ते सम्पर्कों या जनजातीय क्षेत्रों में अतिक्रमण के कारण जनजातीय समाज अपनी अस्मिता की रक्षा के लिए पृथक्ता को अपनाकर दुर्गम-स्थलों में प्रवेश कर गया। वास्तव में ब्रिटिश काल में ईसाई मिशनरियों, ब्रिटिश शासन के अधिनियमों आदि से परेशान होकर धीरे-धीरे जनजातीय समुदाय सभ्यता से पृथक् होता चला गया और एकाकी जीवन जीने लगा। इसलिए स्वतंत्रता संग्राम में देश के सारे जनजातीय समाज का सहभाग नहीं था। विकास को अपनी संस्कृति के लिए विनाश मानते हुए जनजातियों का सभ्य समाज से पलायन या पृथक्करण होने के कारण ही आज भी जनजातियाँ विकास के साथ सामंजस्य स्थापित नहीं कर पा रही हैं।

ब्रिटिश काल के पूर्व से ही सभ्यता और सभ्य समाज से पृथक् होकर बहुत से जनजातीय समूह एकाकी जीवन-यापन करने लगे और आज इन्हें आदिम समूह के नाम से सम्बोधित किया जाता है। मध्य प्रदेश की बैगा, भारिया, सहरिया, छत्तीसगढ़ की पहाड़ी कोरबा, माड़िया, मुण्डिया, अण्डमान-निकोबार द्वीप समूह की सभी जनजातियाँ पृथक्कीकरण के कारण ही आज भी पिछड़ी हुई जनजातियों में गिनी जाती हैं जो सभ्य समाज से पृथक् हो पृथक्कीकरण जीवन का यापन कर रही हैं।

प्रश्न–(6) जनजातियों में ऋणग्रस्तता के तीन कारण लिखिये।

उत्तर– जनजातियों में ऋणग्रस्तता के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं–

(1) आर्थिक कारण– धन का अभाव ऋणग्रस्तता का सर्वप्रमुख कारण है शासन द्वारा वन-संरक्षण के लिये बनाये गये कानूनों से इनकी आय का मूल स्त्रोत समाप्त हो गया है। कृषि में भी पुरानी तकनीक के कारण कम उत्पादन होने से इनके पास धन का अभाव रहता है। जिसे पूरा करने के लिये इन्हें ऋण लेना पड़ता है।

(2) सामाजिक कारण– जनजातीय सामाजिक व्यवस्था में दायित्व और सामाजिक मूल्यों का पालन कठोरता के साथ किया जाता है। विवाह, जन्म, मृत्यु आदि के अवसर पर सामाजिक भोज के लिये इन्हें ऋण लेना पड़ता है। जाति पंचायत द्वारा लगाये जाने वाले जुर्माने की राशि भी कई बार इन्हें ऋण लेने पर विवश करती है।

(3) मनोवैज्ञानिक कारण– पीढ़ी-दर-पीढ़ी ऋणग्रस्त रहने से जनजातीय समाज की मानसिक स्थिति भी इस प्रकार की हो जाती है कि बिना ऋण लिये वे कोई काम करते ही नहीं हैं जिससे वे हमेशा ऋणग्रस्त बने रहते हैं।

प्रश्न–(7) जनजातीय आंदोलन के कारण बताइये।

उत्तर–

1. **भूमि अधिकारों से वंचित करना–** जंगलों की भूमि पर जनजातियों का आधिपत्य था परन्तु अंग्रेजों के शासन के समय से ही जंगलों पर सरकार का आधिपत्य हो गया। फलस्वरूप उनकी आर्थिक व्यवस्था तहस-नहस हुई।
2. **भूमि पर गैर आदिवासियों का आधिपत्य–** जनजातियों के पास जो भूमि थी वह सेठ, साहूकार, महाजनों ने षड्यंत्रों के तहत हथिया ली।
3. **शोषण–** जनजातीय लोगों के भोलेपन तथा अज्ञानता का लाभ उठाकर उनका खूब आर्थिक एवं शारीरिक शोषण बाहरी लोगों के द्वारा किया गया।
4. **अत्यधिक करारोपण–** वनोपजों पर शासन ने इतने अधिक कर लाद दिये कि इनकी आर्थिक स्थिति चरमरा गई और ये श्रम करने पर मजबूर हुये।
5. **धर्म–प्रचारकों द्वारा धोखाधड़ी–** ईसाई धर्म-प्रचारकों ने इन्हें विविध प्रकार के लालच देकर इनका धर्म परिवर्तन किया। फलस्वरूप इनके समक्ष विविध समस्यायें उठ खड़ी हुई।
6. **ब्रिटिश सरकार की स्वार्थी नीति–** ब्रिटिश सरकार की अहस्तक्षेप की नीति के कारण उन्होंने जनजातीय समस्याओं पर कोई ध्यान नहीं दिया और इनका खूब शोषण किया।
7. **पर–संस्कृति ग्रहण की प्रतिक्रिया–** ईसाईकरण के कारण इनके समूह में ईसाई और गैर ईसाई लोगों में संघर्ष उत्पन्न हुये।
8. **हिन्दू समाज के साथ संस्कृतिकरण के लिये आन्दोलन–** भील तथा गोंड जनजातियों पर हिन्दू धर्म का प्रभाव पड़ा है। हिन्दू समाज के साथ संस्कृतिकरण की प्रक्रिया तेज हुई है।
9. **राजनीतिक स्वार्थ–** जनजातीय क्षेत्रों के राजाओं ने अपने राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति के लिये इनका दुरुपयोग किया।
10. **स्वाधीनता आन्दोलन–** स्वाधीनता के आन्दोलन से संबद्ध होने के कारण इन पर भी इस आन्दोलन का प्रभाव पड़ा।

प्रश्न–(8) तना भगत आन्दोलन पर टिप्पणी लिखिये।

उत्तर– ताना भगत आन्दोलन– इस आन्दोलन पर बिरसा मुण्डा का प्रभाव था। इस का प्रणेता जात्रा उरांव था। ताना भगत आन्दोलन के तीन लक्ष्य थे–

(i) संस्कृतिकरण (हिन्दू),
(ii) जमींदारों, साहूकारों तथा मिशनरियों का विरोध।
(iii) देश के स्वतंत्रता आन्दोलन में योगदान।

जात्रा ने प्रचारित किया कि वह ईश्वर का प्रतिनिधि है। उसने मांस खाने तथा मद्यपान करने से लोगों को रोका। उसने परम्परागत देवी-देवताओं के प्रति अनास्था प्रकट कर गौपूजा के लिये लोगों को प्रेरित किया। एकेश्वरवाद पर बल दिया। इसकाहार को प्रोत्साहित किया। इनमें आस्था रखने वाले ताना भगत कहलाने लगे।

यह आन्दोलन धार्मिक आन्दोलन के साथ ही स्वाधीनता का आन्दोलन भी था। अंग्रेज अधिकारियों, जमींदारों एवं मिशनरियों पर हमला बोलकर इन्होंने स्वतंत्रता सेनानियों का साथ दिया। स्वदेशी आन्दोलन के प्रभाव में मिल के बने कपड़ों का बहिष्कार भी किया।

1921 में जात्रा भगत की गिरफ्तारी से अहिंसक आन्दोलन हिंसक बना। अंग्रेजों के दमन के बावजूद यह आन्दोलन चलता रहा।

प्रश्न–(9) जनजातीय आंदोलन की अवधारणा को स्पष्ट कीजिये।

उत्तर– किसी भी समाज में आंदोलन तब पैदा होता है जब वहाँ के लोग वर्तमान स्थिति से असंतुष्ट हों और उसमें परिवर्तन लाना चाहते हों। **हार्टन तथा हन्ट** ने लिखा है, 'आन्दोलन समाज अथवा उसके सदस्यों में परिवर्तन लाने अथवा उसका विरोध करने का सामूहिक प्रयास है।' जनजातीय समाज भी जब अपनी वर्तमान स्थिति से असंतुष्ट होकर उसे बदलने का सामूहिक प्रयास करता है तब उनके द्वारा चलाया जाने वाला आंदोलन जनजातीय आंदोलन कहलाता है।

भारत जनजातियों का अजायबघर है। अफ्रीका के बाद सबसे अधिक जनजातियों वाला देश भारत ही है। यहाँ प्रजातीय, सांस्कृतिक, भौगोलिक आदि अनेक आधारों वाली जनजातियाँ पाई जाती हैं। यहाँ अभी भी ऐसी जनजातियाँ हैं जिनका सभ्य समाज से ठीक से सम्पर्क नहीं है। वहीं ऐसी भी जनजातियाँ हैं जो सभ्य समाज के सम्पर्क में आने से परिवर्तन के दौर से गुजर रही हैं। बाह्य समाज के सम्पर्क, शिक्षा का प्रसार, सरकारी कानून और संवैधानिक व्यवस्थाओं से इन जनजातियों में आमूल-चूल परिवर्तन आये। उनका सम्पर्क देश-विदेशों के साथ स्थापित हुआ। 'आदिम समाज' के लिये यह स्थिति क्रान्तिकारी थी। इसी ने इन लोगों में आत्मविश्वास तथा जागरूकता उत्पन्न की। अपनी समस्याओं से सचेत किया और अन्याय के विरुद्ध संगठित होकर आवाज उठाने के लिये प्रेरणा दी। यहीं से जनजातीय आन्दोलनों का श्रीगणेश हुआ।

इकाई-5

दीर्घउत्तरीय प्रश्नोत्तर-

प्रश्न–1. 'गोंड जनजाति' पर एक निबन्ध लिखिये।

अथवा

गोंड जनजाति के जीवन का विवेचन कीजिये।

अथवा

मध्य प्रदेश की गोंड जनजाति पर एक लेख लिखिये।

अथवा

निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणियां लिखिये–

(i) गोंड जनजाति का सामाजिक संगठन (ii) गोंड जनजाति में विवाह

(iii) गोंड जनजाति में परिवार एवं नातेदारी संगठन।

उत्तर– गोंड जनजाति भारत की बहुसंख्यक जनजातियों में से एक है। गोंड जनजाति बहुत अधिक प्राचीन है क्योंकि इस जनजाति का उल्लेख रामायण एवं महाभारत में भी मिलता है। **आर.बी. रसेल तथा हीरालाल** के मतानुसार, "9वीं से 13वीं सदी के बीच गोंड लोग मध्य प्रदेश के मध्य एवं दक्षिणी भाग में बसे होंगे। 1981 की जनगणना के अनुसार मध्य प्रदेश में गोंडों की जनसंख्या 53.49 लाख थी। परन्तु वर्तमान में इनकी संख्या लगभग 65 लाख से अधिक हो चुकी है।"

यद्यपि गोंड जनजाति के लोगों का बिखराव थोड़ा बहुत सारे मध्य प्रदेश में है लेकिन सीधी, शहडोल, सरगुजा, बिलासपुर, रायपुर, बस्तर, छिन्दवाड़ा, सिवनी, बालाघाट, बैतूल,

चाँदा, होशंगाबाद, निमाड़, नरसिंहपुर आदि क्षेत्रों में इनकी जनसंख्या अधिक है। गोंड जनजाति की लगभग दो तिहाई जनसंख्या केवल मध्य प्रदेश में रहती है और शेष अन्य प्रान्तों में निवास करती है।

प्रजाति– प्रजातीय दृष्टि से गोंडों को किसी एक श्रेणी में नहीं रखा जा सकता है। कारण यह है कि इनमें प्रजातीय मिश्रण हुआ है। क्योंकि इनमें पूर्व द्रविड़ियन प्रजाति एवं यूरोप की भूमध्य–सागरीय शाखा के प्रजातीय तत्व पाये जाते हैं। इनकी त्वचा का रंग काला, बाल काले एवं सीधे, दाढ़ी एवं मूंछ के बाल बहुत कम, नाक भारी एवं चौड़ी, होठ मोटे, आकर्षणहीन व्यक्तित्व आदि इनकी शारीरिक विशेषतायें हैं।

निवास– गोंड जनजाति के लोग स्थानांतरित खेती करते हैं, इसलिये यह अपना निवास–स्थान बदलते रहते हैं। इसी कारण इनके मकान बांस, लकड़ी व मिट्टी आदि के बने होते हैं। इनके प्रत्येक परिवार के पास एक या दो कमरे होते हैं। पशुओं के लिये घर में अलग स्थान होता है, तथा मेहमान के लिये अलग से घर होता है जिसे बरोठा कहते हैं। गोंड जनजातियों में जो लोग पहाड़ी क्षेत्रों में निवास करते हैं वे भरिया गोंड कहलाते हैं तथा जो मैदानी क्षेत्रों में रहते हैं उन्हें मुरिया गोंड कहते हैं। इस प्रकार निवास की दृष्टि से गोंडों को दो भागों में बाँटा गया है।

वस्त्र– गोंड जनजाति के लोगों में पहाड़ी क्षेत्रों में रहने वाले कम वस्त्र पहनते हैं, यहां तक कि कुछ समय पूर्व ये अपने तन को पत्तों एवं छाल से ढँकते थे। पुरुष केवल एक लंगोटी पहनता है तथा स्त्रियाँ लुकड़ी (साड़ी) पहनती हैं, परन्तु मैदानी क्षेत्रों के गोंड़ आधुनिकता के सम्पर्क में आने के कारण नये प्रकार के वस्त्र पहनने लगे हैं। इसके अतिरिक्त स्त्री एवं पुरुष दोनों ही चाँदी, पीतल एवं काँसे के गहने पहनते हैं। स्त्रियों को शरीर पर पशुओं, पेड़–पौधों और अपने नाम गुदवाने का शौक है।

भोजन– गोंड जनजाति के लोग सुबह एवं दोपहर को कोदों, कुटकी या बाजरे की पेज बनाकर खाते हैं तथा शाम के समय चावल व सब्जी, ज्वार एवं गेहूं की रोटी भी तेल में तलकर खाते हैं। समस्याओं एवं कठिनाइयों के समय वे महुये के फूल एवं जंगली कन्द–मूल फल से अपना पेट भरते हैं।

एक शताब्दी पूर्व गोंडों के विषय में जेनकिन्स ने लिखा है कि, "वे नंगे रहते हैं तथा जड़ों, फलों एवं शिकार पर जीवित रहते हैं और अजनबी लोगों को मार देते हैं।" गोंड जनजाति के लोग पक्षियों एवं मछलियों तथा बकरा व अन्य जंगली जानवरों का माँस खाते हैं। ये लोग महुआ, खजूर और चावल की शराब बनाकर पीते हैं तथा बीड़ी, तम्बाकू एवं सिगरेट का प्रयोग भी करते हैं। बस्तर के मारिया गोंड चेहू तथा लाल चीटों को भी खा जाते हैं।

भाषा– गोंड लोग गोंडी भाषा का प्रयोग करते हैं जिस पर द्रविड़ भाषा पर तेलुगू भाषा का प्रभाव है, परन्तु ग्रियर्सन का यह मत है कि गोंडी भाषा पर तमिल एवं कन्नड़ का प्रभाव है।

पशुपालन– गोंड जनजाति के लोग गाय, भैंस, सूअर, भेड़, बकरी, मुर्गी एवं कुत्ते आदि को पालते हैं।

अर्थव्यवस्था– गोंड लोगों का प्रमुख व्यवसाय कृषि है। ये लोग कृषि करने के लिये जंगलों में आग लगा देते हैं तथा वर्षा के दिनों में बीज डालकर वहां खेती करते हैं। धीरे–धीरे जब वह स्थान अनुपजाऊ हो जाता है तब उसे छोड़ दिया जाता है तथा फिर उसी प्रकार अन्य स्थान पर खेती की जाती है। ये लोग ज्वार, मक्का, गेहूं, सरसों, चावल, कोदों, कुटकी, सन, कपास एवं तिलहन की खेती करते हैं। जंगल जलाने पर सरकार द्वारा रोक लगाने से अब ये लोग स्थायी खेती करते हैं।

गोंड जनजाति के अनेक लोग जाल बनाकर चिड़ियों एवं मछली पकड़ने का कार्य करते हैं। चाँदा के गोंडों का निशाना बहुत ही अचूक है क्योंकि वे दौड़ते हुये हिरण को तीर से मार गिराते हैं। ये लोग शारीरिक मेहनत करना पसंद करते हैं। परन्तु कुछ लोग अपने स्वामी के खेत पर वर्ष भर कार्य करते हैं। वे 'भरसिया कमिया' अर्थात् वर्ष भर काम करने वाले कहलाते हैं। कुछ लोग साहूकार के खेत पर तब तक काम करते हैं जब तक कि साहूकार से लिया गया ऋण नहीं चुक जाता है। इस प्रकार कुछ लोगों के द्वारा भोले एवं सीधे आदिवासियों का शोषण किया जाता है। लेकिन अब कानून द्वारा इस प्रथा का अन्त कर दिया गया है।

सामाजिक संगठन– गोंड लोग अधिकांशतः शहर एवं सड़क से दूर जंगलों में ही रहना पसंद करते हैं। क्योंकि ये लोग जंगलों की उपज एवं स्थानांतरित कृषि करते हैं इसलिये इन्हें जंगलों में ही निवास करना पड़ता है। इस प्रकार गोंडों को मुख्यतः दो भागों में बांट सकते हैं– राज गोंड और धुर गोंड। इनमें से शासक वर्ग के लोग जैसे– माल गुजार, मुकाद्दम, पटेल एवं गांव का मुखिया राज गोंडों में से ही होता है तथा अन्य कर्मचारी धुर गोंडों में से होते हैं। इनके अलावा देवगोंड, सूर्यवंशी गोंड़ एवं रावणवंशी गोंड भी होते हैं। इनमें से रावणवंशी गोंड सबसे निम्न श्रेणी के माने जाते हैं।

गोत्र एवं टोटम– गोंडों में गोत्र एवं टोटम की व्यवस्था पायी जाती है। एक गोत्र या टोटम को मानने वाले आपस में भाई–बहन माने जाते हैं, इसलिये ये आपस में विवाह नहीं करते हैं। इनमें टोटम को भय और श्रद्धा की दृष्टि से देखा जाता है। इनके टोटम तेन्दू, टीक, वृक्ष, कछुआ, बकरा व गधा आदि हैं। अलग–अलग क्षेत्रों में गोत्र एवं टोटम की संख्या भी अलग–अलग है।

परिवार एवं नातेदारी– गोंडों में अधिकांशतः एक–विवाही परिवार पाये जाते हैं जिसमें पति–पत्नी और उनके अविवाहित बच्चे होते हैं। कभी–कभी परिवार में मुखिया के अविवाहित भाई–बहन भी साथ में ही रहते हैं। इसके अलावा संयुक्त रूप में सभी भाई अपनी पत्नियों एवं अविवाहित लड़कियों तथा उनके विवाहित एवं अविवाहित पुत्रों सहित रहते हैं। इसका आकार हिन्दुओं के संयुक्त परिवार जैसा ही होता है। गोंड लोग पितृवंशीय एवं पितृस्थानीय हैं। इनमें ससुर–पुत्रवधू और देवर–भाभी परिहास की प्रथा का प्रचलन है तथा इनमें भाई–बन्ध का विस्तृत रूप भाई–बिरादरी कहलाता है।

विवाह– गोंड लोग एक–विवाही हैं। इनमें विवाह–पूर्व यौन सम्बन्ध तो पाये जाते हैं, परन्तु विवाह बाद के यौन सम्बन्ध को ही अनुचित माना जाता है। यहां तक की घर में भी पति–पत्नी को सम्भोग करने की मनाही होती है, अतः वे जंगल या अन्य स्थान पर ही ऐसा

कर सकते हैं। उनका विश्वास है कि घर में पूर्वजों की आत्मा निवास करती है इसलिये घर में सम्भोग करने पर वह नाराज हो जाती है। मासिक धर्म एवं प्रजनन काल के समय निवास के लिये स्त्रियों के लिये एक अलग कमरा होता है जिसमें ये रहती हैं क्योंकि इस समय इन्हें अपवित्र माना जाता है। एक गोंड व्यक्ति अपने गोत्र तथा टोटम समूह एवं भाई-बन्ध समूह से बाहर विवाह करता है। इसमें जब एक व्यक्ति अपने लड़के का विवाह बहिन की लड़की से करता है तो ऐसे विवाह को दूध, लोटवा कहते हैं। अनेक बार बहिन की लड़की का विवाह भाई के लड़के से नहीं होता है तो भाई हर्जाना लेता है उसे 'दूध बन्ध' कहा जाता है। इनमें देवर-साली विवाह भी पाया जाता है। इनमें छोटा भाई अपने बड़े भाई की विधवा पत्नी से विवाह कर सकता है इसके अलावा एक पुरुष अपनी पत्नी की दूसरी व तीसरी बहन से भी विवाह कर सकता है। गोंडों में बाल-विवाह का प्रचलन नहीं है, क्योंकि सदैव लड़का ही अपने जीवन-साथी के बारे में माता-पिता को सहमति प्रदान करते हैं। कभी-कभी इनमें बहु पत्नी विवाह भी देखने को मिलता है। गोंडों में इनके अलावा विभिन्न प्रकार के विवाह पाये जाते हैं जैसे- सामान्य विवाह, सहमति विवाह, सेवा विवाह, हरण विवाह, विनिमय विवाह, क्रय विवाह, अनियमित विवाह आदि।

तलाक- गोंड जनजाति में स्त्री एवं पुरुष दोनों को ही तलाक देने का अधिकार प्राप्त है। स्त्री के व्यभिचारी होने, घर की देखभाल न करने, झगड़ालू होने व बांझ होने पर पुरुष उसे तलाक दे सकता है।

युवा-गृह या घोटुल- गोंड लोगों में पाये जाने वाले युवा-गृह को घोटुल कहते हैं तथा घोटुल में जाने वाले लड़कों को चेलिक तथा लड़कियों को मोटियारी कहते हैं। मौतुल का मुखिया सिरदार या सिलेदार कहलाता है। घोटुल मानव की यौन इच्छाओं को सही दिशा प्रदान करता है तथा विवाह की समस्या को हल करता है। घोटुल में लड़के व लड़कियां अपने जीवन-साथी को चुनते हैं। इस प्रकार घोटुल अपने सदस्यों की सामाजिक आदतों एवं विवाह के बाद व्यवहार को तय करता है। घोटुल के सदस्य कृषि, नृत्य, दावत, विवाह तथा उत्सव में सहयोग प्रदान करते हैं। इसके अलावा यह सदस्यों पर नियंत्रण रखता है, उन्हें अपने सामाजिक एवं आर्थिक दायित्व निर्वाह करने के लिये तैयार करता है जिसके बिना जनजाति जीवन संभव नहीं है।

राजनीतिक संगठन- प्रत्येक गोंड गाँव में इनकी एक पंचायत होती है जिसका मुखिया मुकाद्दम कहलाता है। पंचायत ही गाँव बसाने के लिये नई भूमि का निर्णय करती है और विवादों को सुलझाती है। धार्मिक एवं सामाजिक मामलों में पंचायत के पंचों की सहमति एवं उनसे राय लेना बहुत महत्वपूर्ण होता है। इसके अतिरिक्त विवाह में निर्णय करने के लिये गवाही ली जाती है। इसमें शपथ एवं गंगाजली हाथ में लेकर एक व्यक्ति अपनी सच्चाई सामने रखता है।

धर्म एवं जादू- गोंड लोग बहुदेवीवादी हैं और उनके धर्म पर हिन्दू धर्म का प्रभाव है। पुजारी धार्मिक क्रियायें कराता है, तथा ओझा या बैगा, झाड़-फूँक तथा जादू-टोना करता है। ये लोग कई देवी-देवताओं जैसे- ठाकुरदेव, मोती भवानी,बहिसासुर, मरई माता, भवानी माता, रातमाई, नर्मदामाई, पृथ्वी माता, शीतला माता, धानो देव, तथा हनुमान आदि को

मानते हैं और उन्हें बलि व प्रसाद चढ़ाते हैं। वर्षा लाने, अच्छी फसल पैदा करने, मछली मारने एवं शिकार पर जाने से पहले कुछ जादुई क्रियायें करते हैं। ये लोग बीमारी व बुरी आत्माओं से रक्षा के लिये ताबीज भी बाँधते हैं। गोंड जनजाति के लोगों का यह विश्वास है कि भगवान अर्थात् 'बड़ादेव' ने ही विश्व की रचना की है और वह सज्जा नामक वृक्ष पर निवास करता है।

गोंडों का सांस्कृतिक जीवन- वर्तमान समय में गोंड लोग आधुनिकता के सम्पर्क में आये हैं और उनकी संस्कृति प्रभावित हुई है। जबलपुर एवं सिवनी के गोंडों पर बुन्देलखण्ड की भाषा व पहनावे का असर पड़ा है। बिलासपुर के गोंडों पर छत्तीसगढ़ व दक्षिणी चाँदा जिले के गोंडों पर तेलुगू भाषा व पहनावे का प्रभाव भी है। उत्तरी चाँदा जिले के गोंड मराठी से प्रभावित हैं। जबकि मण्डला एवं चाँदा क्षेत्र पर पंजाब का प्रभाव देखा जा सकता है। इसके अलावा गोंड लोगों पर हिन्दू, मराठा, मुसलमान एवं ईसाईयों का भी प्रभाव पड़ा है। अनेक स्थानों पर चर्च भी बनाये गये हैं और कई गोंड ईसाई बन गये हैं।

गोंड जनजाति के लोगों के स्त्री-पुरुषों के कपड़े अब आधुनिक बनने लगे हैं। वे अब तेल, इत्र, साबुन, पाउडर, क्रीम, पीतल के बर्तन, मिलों में बने कपड़े आदि का प्रयोग करने लगे हैं। लेकिन आधुनिकता एवं नये सम्पर्कों से इनका आर्थिक शोषण हुआ है। इनकी भूमि एवं जंगल हड़प लिये गये हैं और इन्होंने नई बीमारियाँ ग्रहण की हैं।

प्रश्न-2. भील जनजाति पर एक निबंध लिखिये।

अथवा

भीलों की अर्थव्यवस्था एवं समस्याओं की विवेचना कीजिये।

अथवा

भील जनजाति के राजनीतिक संगठन एवं उनके सांस्कृतिक जीवन पर प्रकाश डालिये।

अथवा

भील जनजाति के सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन को संक्षेप में समझाइये।

अथवा

'भील मध्य प्रदेश की प्रमुख जनजाति है।' इस कथन की विवेचना कीजिये।

अथवा

भील जनजाति की सामाजिक एवं आर्थिक जीवन की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिये।

अथवा

मध्य प्रदेश में भील जनजाति के सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक जीवन का वर्णन कीजिये।

अथवा

मध्यप्रदेश की भील जनजाति पर एक लेख लिखिये।

अथवा

भील जनजाति के सामाजिक संगठन को समझाइये।

उत्तर- मध्य प्रदेश में भील जनजाति का दूसरा स्थान है। भीलों का मुख्य निवास प्रदेश के पश्चिमी भाग, धार, झाबुआ, बड़वानी और पश्चिमी निमाड़ जिले में है। मध्य प्रदेश का पश्चिमी भाग भीलों के कारण जाना जाता है। धार एवं झाबुआ में भीलों की 85% जनसंख्या

निवास करती है। भील जनजाति के जीवन, उनकी अर्थव्यवस्था तथा संगठनों का विवेचन हम निम्नलिखित शीर्षकों द्वारा दे सकते हैं–

प्रजाति– विभिन्न विद्वान इन्हें विभिन्न प्रजातियों का मानते हैं क्योंकि रिजले भीलों को द्रविड़ प्रजाति का, मजूमदार इन्हें पूर्व–द्रविड़ियन प्रजाति का मानते हैं। जबकि शाह इन्हें आस्ट्रेलॉयड एवं कूक इन्हें द्रविड़ प्रजाति का मानते हैं। कुछ विद्वान इन्हें मुण्डा प्रजाति का अंग मानते है जो कि पूर्व–द्रविड़ियन भारत में रहती थी। शारीरिक संरचना की दृष्टि से इनका कद छोटा या मंझला, शरीर पतला, सिर गोल, नाक नीची एवं चौड़ी, त्वचा का रंग काला–भूरा, चेहरा चौड़ा तथा बाल लहरदार और घुंघराले होते हैं।

निवास स्थान– भील लोग प्रमुख रूप से पहाड़ी क्षेत्रों एवं नदी घाटियों में छितरे हुये रहते हैं। इनके गाँव छोटे–छोटे होते हैं जिन्हें 'फाला' कहते हैं। प्रत्येक फाला एक आत्मनिर्भर इकाई होता है। अनेक फाला मिलकर एक पाल का निर्माण करते हैं। ये लोग बाँस की झोंपड़ियों या मिट्टी के कच्चे घरों में रहते हैं। अधिकांशतः भीलों का निवास अपने खेतों के पास ही होता है जिससे कि वे खेती की देखभाल एवं जानवरों से उनकी सुरक्षा कर सकें।

भोजन एवं वस्त्र– भील लोग गेहूँ, जौ, मक्का, एवं चावल का प्रयोग अपने भोजन में करते हैं। ये लोग तीर चलाने एवं निशाना लगाने में बहुत ही निपुण होते हैं। ये लोग जंगली जानवरों का शिकार कर उनका माँस भी खाते हैं तथा जंगली फल–फूल एवं जड़ों का भी सेवन करते हैं। भील लोग गुड़, चावल और महुआ की शराब बनाकर भी पीते हैं। महुआ का पेड़ इनके लिये वरदान है। क्योंकि संकट की घड़ी में ये लोग महुआ की कलियों एवं बीजों को खाकर अपना गुजारा कर लेते हैं।

भील लोगों में पुरुष धोती, अंगी (कमीज) और फेंटा (पगड़ी) पहनते हैं तथा स्त्रियाँ घांघरा, कब्जा, काँचली एवं लूगड़ी (साड़ी) पहनती हैं। स्त्रियाँ नाक, कान, गले, हाथ एवं पाँव में चाँदी, कांसे एवं पीतल के आभूषण पहनती हैं। भील लोग त्यौहारों एवं मेले के अवसर पर रंग–बिरंगी पोशाक पहनते हैं।

भाषा– भील लोग भीली तथा बागड़ी बोली बोलते हैं। भीली बोली मेवाड़ी भाषा का तथा बागड़ी भाषा पर गुजराती भाषा का प्रभाव है। जबकि ग्रियरसन ने भीली भाषा पर राजस्थानी, गुजराती, खानबदोशी एवं मराठी भाषा के प्रभाव का उल्लेख किया है।

सामाजिक संगठन– भीलों के सामाजिक संगठन के अन्तर्गत हम परिवार, विवाह, धर्म, अर्थव्यवस्था, राजनीतिक व्यवस्था आदि को स्पष्ट कर सकते हैं–

(1) **परिवार**– भील जनजातियों में पितृ–वंशीय, पितृस्थानीय एवं पितृसत्तात्मक परिवार की व्यवस्था पायी जाती है। वंशनाम व्यवस्था तथा सम्पत्ति का वितरण पितृ–पक्ष से ही तय होता है। परिवार की सम्पत्ति सभी पुरुष उत्तराधिकारियों में समान रूप से बांटी जाती है। भील जनजाति में परिवार सामाजिक संगठन की सबसे छोटी इकाई है। परिवार की सबसे बड़ी इकाई कुटुम्ब कहलाती है जिसमें अनेक रिश्तेदार सम्मिलित होते हैं। एक कुटुम्ब का एक मुखिया होता है। कुटुम्ब के सदस्य जन्म, विवाह, मृत्यु, संघर्ष एवं संकट के समय आपस में एक–दूसरे की सहायता करते हैं। इसके अलावा एक कुटुम्ब के लोग अपने परिवार–जनों को समय आने पर आर्थिक एवं अनेक प्रकार की सहायता करते हैं। भील जनजाति में यह प्रथा पाई जाती है कि ज्यों ही पुत्र का विवाह होता है तब पिता अपने पुत्र को अलग निवास बनाकर देता है जिससे नव–विवाहित जोड़ा अलग परिवार बनाकर रहने लगता है। इस प्रकार भीलों में अधिकतर एकाकी परिवार पाये जाते हैं।

विवाह– सामान्यतः भील जनजातियों के लोग एक विवाह प्रथा का पालन करते हैं लेकिन कुछ लोग बहुपत्नी विवाह को भी मानते हैं। गाँव के मुखियों के पास एक से अधिक पत्नियाँ भी रह सकती हैं। क्योंकि एक से अधिक पत्नियाँ रखना सामाजिक एवं आर्थिक प्रतिष्ठा का सूचक माना जाता है। भील जनजातियों के लोगों में गोत्रों की मान्यता बहुत अधिक पायी जाती है इसलिये एक पाल या एक ही गाँव के लोग आपस में विवाह नहीं करते हैं। भीलों में देवर विवाह, विनिमय विवाह, क्रय विवाह एवं सेवा विवाह भी पाया जाता है। इनमें हरण विवाह भी पाया जाता है। मेले या उत्सव के समय लड़की का अपहरण कर उससे विवाह कर लिया जाता है। भीलों में तलाक का भी प्रचलन है। तलाक स्त्री एवं पुरुष दोनों ही दे सकते हैं। इन लोगों में तलाक देने का ढंग यह है कि स्त्री की साड़ी का पल्लू (छोर) फाड़कर उसमें एक रुपया बाँधकर पुरुष के रिश्तेदार या पंच स्त्री को दे देते हैं। इसके बाद स्त्री पुनर्विवाह करने के लिये स्वतंत्र होती है। स्त्री द्वारा तलाक देने पर उसे वधू–मूल्य लौटाना होता है।

अर्थव्यवस्था– भीलों की वर्तमान एवं प्राचीन अर्थव्यवस्था में बहुत अधिक अन्तर है। कृषि भीलों की अर्थव्यवस्था का आधार है। कुछ समय पहले ये लोग जंगलों को जलाकर भूमि साफ करके कृषि किया करते थे जिसे वे दजिया या झिमटी कहते थे, और जब धीरे–धीरे भूमि कम उपजाऊ हो जाती तो ये अन्य स्थान पर चले जाते थे। लेकिन वर्तमान समय में सरकार की नई वन नीति के कारण जंगलों को जलाने पर रोक लगा दी गयी है और वे अब स्थायी कृषि करने लगे हैं। कृषि के अलावा जंगलों से प्राप्त होने वाले पदार्थों जैसे जड़ी–बूटियाँ, फल–फूलों, लकड़ी, शहद, कत्था, गोंद, पत्ते एवं अन्य वस्तुयें बेचकर भी ये लोग अपना जीवन–यापन करते थे। परन्तु सरकार ने जनजातियों के जंगल–सम्बन्धी अधिकारों पर भी प्रतिबन्ध लगा दिये हैं। इससे इन्हें अनेक आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। अधिकांश भील लोग या तो स्वयं की भूमि पर कृषि का कार्य करते हैं या फिर कृषि में मजदूरों के रूप में कार्य करते हैं। ये लोग मक्का, चावल, गेहूँ, कोपरा, चना, मूँगफली, कपास, तम्बाकू, उड़द, गन्ना, तिल एवं साक–सब्जी आदि उगाते हैं। कुछ लोग शिकार करने एवं मछली पकड़ने का कार्य करते हैं। इसके अतिरिक्त ये लोग गाय, भैंस, भेड़, बकरी एवं मुर्गीपालन का भी व्यवसाय करते हैं। भील लोग गरीबी की अवस्था में कभी–कभी चोरी भी कर लेते हैं। जबकि कुछ लोग भूस्वामियों या साहूकारों के यहाँ हाली के रूप में खेतों पर काम करते हैं।

राजनीतिक संगठन– प्रत्येक भील गाँव का एक मुखिया होता है जिसे गोमती पटेल या मुखी कहते हैं। मुखिया का पद वंशानुगत होता है जो पिता से सबसे बड़े पुत्र को मिलता है। गोमती ही गाँव के झगड़े एवं समस्याओं को निपटाते हैं तथा उसकी आज्ञा को सभी लोग मानते हैं। सभी मामलों में वह गाँव का प्रतिनिधित्व करता है। गाँव वालों के लिये वह एक नेता, दार्शनिक एवं मार्गदर्शक होता है तथा गाँव के बारे में सूचना एकत्रित करता है इसके अलावा जो सरकारी कर्मचारी गाँव में आते हैं वह उनका सहयोग करता है। गोमती के बाद

दूसरा महत्वपूर्ण व्यक्ति भोपा या देवालो होता है जो पुजारी एवं चिकित्सक का कार्य करता है। संकट के समय जैसे- बीमारी, महामारी, बाढ़, अकाल आदि में सभी गाँव वाले उसकी आज्ञा का पालन करते हैं। प्रत्येक गाँव में एक भगत भी होता है जो धार्मिक संस्कारों को सम्पन्न करता है। ग्रामीण क्षेत्रों में ग्राम-पंचायतों की स्थापना के साथ ही जनजाति पंचायतें कुछ कमजोर हुई हैं फिर भी जनजाति से सम्बन्धित कई मामले परम्परात्मक पंचायत व्यवस्था एवं गोमती द्वारा ही हल किये जाते हैं।

धर्म एवं जादू- भील जनजाति के लोग पूर्वजों की पूजा करते हैं तथा आत्मा में विश्वास करते हैं। ये कई देवी-देवताओं की पूजा करते हैं जैसे- इन्द्रराज, वागदेव, बाराबीज, गोराजी हिमारियो, कालाजी, गोपालदेव, खेतरपाल, सतीमाता, मारियामाता, बेरिया माता, कालीमाता, ओरियामाता, सीतला माता, मोतीमाता एवं भेरूजी आदि। इन देवी-देवताओं के अलावा इन्होंने अम्बाजी, चामुण्डा देवी, हनुमान, महादेव, धरतीमाता, रामदेव, एवं धर्मराज आदि हिन्दू देवी-देवताओं को मानना भी प्रारम्भ कर दिया है।

भील जनजाति के लोग डाकन, डाकनी व चुड़ैल में विश्वास करते हैं। इनका मानना है कि आत्मायें अच्छी एवं बुरी होती हैं। भोपा, बदवा या भगत, भूत-प्रेत एवं चुड़ैल के प्रभाव से रक्षा करने एवं बीमारी से मुक्ति दिलाने के लिये ताबीज, गण्डा, जन्तर तथा डोरा करते हैं। देवरे पर भोपा देवी-देवताओं से सम्बन्धित संस्कारों को सम्पन्न करता है। ये लोग देवी-देवताओं को शराब एवं बलि चढ़ाते हैं।

धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन- भील जनजाति के लोगों का जब हिन्दुओं एवं ईसाईयों से सम्पर्क हुआ तो उनकी संस्कृति, समाज-व्यवस्था एवं समाज में भी परिवर्तन आया। क्योंकि ये लोग धर्म-परिवर्तन करके ईसाई बन गये और इन्होंने ईसाई संस्कृति को अपना लिया। ये लोग अपने को अन्य भीलों से प्रगतिशील मानने लगे। लेकिन दूसरी ओर जिन्होंने धर्म-परिवर्तन नहीं किया उन्होंने अपने को शुद्ध भील माना और धर्म-परिवर्तन करने वालों से श्रेष्ठ माना।

हिन्दुओं के सम्पर्क में आने से भी लोगों में सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धर्म-सुधार का आन्दोलन हुआ जिसे भगत आंदोलन के नाम से जाना जाता है। इस आन्दोलन के प्रवर्तकों में सरमलदास तथा गोविंद गिरी प्रमुख हैं। इस आन्दोलन का प्रमुख उद्देश्य भी लोगों को हिन्दू विशेष रूप से ब्राह्मण एवं वैश्य संस्कृति के नजदीक लाना तथा भीलों की सामाजिक स्थिति को ऊंचा उठाना था।

भील जनजाति की समस्यायें- भील जनजाति की प्रमुख समस्यायें निम्नलिखित हैं-

(1) स्थानान्तरित कृषि के कारण जंगल की कीमती लकड़ियां जल जाती हैं और भूमि का कटाव होने लगता है।

(2) सरकार की नयी वन-नीति के कारण भीलों के अधिकारों पर कई नियंत्रण लगा दिये गये जिससे उन्हें अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ रहा है और इनका जीवन-यापन करना कठिन हो गया है।

(3) मुद्रा अर्थव्यवस्था से परिचित होने के कारण उनका आर्थिक शोषण बढ़ा है। क्योंकि व्यापारी, साहूकार और ठेकेदार इनका आर्थिक शोषण करने लगे हैं।

(4) हिन्दुओं के सम्पर्क में आने के कारण इन्होंने हिन्दुओं की कई कुप्रथाओं को स्वीकार कर लिया है। क्योंकि इनमें बाल-विवाह होने लगे हैं तथा वधू मूल्य की राशि में भी वृद्धि हुयी है।

(5) नये सम्पर्क होने के कारण इनके लोक गीतों, नृत्यों, साहित्य एवं कला में लगातार कमी होती जा रही है।

(6) जो भील जनजाति के लोग ईसाई बन गये हैं वे अपने मूल समूह से अलग हो गये हैं तथा इससे उनमें अलगाव एवं श्रेष्ठता के भाव पैदा हुये हैं।

(7) इन लोगों के पास चिकित्सा का अभाव है और ये कई बीमारियों से पीड़ित हैं इसलिये इनका स्वास्थ्य क्षीण है एवं ये कुपोषण से पीड़ित हैं।

(8) भील लोगों की गरीबी सबसे भयंकर समस्या है। इसलिये इनका जीवन-यापन करना मुश्किल होता जा रहा है।

(9) भील जनजाति के लोगों में शिक्षा का अभाव है। इसलिये इनमें अज्ञानता एवं रूढ़िवादिता पायी जाती है।

(10) पहाड़ी एवं जंगली क्षेत्रों में रहने के कारण इनके निवास-स्थान एवं गांवों तक पहुंचना बहुत कठिन है। अतः यातायात के आधुनिक साधन न होने के कारण इनके द्वारा उत्पादित वस्तुयें बाजार तक नहीं आ पाती हैं तथा उन्हें अपनी वस्तुओं का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है।

(11) जनजातीय क्षेत्र में कई स्थानों पर पीने योग्य पानी की समस्या सदैव बनी रहती है। ये लोग झरनों, नदी एवं तालाबों का पानी पीते हैं। इसलिये इनमें नारु रंग बहुतायत में पाया जाता है।

प्रश्न-3. पातालकोट की भारिया जनजाति पर एक लेख/निबंध लिखिए।

अथवा

मध्यप्रदेश की भारिया जनजाति के सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक जीवन का वर्णन कीजिए।

उत्तर- भारिया जनजाति मध्यप्रदेश के छिंदवाड़ा, सिवनी तथा मंडला जिलों में बहुतायत में पाई जाती है। इस अपेक्षाकृत बड़े भाग में फैली जनजाति का एक छोटा-सा समूह छिंदवाड़ा जिले के पातालकोट नामक स्थान में निवासरत है।

पातालकोट क्षेत्र के निवासी शेष दुनिया से अलग-थलग एक ऐसा जीवन जी रहे हैं जिसमें उनकी अपनी स्वयं की मान्यताएँ, संस्कृति तथा अर्थव्यवस्था है। पातालकोट का शाब्दिक अर्थ है- पाताल को भेदने वाला पर्वत या किला। इसलिए यह नाम लोगों ने छिंदवाड़ा के एक ऐसे स्थान को दिया है जिसके चारों ओर अधिक ढालू पहाड़ियाँ हैं। इन वृत्ताकार पहाड़ियों ने सचमुच ही एक दुर्ग का रूप धारण कर लिया है। ऐसा नहीं है कि इस क्षेत्र में एक ही जनजाति रहती हो बल्कि सच तो यह है कि पातालकोट की 90% आबादी भारिया जनजाति की है, शेष 10% में दूसरे आदिवासी हैं। इस स्थल की दुर्गमता ने ही यहाँ के आदिवासी जीवन और संस्कृति को यथावत रखने में सहायता की है। पातालकोट के भारिया

प्राचीन समय से ही इस क्षेत्र में निवास कर रह रहे हैं। उन्हें अपनी मातृ भाषा तथा धर्म का कोई भी ज्ञान नहीं है।

यहाँ की जलवायु मौसमी है और सघन वनों की अधिकता के कारण यहाँ वर्षा अधिक होती है। यह वर्षा मध्यप्रदेश के अन्य जिलों को ही भाँति जून से सितम्बर तक का होता है। यहाँ की मिट्टियाँ चूने और रेत की प्रधानता वाली हैं इसलिए ये अनुर्वर हैं। यहाँ पर अनेक प्रकार की घासें तथा बड़े वृक्षों में बीजा, हर्रा, धावा, पलाश, जामुन, हल्दू, बेर, सेमल और पीपल प्रमुख है। यहाँ पर अनेक दवा बनाने में काम आने वाली वनस्पतियाँ भी पायी जाती हैं। यहाँ के वनों में भालू, नीलगाय, खरहे तथा चिंकारा इत्यादि देखने को मिल जाते हैं।

पातालकोट की भारिया जनजाति को 1881 की जनगणना में "जंगलियों के भी जंगली" कहा गया था। भारिया को कभी-कभी गोंड भी कहते हैं पर यह प्रजातीय दृष्टि से सही नहीं हैं। इनके बारे में यह किंवदन्ती है कि अज्ञातवास के समय जब कौरवों के गुप्तचर, पांडवों को खोज रहे थे तब अर्जुन ने अभिमंत्रित भर्रू घास के शस्त्र देकर इन्हें गुप्तचरों से लड़ने हेतु भेजा था। इसमें इन्होंने विजय प्राप्त की और तब से इन्हें भारिया नाम से पुकारा जाने लगा।

पिछले पच्चीस वर्षों से मध्यप्रदेश सरकार ने इस क्षेत्र की उन्नति के लिए लगातार प्रयास किये हैं। फिर भी इनकी स्थिति में कोई विशेष अन्तर नहीं आया है। यहाँ तक पूरे पातालकोट क्षेत्र को विशेष पिछड़ा क्षेत्र घोषित कर दिया गया है।

पातालकोट में रह रहे कुल 250 भारिया परिवारों में से केवल 185 परिवारों के पास ही खेती करने के लिए भूमि है। पातालकोट की कृषि आदिम स्थायी कृषि है। कुल खेती योग्य भूमि में 95 प्रतिशत खरीफ फसलें होती हैं। प्रमुख फसलें धान, कोदो और कुटकी होती हैं। इन फसलों की कटाई अक्टूबर तक हो जाती है। रबी की फसल यहाँ नहीं होती है किन्तु घर के आसपास के खाली क्षेत्र में चना बो लिया जाता है। आदिवासियों के अनुसार चने की यह छोटी फसल भी कष्टदायक होती है क्योंकि पातालकोट में बंदरों का उत्पात बहुत है और मौका पाते ही वे फसल को तबाह कर देते हैं। गेहूँ भी बोया जाता है पर उसका उत्पादन कोई खास नहीं है। पातालकोट में गेहूँ और चना ही नकद फसलें हैं क्योंकि भारिया लोग इस पूरे उत्पाद को बेच देते हैं ताकि कुछ नकद पैसा मिले जिससे वे दूसरी जरूरत की वस्तुएँ खरीद सकें।

पातालकोट में पशुपालन का कार्य नगण्य है। कृषि के साथ ही खेतों में मजदूरी करना इनका प्रमुख कार्य है। पातालकोट के आसपास गोंडों के खेत फैले हुए हैं। भारिया पातालकोट से आकर इनके खेतों में भी काम करते हैं। अनुमान भारिया गोंडों के खेतों में 60-70 दिनों से अधिक काम नहीं करते। शासकीय निर्माण कार्यों में भी वे मजदूरी का काम कर लेते हैं। इसी प्रकार कभी-कभी वन विभाग के कार्यों में भी उन्हें काम मिल जाता है।

प्रश्न–4. सहरिया जनजाति पर टिप्पणी लिखिए।

उत्तर– सहरिया– 1971 की जनगणना के अनुसार इनकी संख्या 23, 299 अर्थात् राज्य की कुल आदिवासी जनसंख्या का 0.99 प्रतिशत थी। अधिकांशतया ये कोटा, झालावाड़, उदयपुर, जयपुर, भरतपुर तथा चूरू जिलों में पाये जाते हैं। कोटा जिले की

शाहाबाद और किशनगंज तहसीलों में इनकी संख्या सर्वाधिक है। अनुसूचित जनजाति कमीशन ने सहरिया लोगों को "अत्यन्त अल्प-विकसित स्थिति" वाली जनजातियों की सूची में रखा है। इन लोगों की हिन्दू-धर्म में आस्था है। समस्त आदिवासी समूहों में ये लोग सर्वाधिक पिछड़ी हुई स्थिति में हैं। इन लोगों में साक्षरता नहीं के बराबर है।

इनके गोत्र वैवाहिक दृष्टि से महत्वपूर्ण माने जाते हैं। स्त्री व पुरुष अपने गोत्र के अतिरिक्त दो अन्य गोत्रों में विवाह नहीं कर सकते। ये गोत्र हैं–

(1) अपनी माँ का गोत्र, तथा

(2) अपने पिता की माँ का गोत्र।

इनके गोत्र या तो गाँवों के नामों से अथवा राजपूतों के गोत्रों के नामों से जाने जाते हैं। ये लोग यद्यपि नियमित विवाह को अधिक पसन्द करते हैं, फिर इनमें नाता-प्रथा का चलन भी है। नाता में पुरुष स्त्री की स्वीकृति से उसे भगाकर ले जाता है परन्तु वह स्त्री उपरोक्त तीनों गोत्रों में से नहीं होनी चाहिये। तो यह विवाह नियमित कर दिया जाता है। ये लोग साधारणतया एक ही गाँव में विवाह नहीं करते हैं।

सहरिया लोगों के गाँव दो प्रकार के होते हैं– सघन तथा बिखरे हुए। सघन गाँवों में एक छतरीनुमा मकान होता है जिसे ये लोग "बंगला" नाम से सम्बोधित करते हैं। इस मकान में जनजाति-सम्बन्धी ग्रामीण स्तर के मनोरंजन कार्य होते हैं। इनमें स्त्रियों का प्रवेश निषिद्ध माना जाता है। औरतों का कार्य-क्षेत्र अधिकांशतः पारिवारिक क्रियाकलापों तक ही सीमित रहता है। ग्रामीण स्तर पर कुछ व्यक्ति पंच का कार्य करते हैं। सर्वाधिक प्रभावी व्यक्ति कोतवाल के नाम से जाना जाता है। कोतवाल का स्थान वंशानुगत होता है। किन्तु उसके अकुशल होने अथवा बड़े अपराध करने पर उसे हटाया भी जा सकता है और प्रभावशाली व्यक्ति मिलकर नये कोतवाल की नियुक्ति कर सकते हैं। इन गाँवों में स्वंतत्रता से पूर्व कोतवाल का पद एक सरकारी पद था। इसका काम मेवाड़ राज्य में नम्बरदारों की तरह पटवारी को भूमि-कर के संकलन में सहायता देना था। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् यद्यपि कोतवाल का पद नहीं रहा, किन्तु वर्तमान में भी वह उसी प्रकार गाँव के सामाजिक जीवन में नेतृत्व प्रदान करता है।

प्रश्न–5. कोरकू जनजाति पर एक निबंध लिखिये।

अथवा

कोरकू जनजाति के जीवन का विवेचन कीजिये।

अथवा

कोरकू जनजाति के लोगों में विवाह, पर्व एवं त्यौहार पर प्रकाश डालिये।

अथवा

कोरकू जनजाति के पारिवारिक एवं वैवाहिक संगठन की विवेचना कीजिये।

अथवा

मध्य प्रदेश की कोरकू जनजाति के सामाजिक संगठन पर प्रकाश डालिये।

उत्तर– मध्य प्रदेश को आदिम जनजातियों का अजायबघर कहा जाता है। फारसिस ने अपनी रिपोर्ट में बताया है कि "निमाड़ पूर्वी तथा पश्चिमी भारत की आदिवासी जातियों का

संगठन बन गया है उन्होंने सात आदिवासी जातियों के अस्तित्व का उल्लेख किया है। जिन जातियों के लोग उन्हें मिले, उनमें से प्रमुख हैं– भील, भिलाला, कोरकू और गोंड।'' कोरकू जनजाति के लोग प्रमुखतः पूर्वी निमाड़, होशंगाबाद, बैतूल, तथा छिन्दवाड़ा जिलों में पाये जाते हैं। इस जनजाति के लोग जंगलों में ऊँची पहाड़ियों पर बसना पसन्द करते हैं। इनके गाँव बहुत छोटे होते हैं। एक गाँव में सामान्यतः 20 से 25 झोंपड़ियाँ पाई जाती हैं। ये लोग झोंपड़ियों के निर्माण में लकड़ी, बाँस, घास–फूस, बल्लियों तथा गोबर मिट्टी आदि का प्रयोग करते हैं। इनकी झोंपड़ियों में चारपाई नहीं बल्कि छोटी–छोटी चौकियाँ पाई जाती हैं। इन लोगों के रहने के स्थान को कोरकू ढाना कहते हैं। कोरकूओं का रंग काला, नाक चौड़ी, नथुने फूले हुये, आँखें काली, उलझे हुये बाल, होंठ तथा कूल्हे चौड़े होते हैं। इनमें स्त्रियों का चेहरा सुडौल होता है। परन्तु उनका रंग काला ही होता है।

कोरकू लोग जंगली जीवन व्यतीत करने के बाद भी अपने आप को आदिम की संज्ञा देते हैं। इसका प्रमुख कारण यह है कि कोरकू पुरुष बोली में कोर शब्द का आशय आदमी है तथा कू लगने से यह आदमियों का समूह कहलाता है। कोरकू पुरुष धोती, बंडी और सिर पर अंगोछा पहनते हैं। इनमें महिलायें लूंगड़ा एवं चोली पहनती हैं। लेकिन इनमें अब कुछ परिवर्तन आया है, क्योंकि अब इनमें नये–नये वस्त्रों एवं जूते–चप्पलों का प्रचलन भी होने लगा है। कोरकू अपने दिन–प्रतिदिन के जीवन में कोरकू बोली का प्रयोग करते हैं जिसे वे कोरो–माण्डी या कोरो पारसी कहते हैं। इस जनजाति के लोगों की बोली आस्ट्रिक परिवार की 'मुण्डा' और 'हो' जाति की बोली से मिलती है। कोरकू बोली को उस समय तक नहीं समझा जा सकता है जब तक कि उसमें प्रयुक्त होने वाले शब्दों का अर्थ नहीं जान लिया जाये। कोरकूओं में मुख्य रूप से चार जातियाँ पायी जाती हैं। जैसे– रूमा, पोतड्या, ढुलारया, वोण्डई आदि। जाति के आधार पर कोरकू गण निर्धारित है, पहला कोरो, दूसरा राक्षस, तीसरा सराकू एवं चौथा बनाना। ये चारों गण स्वभाव के आधार पर बँटे हुये हैं।

कोरकू जनजाति में गोत्र को विशेष महत्व दिया जाता है। अपने गोत्र के प्रति कोरकू बहुत अधिक श्रद्धा रखते हैं। इनमें 36 गोत्र पाये जाते हैं। और इनमें से प्रत्येक गोत्र का एक टोटम या प्रतीक–चिन्ह होता है। ये पशु–पक्षियों या पेड़–पौधों के रूप में होते हैं। इनमें से इनके गोत्र कुछ निम्नलिखित हैं– जैसे कांसडी, कारुडा, काजल्या, कासल, दर्शिमा, बेड़े, मावसी आदि जो कि पेड़–पौधों या पशु–पक्षियों पर आधारित हैं। कोरकू लोग अपने गोत्र–चिन्हों को अपने घरों की दीवारों पर चित्रित करते हैं और अपने शरीर पर भी गुदवाते हैं। गोत्र–चिन्हों के दिख जाने पर ये उन्हें प्रणाम करते हैं और ये लोग गोत्र–चिन्हों से सम्बन्धित पशु–पक्षियों का माँस नहीं खाते हैं।

कोरकू लोगों में पुरुष की स्थिति सबसे ऊँची होती है। वह घर का और समाज का मुखिया होता है। इन लोगों में समझदार महिलाओं को विशेष महत्व दिया जाता है। कोरकू लोगों में स्त्री–पुरुष दोनों को ही बराबर माना जाता है। कोरकू लोगों में सभी स्त्री–पुरुष सीडू (महुआ की शराब) पीते हैं। प्रत्येक त्यौहार, उत्सव, नृत्य–गान और यहाँ तक की मृत्यु के अवसर पर भी सीडू पिलाई जाती है।

कोरकूओं में विवाह– कोरकुओं में एक गोत्र के लोगों में आपस में विवाह नहीं होता है। इनमें वधू मूल्य अर्थात् गोनोम प्रथा पाई जाती है। विवाह के समय कोरकू लड़की की उम्र 14–15 वर्ष तथा लड़के की उम्र 17–18 वर्ष की होती है। कोरकूओं में विवाह की निम्नलिखित प्रथायें प्रचलित हैं –

(i) चिथोड़ा प्रथा– चिथोड़ा लड़की वाले पक्ष की ओर से मध्यस्थ होते हैं। ये मध्यस्थ ही पूरे विवाह के लिये जिम्मेदार होते हैं क्योंकि ये ही किसी दिन लड़की वाले के यहाँ जाकर विवाह की बात–चीत करते हैं और यदि लड़की वाले को विवाह का प्रस्ताव मंजूर होता है तो वह सीडआनी कहता है जिसका अर्थ होता है कि तुम शराब के लिये आमंत्रित हो। इसी प्रकार यदि लड़के वाले को यदि विवाह का प्रस्ताव मंजूर है तो उसके द्वारा पाँच मन अनाज लड़की वाले के यहाँ भेंट–स्वरूप भेजा जाता है। इनमें विवाह के अवसर पर भोज होता है और स्त्रियाँ नृत्य करती हैं। इनमें वधू–मूल्य पंचों के द्वारा निर्धारित किया जाता है जो सामान्यतः सात या आठ सौ रुपये या एक बैल तथा दस मन अनाज होता है।

(ii) लमझना प्रथा– कोरकू लोगों में लमझना प्रथा से विवाह अधिक प्रचलित है। इसमें विवाह के लिये उत्सुक लड़का घरजंवाई के रूप में बारह वर्ष तक लड़की के माता–पिता की सेवा करता है, जंगल से रोज लकड़ियाँ काटकर लाता है। यह प्रथा गरीब कोरकूओं में अधिक प्रचलित होती है। लमझना की योग्यता इस बात से लगाई जाती है कि वह एक वर्ष की अवधि में लड़की को गर्भवती कर पाता है या नहीं। यदि वह ऐसा नहीं कर पाता है तो लड़की के माता–पिता उसके स्थान पर दूसरा लमझना रख लेते हैं।

(iii) राजी–बाजी या प्रेम विवाह– कोरकू जनजाति में इस प्रकार के विवाह भी प्रचलित हैं। नौजवान लड़के–लड़कियाँ अपना प्रेम हाट–बाजारों में या किसी मेले के अवसर पर प्रकट करते हैं तथा ये दोनों अपने किसी रिश्तेदार के यहाँ भागकर 10–15 दिन रूकते हैं। उसके बाद इनके घर वाले इन्हें ढूंढते हुये इनके पास पहुँच जाते हैं और यह मामला पंचायत के सामने प्रस्तुत किया जाता है। यदि लड़की–लड़के के साथ राजी–बाजी के साथ गई हो तो इसे अपराध के रूप में स्वीकार नहीं किया जाता है परन्तु फिर भी पंचायत के द्वारा वधू–मूल्य तय किया जाता है और यदि इसे लड़का पक्ष चुका देता है तो उस लड़की का विवाह उस लड़के के साथ सम्पन्न करा दिया जाता है।

तलाक– कोरकुओं में तलाक एक आम घटना है। यदि गृहस्थ स्त्री का चाल–चलन ठीक न हो तो पति उसे छोड़ सकता है। और यदि पत्नी अपने पति से असंतुष्ट है तो वह किसी दूसरे पुरुष के साथ रह सकती है। ऐसी दशा में इनमें पहले पति को झगड़ा देने का रिवाज है। झगड़ा एक प्रकार का आर्थिक दण्ड है जो पंचायत तय करती है। कोई भी कोरकू एक समय में एक से अधिक पत्नियाँ रख सकता है।

कोरकू के पर्व–त्यौहार– कोरकू लोग भोजन के रूप में कोदो, कुटकी, सांवा, रालया, भादल्या एवं बाजरा आदि खाते हैं। कठिन जीवन एवं अभाव होने के बाद भी ये लोग होली–दीवाली के अवसर पर बिना नाच–गाने के नहीं रह सकते हैं। इनके नृत्य–गीत, तीज–त्यौहार आदि इनके कष्टदायक क्षणों को कम कर देते हैं। इस प्रकार इन्हें अपनी संस्कृति पर गर्व है। इन लोगों का प्रत्येक त्यौहार पड़वा या दूज को ही मनाया जाता है और अमावस्या को ये लोग

बहुत पवित्र मानते हैं। इस दिन माँस, शराब और शिकार पर पूर्ण रूप से प्रतिबन्ध रहता है। ये लोग जेठ में डोडवली, सावन में जिरोती, नागपंचमी और राखी, भादों में पोला, कुंआर में देव दशहरा, कार्तिक में दीवाली, माघ में दशहरा तथा फागुन में होली मनाते हैं। प्रत्येक पर्व या त्यौहार के अवसर पर ये लोग बहुत अधिक नृत्य-गान करते हैं, और सीडू का प्रयोग करते हैं। कोरकू लोग सभी त्यौहार बहुत प्रेम-पूर्वक मनाते हैं। ये लोग बहुत ही शान्तिप्रिय स्वभाव के होते हैं क्योंकि इनमें लड़ाई-झगड़े बहुत ही कम होते हैं।

कोरकू लोग सामान्यतः शव को दफनाते हैं और कहीं-कहीं पर जलाते भी हैं। मरने वाले के परिवार की सुविधा को ध्यान में रखते हुये पंचायत किसी भी सोमवार को तीजा तय करती है। तीजा के समय मृत्यु-भोज होता है। तीजा के निमंत्रण में आने वाला प्रत्येक कोरकू एक पाव अनाज और थोड़ी-सी मिर्ची लाता है। क्योंकि कोरकुओं का मानना है कि मृतक कुछ दिनों के बाद देव-पितर में शामिल हो जाता है।

कोरकुओं में मृत्यु-भोज के दूसरे दिन मृतक की समाधि पर लकड़ी का एक स्तम्भ लगाने का रिवाज है जिसे ये मण्डा या मण्डो कहते हैं। मण्डो लकड़ी या पत्थर किसी के भी हो सकते हैं। मण्डो पर नीचे मानव की आकृति होती है जिसके दोनों हाथ खुले होते हैं। दूसरी आकृति एक घुड़सवार की होती है जिसका अर्थ यह है कि पितृ अच्छे कर्म करने से स्वर्ग में जा रहा है। मण्डो को चारों ओर बेल-बूटों से सजाया जाता है।

प्रश्न-6. मध्य प्रदेश की विशेष पिछड़ी जनजातियों के बारे में विस्तार से बताइये।

अथवा

मध्य प्रदेश की प्रमुख जनजातियों की विवेचना कीजिये।

अथवा

मध्य प्रदेश की प्रमुख जनजातियों पर एक निबंध लिखिये।

अथवा

संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिये- (1) बैगा (2) भारिया (3) सहरिया।

उत्तर- भारत देश में मध्य प्रदेश एक ऐसा राज्य है जहाँ पर जनजातीय जनसंख्या सबसे अधिक पाई जाती है। मध्यप्रदेश की कुल जनसंख्या का 23.27 प्रतिशत भाग जनजातियों से निर्मित है। इस राज्य में 46 जनजातियाँ पाई जाती हैं। जनसंख्या की दृष्टि से यहाँ की दो मुख्य जनजातियाँ गोंड एवं भील हैं। मध्य प्रदेश में निवास करने वाले गोंड, कोल तथा भील जनजातीय समूहों की कुछ क्षेत्रीय शाखायें अल्पविकसित रह गई हैं। ये जनजातियाँ अपने परम्परागत उद्योग-धन्धों से ही अपना जीवन-यापन करती रही हैं। मध्य प्रदेश में विशेष रूप से पिछड़ी जनजातियाँ है इसलिये भारत सरकार ने इन्हें विशेष पिछड़ी जनजातियों की श्रेणी में रखा है। इस श्रेणी में आने वाली जन-जातियाँ निम्नलिखित हैं-

(1) बैगा जनजाति- बैगा जनजाति के मध्य प्रदेश के मण्डला, शहडोल तथा बालाघाट जिलों में पाये जाते हैं। मण्डला क्षेत्र में बैगाओं का एक छोटा समूह भूरिया बैगा कहलाता है। ये लोग हिन्दू देवताओं की पूजा करते हैं। बैगा लोग सिर के बाल नहीं कटवाते बल्कि उन बालों को इकट्ठा करके चोटी बना ली जाती है। ये लोग वर्ष भर में कुछ विशेष अवसरों पर ही स्नान करते हैं। बैगा युवतियाँ अपनी शारीरिक बनावट की दृष्टि से आकर्षक होती हैं।

बैगा लोग घने जंगलों में रहते हैं। इनके गाँव छोटे होते हैं। इनके घर खपरैल के स्थान पर घास-फूस के बने होते हैं। प्रत्येक गाँव में बाहर से आने वाले लोगों के ठहराने के लिये एक अलग स्थान बना होता है जिसे चट्टी कहा जाता है। बैगा लोग माँस, मोटे अनाज तथा कन्दमूल फलों का सेवन करते हैं। इसके अलावा ये लोग शिकार द्वारा जंगल के पशुओं का माँस प्राप्त करते हैं। अनाजों में लोग ज्वार-बाजरा, मक्का आदि का प्रयोग करते हैं। ये लोग बहुत ही कम वस्त्र पहनते हैं। कमर में ये लोग धोती की एक छोटी-सी लंगोटी लगाते हैं तथा इनकी स्त्रियाँ छोटी धोती पहनती हैं जिसका एक छोर सीने के ऊपर डाल लिया जाता है। बैगा लोगों की स्त्रियाँ आभूषणों की बहुत अधिक शौकीन होती हैं। ये गहने किसी सस्ती धातु के बने होते हैं।

घने जंगलों में रहने के कारण ये लोग अपनी रक्षा एवं शिकार के लिये धनुष-बाण का प्रयोग करते हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण रूप से बैगा जन-जातियों के लोगों का जीवन बहुत ही सादगीपूर्ण होता है। ये लोग खेती करके, मजदूरी करके और वनों से वस्तुयें एकत्रित करके जो कुछ कमाते हैं उसका आधे से अधिक भाग उनके भोजन पर खर्च हो जाता है। बैगा लोगों को शादी के अवसर पर या घर में किसी के मर जाने पर इन्हें कर्जा लेने के लिये मजबूर होना पड़ता है। इस प्रकार साहूकारों के द्वारा इनका बहुत अधिक शोषण किया जाता है। इनकी आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिये सरकार मुफ्त बीज, जमीन तथा इनको पशु देने की योजना को क्रियान्वित कर रही है। इसका प्रमुख उद्देश्य इनकी गरीबी को समाप्त करना है।

(2) भारिया जनजाति- भारिया जनजाति मध्य प्रदेश के छिन्दवाड़ा सिवनी, मण्डला तथा सरगुजा जिले में पाई जाती है। इस जनजाति का एक छोटा समूह छिन्दवाड़ा जिले के पातालकोट नामक स्थान पर बहुत समय पहले से रह रहा है। यही कारण है कि यह क्षेत्र बिल्कुल अलग-थलग पड़ गया है जिनका बाहर की दुनिया से कोई लेना-देना नहीं है। पाताल कोट की लगभग 90% जनसंख्या भारिया जनजाति की है तथा शेष 10% जनसंख्या अन्य जनजाति की है। पातालकोट छिन्दवाड़ा जिले के उत्तरी भाग में स्थित है। यहाँ घने वनों की अधिकता होने से वर्षा बहुत अधिक होती है इसलिये इस क्षेत्र में औषधि उपयोगी वनस्पतियाँ बहुत अधिक पाई जाती हैं। इस क्षेत्र में नीलगाय, भालू, चिंकारा और खरगोश अधिक पाये जाते हैं।

पातालकोट क्षेत्र में लगभग दो सौ पचास परिवार निवास करते हैं। इस क्षेत्र की कृषि आदिम स्थायी कृषि है। यहाँ की प्रमुख फसलें धान, कोदों और कुटकी है इसके अलावा कहीं-कहीं पर गेहूँ की भी खेती की जाती है, जो कि न के बराबर है। भारिया जनजाति के लोग कृषि के अलावा अन्य लोगों के खेतों में मजदूरी भी करते हैं। भारिया जनजाति के लोग बहुत अधिक पिछड़े हुये हैं। इसलिये अभाव की स्थिति में अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं। ये लोग अपनी जीविका चलाने के लिये जंगलों से कन्दमूल फल, शहद-कोसेका कीड़ा, जलाऊ लकड़ी, बाँस, जड़ी-बूटियाँ, महुआ, चिरौंजी, देवबुहारी, अचार, आँवला आदि प्राप्त कर लेते हैं। जिन्हें बेचकर यह कुछ हद तक अपना जीवन सरलता से व्यतीत कर लेते हैं।

(3) सहरिया जनजाति- सहरिया का अर्थ है शेर के साथ रहने वाला। इस जनजाति का विस्तार क्षेत्र मध्यप्रदेश के उत्तरी-पश्चिमी जिलों में है। आज वर्तमान समय में इनकी

जनसंख्या तीन लाख से कुछ अधिक है। इस जनजाति के लोग ग्वालियर तथा चम्बल संभाग के जिलों में प्रमुख रूप से पाये जाते हैं। इन जिलों में इस जनजाति के लोगों की 84% जनसंख्या निवास करती है। सहरियों का निवास-क्षेत्र वनों से ढँका हुआ था एवं यह जनजाति शिकार और संचयन से अपनी आजीविका चलाती थी, लेकिन अब अधिकांश सहरिया या तो छोटे किसान हैं या मजदूरों के रूप में काम करते हैं। इन लोगों का रहन-सहन तथा मान्यतायें आस-पास के अन्य हिन्दुओं के समान ही हैं इनमें शरीर पर गोदने गुदाने की परम्परा पाई जाती है। गरीबी के कारण अधिकांश सहरिया लोग मोटे अनाज और माँस का प्रयोग करते है, इनमें शराब का प्रयोग बहुत अधिक होता है। सहरिया लोगों में क्षयरोग सामान्य लोगों की तुलना में बहुत अधिक पाया जाता है।

प्रश्न-7. बैगा जनजाति के सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक जीवन का वर्णन कीजिये।

अथवा

बैगा जनजाति पर एक विस्तृत लेख/निबंध लिखिए।

उत्तर- बैगा आदिवासी जाति एक द्रविड़ समूह की आदिम जनजाति है। इसकी प्रमुख, सात शाखाएं बिंझवार, भारोतिया, नरोतिया, रायमैना, कठमैना, कोंडमान तथा गोंड मैना हैं।

यह एक अत्यधिक पिछड़ी जनजाति है। यह जनजाति मध्यप्रदेश के बालाघाट, मंडला, पूर्वी सतपुड़ा तथा रीवा आदि जिलों में अधिकांशतः पाई जाती है। बैगा लोगों को हिन्दू पुरोहितों के समकक्ष ही स्थान प्राप्त है। ये हिन्दू देवताओं को ही पूजते हैं। बैगाओं द्वारा किया गया जमीन सम्बन्धी विवाद का निपटारा गोंडों को भी मान्य होता है। मध्यप्रदेश की जनजाति को बाद में आये गोंडो ने 'बैगा' कहा। छोटा नागपुर से सर्वप्रथम बैगाओं ने ही छत्तीसगढ़ में प्रवेश किया। बाद में इस जनजाति को मंडला तथा बालाघाट के दुर्गम वनों में खदेड़ दिया गया। वनों में रहने वाले बैगाओं (जिनका रहन-सहन अभी भी पुराना है) की तुलना बस्तर के माड़िया लोगों से की जाती है। मंडला के बैगा लोगों को कुछ जगहों पर भूमिया भी कहते हैं।

(1) बैगा समाज- सामाजिक दृष्टिकोण से बैगा समाज गोंडों के समान ही है। इनमें विधवा विवाह की प्रथा पाई जाती है। साल का वृक्ष इनके लिए पूजनीय होता है। क्योंकि बैगा समाज का मानना है कि इसमें 'बड़ा देव' का निवास रहता है। इनके देवता बागेश्वरी तथा नागवंशी एक बोतल शराब तथा सुअर से प्रसन्न होते हैं ऐसी इनकी मान्यता है। बिंझवारों का पूरी तरह से हिन्दूकरण हो गया है और वे गोमाँस नहीं खाते। बिंझवार और नरोतिया में रोटी-बेटी का सम्बन्ध प्रचलित है पर इनमें अलग-अलग जगहों में परिवर्तन पाये जाते हैं, जैसे कवर्धा जिले में उक्त तीनों शाखाओं में विवाह तो हो सकता है लेकिन साथ में भोजन करने की मनाही है। बालाघाट में इस प्रकार का कोई प्रतिबंध नहीं है। हालांकि गोंड तथा बैगा साथ-साथ वन में रहते हैं, फिर भी गोंडों में द्रविड़ विशेषताएँ और बैगाओं में मुंडा विशेषताएँ पाई जाती हैं।

(2) अधिवास- बैगा जनजाति के लोग घने जंगलों में रहने के अभ्यस्त होते हैं। इनके गाँव छोटे-छोटे होते हैं। अंग्रेजों द्वारा बड़े गाँव बनाये गये थे, उनकी जनसंख्या एक हजार या

इससे भी ज्यादा होती थी। अंग्रेजों का इनको बसाये जाने का प्रमुख उद्देश्य यह था कि उन्हें जंगल कटवाने के लिए फ्री की लेबर मिल जाती थी।

बैगा जनजाति के लोगों का मकान 8 फुट से 13 फुट तक चौड़ा और 20 से 30 फुट तक लम्बा होता है। इनकी दीवारें बाँस की बनी होती हैं जिन पर मिट्टी का प्लास्तर लेप दिया जाता है। इनके मकानों में खिड़कियाँ नहीं होती हैं। ये लोग अपने मकान एक-दूसरे के मकान से सटाकर बनाते हैं। इनकी छत में खपरैल के स्थान पर घास-फूस का इस्तेमाल किया जाता है। ये मकान चौराई भूमि पर बनाये जाते हैं और इन्हें बाँस अथवा केतकी की बाड़ी से घेर दिया जाता है। गाँव की सीमा को बहुत साफ रखा जाता है। गाँव की सीमा के बाहर श्मशान और इसके पास तांत्रिक क्रिया करने का स्थान भी होता है।

(3) वेशभूषा- बैगा पुरुष अपने शरीर पर लंगोटी बाँधते हैं और सिर के ऊपर एक कपड़ा वस्तु के रूप में धारण करते हैं। बैगा स्त्रियाँ धोती बाँधती हैं और जरूरत पड़ने पर अपने छोटे बच्चों को भी उसी में बाँध लेती हैं।

(4) अर्थव्यवस्था- आज भी बैगा जनजाति की अर्थव्यवस्था वनों तथा पौधों पर ही आश्रित है। बैगा लोग पहले स्थानान्तरित कृषि करते थे, पर सरकार द्वारा स्थानान्तरित कृषि पर रोक लगाये जाने से स्थानान्तरित कृषि अब समाप्तप्राय हो गयी है। कुछ क्षेत्रों में जैसे- शहडोल, मंडला, गढ़ी एवं सीधी आदि में स्थानान्तरित कृषि की अनुमति है। बैगा लोग जंगलों पर अपना अधिकार समझते हैं तथा जंगलों से अपनी जरूरत की वस्तुएँ एकत्र करने को सही मानते हैं। ये शिकार भी करते हैं। बैगा धनुर्विधा में भी निपुण होते हैं। ये लोग जंगलों से अनेक वस्तुएँ एकत्र करते हैं और इन वस्तुओं को बाजार में लाकर इनके बदले नमक, मिर्च, कौड़ी एवं शराब खरीदते हैं। ये अशिक्षित होते हैं।

लघुउत्तरीय प्रश्नोत्तर-

प्रश्न-(1) सहरिया जनजाति का सामान्य परिचय दीजिए।

उत्तर- सामान्य परिचय- सहरिया का शाब्दिक अर्थ- स-सहचर + हरिया - शेर अर्थात् 'शेर का सहचर' हैं। कनिंघम ने सहरिया जनजाति को सवर, सहरा, सौरो नाम से पुकारा है। यह कोलेरियन समूह की जनजाति है। एक किंवदंती के अनुसार- सहरिया ब्रह्माजी द्वारा रचित प्रथम मनुष्य हैं। सहरिया अपना मूल स्थान शाहबाद का जंगल, बारां (राजस्थान) को मानते हैं। सहरिया अपना पितृपुरुष महर्षि वाल्मिकी जी को मानते हैं। सहरिया जनजाति का विस्तार मुख्यतः ग्वालियर, शिवपुरी, गुना, दतिया, श्योपुर, मुरैना, भिंड, अशोकनगर तथा आंशिक रूप से सागर, दमोह, टीकमगढ़ व छतरपुर जिलों में पाया जाता है। इसके अतिरिक्त राजस्थान व उत्तरप्रदेश के सीमावर्ती जिलों में भी ये पाये जाते हैं। उत्तरप्रदेश में सहरिया अनुसूचित जाति वर्ग में आते हैं। समतल क्षेत्र पर इनके निवास स्थान को 'सहराना' कहते हैं। घासफूस से बने इस मकान को 'टापरी' कहते हैं। सहरियाओं की बसाहट उल्टे यू आकार में तीन ओर से घिरी होती है। बसाहट के बीच में एक अतिथिगृह होता है जिसे बंगला कहते हैं।

सामाजिक जीवन- सहरियों में पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था पाई जाती है। इनमें एकल परिवार का प्रचलन है। इनमें 97 प्रकार के गोत्र होते हैं और ये गोत्र टोटम पर आधारित रहते हैं। संगोत्रियों को सहोदर कहा जाता है। खानपान में ये ज्वार, बाजरा, मक्का

तथा मांसाहार का सेवन करते हैं। गर्भवती स्त्रियों हेतु अनेक निषेध हैं– जैसे शमसान घाट, कुँआ व नदीघाट आदि पर जाने की मनाही है। शिशु जन्म पर बहिन को विशेष रूप से आमंत्रित किया जाता है।

आर्थिक जीवन– इनका मुख्य कार्य वनोत्पाद एकत्र करना और कृषि है। ये जंगल से जड़ी–बूटियों का संग्रहण करते हैं। सहरिया लोग जड़ी–बूटियों के बहुत पारखी होते हैं।

प्रश्न–(2) भील जनजाति की उत्पत्ति लिखिये।

उत्तर– भील जनजाति के प्राचीन इतिहास के बारे में विस्तृत जानकारी का अभाव है। इन्हें भारत की प्राचीनतम जनजातियों में गिना जाता है। संस्कृत साहित्य में 'निषाद' जाति का उल्लेख मिलता है जिसका समीकरण भील जनजाति से ही स्थापित किया जाता है। ऐसा माना जाता है कि महर्षि बाल्मीकि भील ही थे भीलों की उत्पत्ति को लेकर अनेक पौराणिक कथायें मिलती हैं। एक कथा के अनुसार भील महादेव की संतान हैं। महादेव को एक वन बाला से प्रेम हो गया। दोनों की कई सन्तान हुई जिनमें से एक सन्तान काली और कुरूप थी जिसने महादेव के बैल नन्दी की हत्या कर दी। अतः उसे बहिष्कृत कर दिया गया। इस बहिष्कृत व्यक्ति की संताने ही आगे जाकर भील कहलाई। भील शब्द की उत्पत्ति द्रविड़ शब्द 'बिल' या 'बील' से मानी जाती है जिसका अर्थ है 'धनुष'। संस्कृत में कहा गया है कि 'भिदंति इति भिल्ला' अर्थात् 'भेदने वाला भील है।' धनुषवाण धारण करने के कारण ही इन्हें भील कहा गया।

प्रश्न–(3) सहरिया जनजाति पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

उत्तर– सहरिया (कोलेरिया) एक अत्यन्त पिछड़ी जनजाति है जो मध्यप्रदेश के शिवपुरी, गुना, ग्वालियर, विदिशा, मुरैना तथा बुंदेलखंड में निवास करती है। इन्हें शासन द्वारा अत्यन्त पिछड़ी जनजाति घोषित किया गया है और उनके उत्थान हेतु सरकार द्वारा एक अभिकरण का गठन किया गया है।

सहरिया अपने आपको भीलों का छोटा भाई कहलाना पसंद करते हैं। प्रचलित धारणा के अनुसार सहरिया शब्द की उत्पत्ति सह + हरिया से हुई है जिसका अर्थ है– शेर के साथ होना।

(1) **निवास–** सहरिया अपने जंगल में कतारबद्ध मकानों के समूह में रहते हैं जिसे सहाराना कहते हैं। फारसी भाषा में शहर का अर्थ जंगल होता है। चूँकि ये लोग जंगल में निवास करते हैं इसलिए इन्हें सहरिया कहते हैं।

(2) **सामाजिक व्यवस्था–** इनमें विवाह सम्बन्धी कठोर नियम नहीं होता। तलाक तथा विधवा विवाह को इनमें मान्यता प्राप्त है। अपनी पारिवारिक इकाई को ये कुटुम्ब कहते हैं। सहरिया लोग जंगली जड़ी–बूटियों की विशिष्ट पहचान रखते हैं। प्रत्येक मौसम में सहरिया लोग जंगलों में जड़ी–बूटियों का संग्रह करते हैं। जिनसे ये दवाईयाँ बनाते हैं। प्रायः यह भूमिहीन होते हैं। उनकी आर्थिक स्थिति कमजोर होती है। अधिकांश परिवार ऋणग्रस्त होते हैं।

(3) **सांस्कृतिक विशेषता–** सहरिया जनजाति कला एवं संस्कृति से परिपूर्ण जनजाति है। ये लोग हिन्दू देवी–देवताओं को मानते हैं। सहरिया लोगों के प्रमुख हिन्दू पर्व–त्यौहार जैसे– दशहरा, दिवाली, देवउठनी ग्यारस, होली आदि हैं।

प्रश्न–(4) युवा संगठन 'गोटुल' क्या है?

अथवा

युवागृह पर एक टिप्पणी लिखिये।

उत्तर– गोंड जनजाति में पाये जाने वाले युवा–गृह को 'गोटुल' कहते हैं। घोटुल एक बड़ा घर होता है, जो गाँव से थोड़ी दूरी पर बना होता है, जहाँ रात को कुँआरे लड़के और लड़कियाँ रहते हैं। वे यहाँ नाचते, गाते और सोते हैं। गोटुल में रहने वाले लड़कों को 'चेलिक' तथा लड़कियों को 'मोटियारी' कहा जाता है। घोटुल का मुखिया 'सिरदार' अथवा सिलेदार कहलाता है। वह झगड़ों को निपटाता है तथा नृत्य–दल का नेतृत्व करता है। गोटुल का मुख्य उद्देश्य यौन–इच्छाओं को सही दिशा प्रदान करना है। यह विवाह की समस्या का समाधान भी करता है। यहाँ लड़के, लड़कियाँ अपने जीवन–साथी का चुनाव करते हैं। गोटुल के सदस्य कृषि, नृत्य, विवाह–उत्सव तथा दावत में सहयोग प्रदान करते हैं। गोटुल अपने सदस्यों की सामाजिक आदत तथा विवाह के पश्चात् के व्यवहार को तय करता है। यह सदस्यों पर नियंत्रण रखता है तथा उन्हें अपने सामाजिक और आर्थिक दायित्वों का निर्वाह करने को तैयार करता है। मोरिया एवं गोंड जनजाति के गोटुल में विवाहित व्यक्ति भी सोते हैं।

प्रश्न–(5) 'भगोरिया' पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।

अथवा

'भगोरिया हाट' का संक्षेप में वर्णन कीजिये।

उत्तर– भगोरिया होली के पहले लगने वाली एक विशेष प्रकार की हाट है। इस हाट के एक सप्ताह पहले एक अन्य हाट भी लगती है जिसे तेवरिया हाट कहते हैं। इस हाट में इन लोगों को अपनी आवश्यकता की सभी वस्तुयें मिल जाती हैं। भगोरिया हाट के दिन किसी भी वस्तु को खरीदा या बेचा नहीं जाता है। इस अवसर पर भिलाला जनजाति के स्त्री–पुरुष सज–धज कर नृत्य गीतों के माध्यम से अपनी खुशी जाहिर करते हैं। यह समारोह इन जनजातियों के जीवन के लिये बहुत महत्वपूर्ण है। इस अवसर पर अविवाहित युवक–युवतियों को आपसी प्रेम–मिलन तथा प्रेम–चुनाव का अवसर प्राप्त होता है। एक–दूसरे को पसन्द करने के बाद लौटकर वे अपने विवाह की इच्छा को परिवार के सामने रखते हैं। इसके बाद इनका वैवाहिक सम्बन्ध तय हो जाता है। इस अवसर पर भिलाले स्त्री–पुरुष मिलकर नृत्य गान करते हैं।

प्रश्न–(6) बैगा जनजाति पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।

उत्तर– बैगा जनजाति के लोग मध्य प्रदेश के मण्डला, शहडोल तथा बालाघाट जिलों में पाये जाते हैं। मण्डला क्षेत्र में बैगाओं का एक छोटा समूह भूरिया बैगा कहलाता है। ये लोग हिन्दू देवताओं की पूजा करते हैं। बैगा लोग सिर के बाल नहीं कटवाते बल्कि उन बालों को इकट्ठा करकें चोटी बना ली जाती है। ये लोग वर्ष भर में कुछ विशेष अवसरों पर ही स्नान करते हैं। बैगा युवतियाँ अपनी शारीरिक बनावट की दृष्टि से आकर्षक होती हैं।

बैगा लोग घने जंगलों में रहते हैं। इनके गाँव छोटे होते हैं। इनके घर खपरैल के स्थान पर घास-फूस के बने होते हैं। प्रत्येक गाँव में बाहर से आने वाले लोगों के ठहराने के लिये एक अलग स्थान बना होता है जिसे चट्टी कहा जाता है। बैगा लोग माँस, मोटे अनाज तथा कन्दमूल फलों का सेवन करते हैं। इसके अलावा ये लोग शिकार द्वारा जंगल के पशुओं का माँस प्राप्त करते हैं। अनाजों में लोग ज्वार-बाजरा, मक्का आदि का प्रयोग करते हैं। ये लोग बहुत ही कम वस्त्र पहनते हैं। कमर में ये लोग धोती की एक छोटी-सी लंगोटी लगाते हैं तथा इनकी स्त्रियाँ छोटी धोती पहनती हैं जिसका एक छोर सीने के ऊपर डाल लिया जाता है। बैगा लोगों की स्त्रियाँ आभूषणों की बहुत अधिक शौकीन होती हैं। ये गहने किसी सस्ती धातु के बने होते हैं।

घने जंगलों में रहने के कारण ये लोग अपनी रक्षा एवं शिकार के लिये धनुष-बाण का प्रयोग करते हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण रूप से बैगा जन-जातियों के लोगों का जीवन बहुत ही सादगीपूर्ण होता है। ये लोग खेती करके, मजदूरी करके और वनों से वस्तुयें एकत्रित करके जो कुछ कमाते हैं उसका आधे से अधिक भाग उनके भोजन पर खर्च हो जाता है। बैगा लोगों को शादी के अवसर पर या घर में किसी के मर जाने पर इन्हें कर्जा लेने के लिये मजबूर होना पड़ता है। इस प्रकार साहूकारों के द्वारा इनका बहुत अधिक शोषण किया जाता है। इनकी आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिये सरकार मुफ्त बीज, जमीन तथा इनको पशु देने की योजना को क्रियान्वित कर रही है। इसका प्रमुख उद्देश्य इनकी गरीबी को समाप्त करना है।

प्रश्न-(7) भारिया जनजाति का सामान्य परिचय दीजिए।

उत्तर- सामान्य परिचय- भार ढोने के कारण इनका नाम भारिया पड़ा। भारिया जनजाति के लोग गोडों को अपना बड़ा भाई (अग्रज) तथा राजा कर्णदेव को अपना पूर्वज मानते हैं। भारिया जनजाति मुख्य रूप से छिंदवाड़ा जिले की तामिया तहसील के पातालकोट क्षेत्र में पायी जाती है। इसके अलावा यह जबलपुर में भी पाए जाते हैं। यह मध्यप्रदेश की विशेष पिछड़ी जनजाति में शामिल हैं। पातालकोट छिंदवाड़ा में 90 प्रतिशत आबादी भारिया जनजाति है। इनकी उपजातियाँ भूमिया तथा भुईधर हैं।

सामाजिक जीवन- इनका समाज टोटम पर आधारित है। भारियाओं में संगोत्रीय विवाह वर्जित हैं। भारिया जनजाति साल के पेड़ की जड़ों की पूजा करते हैं, जबकि गोंड जनजाति द्वारा पेड़ के ऊपरी भाग की पूजा की जाती है। इनके पर्व बिदरी पूजा, नवाखानी, दिवाली जात्रा हैं। इनके नृत्य भड़म, सैतम, करमा, सैला, अहिराई आदि हैं। भारियों के देवता दूल्हादेव, बूढ़ादेव, बड़ा देव, ठाकुरदेव व नारायण देव हैं।

❑❑❑

वस्तुनिष्ठ प्रश्नोत्तर

इकाई-1

(1) **निम्नांकित में से कौन-सी जनजाति मध्यप्रदेश में पाई जाती है?**

(अ) गारो (ब) संथाल

(स) भील (द) खासी।

उत्तर- **(स) भील।**

(2) **जनजाति की विशेषता है-**

(अ) सामान्य भू-भाग (ब) अन्तर्विवाह

(स) सामान्य संस्कृति (द) उपरोक्त सभी।

उत्तर- **(द) उपरोक्त सभी।**

(3) **सामाजिक व्यवस्था की सबसे प्रारम्भिक अवस्था है-**

(अ) कृषक समाज (ब) नगरीय समाज

(स) आदिम समाज (द) इनमें से कोई भी नहीं।

उत्तर- **(स) आदिम समाज।**

(4) **जनजाति एक क्षेत्रीय समूह है, यह किसने कहा था?**

(अ) पिडिंग्टन ने (ब) मरडॉक ने

(स) मजूमदार ने (द) गिलिन ने।

उत्तर- **(स) मजूमदार ने।**

(5) **जनजातियों को कब अनुसूचित किया गया?**

(अ) 1910 में (ब) 1947 में

(स) 1942 में (द) 1950 में।

उत्तर- **(द) 1950 मे।**

(6) **भारतीय समाज की कितनी जनजातियाँ अनुसूचित हैं?**

(अ) 212 (ब) 210

(स) 222 (द) 232

उत्तर- **(अ) 212**

(7) **डॉ. बी.एस. गुहा ने भारतीय जनजातियों को कितने भौगोलिक मण्डलों में बाँटा है?**

(अ) एक में (ब) दो में

(स) तीन में (द) चार में।

उत्तर- **(स) तीन में।**

(8) गोंड और बैगा जनजाति किस क्षेत्र में रखी गई हैं?
(अ) उत्तर-पूर्वी क्षेत्र में (ब) मध्य क्षेत्र में
(स) दक्षिण क्षेत्र में (द) किसी में नहीं।
उत्तर- (ब) मध्य क्षेत्र में।

(9) प्रो. योगेश अटल ने जनजातियों का वर्गीकरण किस आधार पर किया था?
(अ) भौगोलिक (ब) सांस्कृतिक
(स) प्रजातीय (द) जनसंख्यात्मक।
उत्तर- (अ) भौगोलिक।

(10) जे. एच. हट्टन ने जनजातियों के आर्थिक वर्गीकरण के कितने प्रकार बताये हैं?
(अ) एक (ब) दो
(स) तीन (द) चार।
उत्तर- (स) तीन।

(11) जनजाति की विशेषता है-
(अ) सामान्य भू-भाग (ब) अन्तर्विवाह
(स) सामान्य संस्कृति (द) उपरोक्त सभी।
उत्तर- (द) उपरोक्त सभी।

(12) डॉ. बी.एस. गुहा ने भारतीय जनजातियों को कितने भौगोलिक मण्डलों में बाँटा है?
(अ) एक में (ब) दो में
(स) तीन में (द) चार में।
उत्तर- (स) तीन में।

(13) प्रो. योगेश अटल ने जनजातियों का वर्गीकरण किस आधार पर किया था?
(अ) भौगोलिक (ब) सांस्कृतिक
(स) प्रजातीय (द) जनसंख्यात्मक।
उत्तर- (अ) भौगोलिक।

(14) जे. एच. हट्टन ने जनजातियों के आर्थिक वर्गीकरण के कितने प्रकार बताये हैं?
(अ) एक (ब) दो
(स) तीन (द) चार।
उत्तर- (स) तीन।

(15) वर्तमान में अनुसूचित जनजातियों की अनुसूची के अनुसार कितनी संख्या है?
(अ) 440 (ब) 540
(स) 560 (द) 580
उत्तर- (स) 560

(16) जनजातियों का सांस्कृतिक वर्गीकरण किसने किया है?
(अ) मर्टन ने (ब) ऐल्विन ने
(स) मैकाइवर ने (द) पारसन्स ने।
उत्तर- (ब) ऐल्विन ने।

(17) किसने जनजातियों का प्रजातीय वर्गीकरण प्रस्तुत किया है?
(अ) एल्विन ने (ब) डॉ. गुहा ने
(स) मैकाइवर ने (द) पारसन्स ने।
उत्तर- (ब) डॉ. गुहा ने।

(18) 'भारत में जनजाति पिछड़े हुए हिन्दू हैं।' यह परिभाषा किसकी है?
(अ) हॉबेल (ब) बोस
(स) गिलिन तथा गिलिन (द) घुरिये।
उत्तर- (द) घुरिये।

(19) जनजातियों को भारतीय समाज में आत्मसात करने का सुझाव किसने दिया?
(अ) मजूमदार ने (ब) अक्षय देसाई ने
(स) पारसन्स ने (द) बोगार्डस ने।
उत्तर- (ब) अक्षय देसाई ने।

(20) जनजातियों के पुनरुत्थान का सुझाव किसने दिया?
(अ) अक्षय देसाई ने (ब) रॉय तथा एल्विन ने
(स) बोगार्डस ने (द) मजूमदार ने।
उत्तर- (ब) रॉय तथा एल्विन ने।

इकाई-2

(1) निम्नलिखित में से कौन-सी विवाह सम्बन्धी नातेदारी नहीं है?
(अ) सास-बहू (ब) श्वसुर-दामाद
(स) पति-पत्नी (द) माँ-बेटा।
उत्तर- (द) माँ-बेटा।

(2) मालाबार के नायरों में.....समाज पाया जाता है।
(अ) पितृवंशीय (ब) मातृवंशीय
(स) एकाकी (द) संयुक्त।
उत्तर- (ब) मातृवंशीय।

(3) निम्नलिखित में से कौन-सा तरीका जनजातियों में जीवन-साथी चुनने का नहीं है?
(अ) परिवीक्षा विवाह (ब) परीक्षा विवाह

(स) कोर्ट मैरिज (द) विनिमय विवाह।

उत्तर– (स) कोर्ट मैरिज।

(4) जनजातीय समाज में पीढ़ियों के सदस्यों का समूह कहलाता है–

(अ) गोत्र (ब) नातेदारी

(स) कुल समूह (द) प्रतीक।

उत्तर– (स) कुल समूह।

(5) नायर जनजाति निवास करती है–

(अ) असम में (ब) मध्य प्रदेश में

(स) महाराष्ट्र में (द) मालाबार में।

उत्तर– (द) मालाबार में।

(6) कौनसी जनजाति मातृवंशीय है?

(अ) गोंड (ब) भील

(स) कोरकू (द) गारो।

उत्तर– (द) गारो।

(7) 'धनुषबाण समारोह' किस जनजाति में होता है?

(अ) खासी में (ब) गारो में

(स) भील में (द) टोडा में।

उत्तर– (द) टोडा में।

(8) विनिमय विवाह प्रथा का प्रचलन किस जनजाति समाज में है?

(अ) खासी (ब) गोंड

(स) बैगा (द) कमार।

उत्तर– (अ) खासी।

(9) भ्राता बहुपति विवाह प्रथा पाई जाती है–

(अ) बैगा में (ब) नागा में

(स) संथाल में (द) टोडा में।

उत्तर– (द) टोडा में।

(10) परिवार एक संस्था है–

(अ) आर्थिक (ब) सामाजिक

(स) राजनैतिक (द) सांस्कृतिक।

उत्तर– (ब) सामाजिक।

(11) 'नातेदारी एक छड़ है जिसके सहारे प्रत्येक व्यक्ति जीवनभर रहता है।' यह कथन किसका है?

(अ) रेमण्ड फर्थ ने (ब) चार्ल्स विनिक ने

(स) ब्राउन ने (द) पारसंस ने।

उत्तर– (अ) रेमण्ड फर्थ ने।

(12) प्राथमिक नातेदारी में कितने प्रकार के नातेदार होते हैं?

(अ) 10 (ब) 6

(स) 8 (द) 9

उत्तर– (स) 8

(13) 'सास–बहु' सम्बन्ध हैं–

(अ) परिहास (ब) पितृश्वश्रेय

(स) मातुलेय (द) परिहार।

उत्तर– (द) परिहार।

इकाई 3

(1) जनजातियों में ऋणग्रस्तता का निम्नलिखित में से कौन–सा कारण है?

(अ) आदिम कृषि

(ब) भूमि पर परम्परागत अधिकार की समाप्ति

(स) साहूकारों द्वारा शोषण (द) उपरोक्त सभी।

उत्तर– (द) उपरोक्त सभी।

(2) मुंडा लोग.....को भगवान का अवतार मानते थे।

(अ) बिरसा (ब) आराँव

(स) बेली (द) श्रीकृष्ण।

उत्तर– (अ) बिरसा।

(3) एक निश्चित भू–भाग पर निवास करती है–

(अ) जाति (ब) धर्म

(स) जनजाति (द) इनमें से कोई नहीं।

उत्तर– (स) जनजाति।

(4) गुटबन्दी का आधार निम्न में से है–

(अ) जाति (ब) राजनीति

(स) धर्म (द) उपरोक्त सभी।

उत्तर– (द) उपरोक्त सभी।

(5) कृषक समाज की अवधारणा सर्वप्रथम किसने प्रस्तुत की थी?
(अ) रॉबर्ट रैडफील्ड ने (ब) स्पेन्सर ने
(स) दुर्खीम ने (द) फ्रेजर ने।
उत्तर– (अ) रॉबर्ट रैडफील्ड ने।

(6) 'लघु समुदाय' पुस्तक किसने लिखी थी?
(अ) शानीन ने (ब)वेबस्टर्ड ने
(स) रॉबर्ट रैडफील्ड ने (द) स्पेन्सर ने।
उत्तर– (स) रॉबर्ट रैडफील्ड ने।

(7) कौन–सी जनजाति विकसित जनजाति है?
(अ) बैगा (ब) भारिया
(स) कमार (द) मीणा।
उत्तर– (द) मीणा।

(8) मध्य प्रदेश की कौन–सी जनजाति का निवास घने वन होते हैं?
(अ) गोंड का (ब) बैगा का
(स) भारिया का (द) कोरकू का।
उत्तर– (ब) बैगा।

(9) इग्लू में कौन–सी जनजाति निवास करती है?
(अ) बैगा (ब) पिग्मी
(स) टुन्ड्रा (द) जारवा।
उत्तर– (स) टुन्ड्रा।

(10) प्रदेश की कौन–सी जनजाति कत्था उद्योग में संलग्न है?
(अ) भारतीय (ब) गोंड
(स) सहरिया (द) खैरवार।
उत्तर– (द) खैरवार।

(11) पंचायत का कार्यकाल होता है–
(अ) 1 वर्ष (ब) 2 वर्ष
(स) 3 वर्ष (द) 5 वर्ष।
उत्तर– (द) 5 वर्ष।

(12) पंचपरमेश्वर में किस व्यवस्था का उल्लेख किया गया है?
(अ) नगर निगम (ब) विधान सभा
(स) पंचायती राज (द) संसद।
उत्तर– (स) पंचायती राज।

(13) स्वतन्त्र भारत में ग्राम पंचायत को प्रारम्भ करने का श्रेय किसे जाता है?
(अ) विनोबा भावे (ब) सरदार पटेल
(स) महात्मा गाँधी (द) पंडित जवाहर लाल नेहरू।
उत्तर– (द) पंडित जवाहर लाल नेहरू।

(14) स्थानीय शासन पर किसका पूर्ण नियंत्रण रहता है?
(अ) केन्द्र सरकार का (ब) राज्य सरकार का
(स) नगर निगम का (द) पंचायत का।
उत्तर– (ब) राज्य सरकार का।

(15) ग्रास ने जनजातीय अर्थव्यवस्था को कितने भागों में विभक्त किया है?
(अ) दो (ब) तीन
(स) चार (द) पाँच।
उत्तर– (द) पाँच।

इकाई–4

(1) जनजातियों की प्रमुख समस्या है–
(अ) निर्धनता (ब) ऋणग्रस्तता
(स) भूमि पृथक्करण (द) उपरोक्त सभी।
उत्तर– (द) उपरोक्त सभी।

(2) 'चिपको आन्दोलन' भारत के किस राज्य में हुआ था?
(अ) बिहार में (ब) असम में
(स) मध्य प्रदेश में (द) उत्तरांचल में।
उत्तर– (द) उत्तरांचल में।

(3) 'लगत–भगत' किस जनजातीय समाज के समूह हैं?
(अ) गोंड (ब) भील
(स) नागा (द) सहरिया।
उत्तर– (ब) भील।

(4) सिदो और कान्हू ने कौन–सा जनजातीय आन्दोलन किया था?
(अ) संथाल (ब) चिपको
(स) सतनामी (द) ताना भगत।
उत्तर– (अ) संथाल।

(5) प्रवास होता है–
(अ) निश्चित उद्देश्य से (ब) निरुद्देश्य
(स) सामान्य उद्देश्य से (द) इनमें से कोई नहीं।

उत्तर– (अ) निश्चित उद्देश्य से।

(6) भारत में ग्रामीण प्रवास का कारण है–

(अ) जनसंख्या (ब) निर्धनता

(स) शोषण (द) उपर्युक्त सभी।

उत्तर– (द) उपर्युक्त सभी।

(7) ताना भगत आन्दोलन किस प्रकार का आन्दोलन था?

(अ) राजनैतिक (ब) पर्यावरण

(स) भाषायी (द) धार्मिक।

उत्तर– (द) धार्मिक।

(8) भोटिया जनजाति किस आन्दोलन के लिये जानी जाती है?

(अ) चिपको (ब) नागा

(स) मिजो (द) इनमें से कोई नहीं।

उत्तर– (अ) चिपको।

(9) 'जनजातीय विकास खण्ड' किस योजना में स्थापित किये गये हैं?

(अ) प्रथम (ब) द्वितीय

(स) तृतीय (द) चतुर्थ।

उत्तर– (स) तृतीय।

(10) मध्य प्रदेश में जनजातियों के कितने समूह निवास कर रहे हैं?

(अ) 26 (ब) 36

(स) 40 (द) 46

उत्तर– (द) 46

(11) मध्य प्रदेश की कितनी जनजातियाँ विशेष पिछड़ी जनजातियाँ हैं?

(अ) 6 (ब) 7

(स) 5 (द) 3

उत्तर– (द) 3

(12) जनजातियों में ऋणग्रस्तता का निम्नलिखित में से कौन–सा कारण है?

(अ) आदिम कृषि (ब) भूमि पर परम्परागत अधिकार की समाप्ति

(स) साहूकारों द्वारा शोषण (द) उपरोक्त सभी।

उत्तर– (द) उपरोक्त सभी।

(13) जनजातियों के लिए लोकसभा में कितनी सीटें आरक्षित हैं?

(अ) 42 (ब) 45

(स) 47 (द) 50

उत्तर– (ब) 45

(14) जनजातियों के लिए विधान मंडलों में कितनी सीटें आरक्षित हैं?

(अ) 440 (ब) 500

(स) 557 (द) 572

उत्तर– (स) 557

(15) किस जनजाति में भगत आन्दोलन चला था?

(अ) भील (ब) मुंडा

(स) गरासिया (द) मीणा।

उत्तर– (अ) भील।

इकाई-5

(1) झाबुआ (मध्यप्रदेश) में पाई जाने वाली जनजाति है–

(अ) गोंड (ब) भील व भीलाला

(स) कोरकू (द) भारिया।

उत्तर– (ब) भील व भीलाला।

(2) मध्यप्रदेश की गोंड जनजाति में युवागृह को कहते हैं–

(अ) भ्रातृ दल (ब) निवास

(स) गोतुल (द) मोटियारी।

उत्तर– (स) गोतुल।

(3) निम्नांकित में से कौन–सी जनजाति मध्यप्रदेश में पाई जाती है?

(अ) गारो (ब) संथाल

(स) भील (द) खासी।

उत्तर– (स) भील।

(4) मध्यप्रदेश की गोंड जनजाति में युवागृह को कहते हैं–

(अ) भ्रातृ दल (ब) निवास

(स) घोटुल (द) मोटियारी।

उत्तर– (स) घोटुल।

(5) मध्य प्रदेश की कितने प्रतिशत जनसंख्या जनजातीय है?

(अ) 23 (ब) 13

(स) 33 (द) 53

उत्तर– (अ) 23

(6) मध्य प्रदेश में जनजातीय समाज को कितने समूहों में रखा गया है?
(अ) 26 (ब) 36
(स) 46 (द) 56
उत्तर– (स) 46

(7) कौन–सी जनजाति अपनी उत्पत्ति भूमि से मानते हैं?
(अ) गोंड (ब) भील
(स) कोल (द) सौर।
उत्तर– (स) कोल।

(8) गोंड और बैगा जनजाति किस क्षेत्र में रखी गई हैं?
(अ) उत्तर–पूर्वी क्षेत्र में (ब) मध्य क्षेत्र में
(स) दक्षिण क्षेत्र में (द) किसी में नहीं।
उत्तर– (ब) मध्य क्षेत्र में।

(9) गोटुल गोंड की किस उपजाति में होता है?
(अ) धोली गोंड (ब) राज गोंड
(स) मुरिया गोंड (द) मारी गोंड।
उत्तर– (स) मुरिया गोंड।

(10) किस जनजाति में वधू मूल्य का प्रचलन है?
(अ) गोंड (ब) बैगा
(स) कोरकू (द) मांझी।
उत्तर– (स) कोरकू।

(11) किस जनजाति की उत्पत्ति 'मनु' से हुई है?
(अ) गोंड (ब) भील
(स) कोरकू (द) सौर।
उत्तर– (ब) भील।

(12) किस जनजाति में धनुष बाण प्रतिष्ठा का सूचक है?
(अ) भील (ब) गोंड
(स) अगरिया (द) सौर
उत्तर– (अ) भील।

(13) जमुनिया किस जनजाति का गोत्र है?
(अ) गोंड (ब) भील
(स) कोरकू (द) भिलाला।
उत्तर– (ब) भील।

(14) मध्यप्रदेश की सबसे बड़ी जनजाति कौनसी है?
(अ) भील (ब) गोंड
(स) सहरिया (द) कोरकू।
उत्तर– (अ) भील।

(15) गोंड जनजाति प्रमुखतः किस प्रदेश में पाई जाती है?
(अ) राजस्थान (ब) मध्यप्रदेश
(स) झारखंड (द) बिहार।
उत्तर– (ब) मध्यप्रदेश।

❑❑❑

❑ ध्यान दें: सभी लघुउत्तरीय प्रश्नों के उत्तर दीर्घउत्तरीय प्रश्नोत्तरों में समाहित हैं। इस हेतु आप लघुउत्तरीय प्रश्न में जितना पूछा जावे, दीर्घउत्तरीय प्रश्न के उत्तर का उतना ही भाग लिखें।